राजस्थानी साहित्य का इतिहास-विक्रम संवत् 1650-1800-भाग प्रथम -

मध्यकालीन चारण-काव्य

कॉपी राइट :
डॉ० जगमोहनसिंह परिहार

प्रथम संस्करण 1979

मूल्य : पचास रुपये

प्राप्ति स्थान :
मयंक प्रकाशन
528-ब, रोड नं० 8-बी, सरदारपुरा,
जोधपुर (राजस्थान)

मुद्रक :
पी० जे० वीरेनसन्स
सरदारपुरा,
जोधपुर (राजस्थान)

मायड़ भासा राजस्थानी रा राजहंस
श्री कैलाशदानजी ऊजल नै घणै मानसूं
अरपण यो ग्रन्थ यां दूहां रै साथ–

ऊजळ वाणी आपरी माखण मिसरी वास ।
अरपण पोथी आपनै करणीसुत कैलास ।।
आखर परखण ऊजला राजहंस राजंद ।
अरपण थांनै ओळखो गीत दूहा र छंद ।।

आपरो हीज
जगमोहनसिंह परिहार

भूमिका---

डॉ० जगमोहन सिंह परिहार द्वारा प्रस्तुत शोध प्रबन्ध 'मध्यकालीन चारण-काव्य' वस्तुतः मध्ययुगीन इतिहास, साहित्य और संस्कृति का बोलता प्रारूप है। गांव-गाव अलख जगाकर एकत्र किया गया बिखरे ज्ञात-अज्ञात साहित्य का यह महत्त्वपूर्ण संकलन उनके तन्मय हृदयोल्लास एवं साहित्य-प्रेम का मूर्त रूप है। शहरी जीवन की कृत्रिम हलचल तथा कोलाहल से दूर, प्रकृति के निस्सीम साम्राज्य में वसे मध्ययुगीन साधनास्थलों और साहित्य साधकों से आत्मसात, अकाट्य प्रमाणों के साथ प्रस्तुत यह समीक्षात्मक विवेचन साहित्य, समाज तथा इतिहास में रुचि रखने वाले लोगों के सम्मुख एक नई दिशा, नई दृष्टि की सृष्टि का हेतु सिद्ध होगा। वि० सं० १६५० से १८०० के चारण कवियों तथा उनकी कृतियों के ऐतिहासिक एवं साहित्यिक विवेचन द्वारा शोधकर्ता ने राजस्थानी साहित्य, संस्कृति और इतिहास के क्षितिज को विस्तीर्णता प्रदान की है।

राजस्थानी भाषा और साहित्य के इस महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक विवेचनात्मक ग्रन्थ में लेखक ने मध्ययुग के आलोच्य कालखण्ड को सजीव-साकार रूप में प्रस्तुत किया है। लेखक द्वारा अन्वेषित विस्मृति के सागर में डूबे गीत, छन्द, सम्बन्धित प्रणेताओं के जीवनवृत्त और अद्यावधि प्रकाशित तत्सम्बन्धी विवरणों का तुलनात्मक मूल्यांकन निस्सन्देह एक कीर्तिमान माना जा सकता है, जो मध्ययुग के अव्यवस्थित साहित्य को सूत्रबद्ध करने की कमी को पूरा करता है।

राजस्थान की वसुन्धरा का प्रत्येक रजकण अपने आप में एक महाकाव्य है। धरती के रजकणों में रम कर गुमनामों को, जिन्हें अहसान-फरामोश समाज भूल गया, इस शोध-कार्य के माध्यम से प्रकाश में लाया गया है। राजहंस की भांति विद्वान् लेखक ने नीर-क्षीर का निदान किया है, इसके लिए कौम गर्व करे तो क्या विस्मय ?

जस आखर लिखे न जडै, वा धरती नर जाय।
संत सती अर सूरमा, ऐ ओझल हो जाय॥ दे. को.

मध्यकालीन चारण काव्य में विवेचित विभिन्न सन्दर्भ अपने आप में अलग-अलग समय और स्थितियों से प्रस्फुटित इतिहास का प्रकट प्रमाण

करने में सक्षम हैं । डॉ० परिहार के भगीरथ प्रयत्नों का संकलन 'मध्यकालीन चारण काव्य' राजस्थानी भाषा, साहित्य, इतिहास तथा संस्कृति में अभिरुचि रखने वाले प्रत्येक पाठक के लिए महत्त्वपूर्ण साहित्यिक धरोहर सिद्ध होगा। देश, काल और तत्कालीन परिस्थितियों के परिवेश में हुए साहित्य-सर्जन से जिनको दृष्टि अपरिचित नहीं है उन्हे यह प्रयास भाएगा, ऐसा मैं मानकर चलता हूं । राजस्थानी साहित्य, संस्कृति एवं संगीत के सन्दर्भ में किए गये अन्वेपणों में यह प्रयत्न एक आंचलिक धरातल पर खड़ा है जिसमें राजस्थानी माटी की महक विद्यमान है । अपनी क्षणभंगुर सफलताओं के लिये सफेद का स्याह एवं स्याह का सफेद कर साहित्य-मठाधीश बन, समाज का दोहन करने वाले कथित व्यक्तित्त्वों से दूर, यह कृत्य राजस्थानी साहित्य के अन्वेपण और साहित्य सेवा का प्रशंसनीय सफल प्रयास है । मध्यकालीन भक्ति, वीर और शृंगार काव्य के अछूते काव्य-प्रसंगों का यह संग्रह साहित्यान्वेपियों के लिये निर्देशक सिद्धान्तों की पृष्ठभूमि प्रतिष्ठापित करने वाला है । यूं तो यह प्रयास स्वयं में एक दर्पण है परन्तु आद्योपान्त पढ़ने के बाद मेरी प्रतिक्रिया संक्षप में इस प्रकार है —

आचार के नियम युगातीत नहीं होते । आज के प्रतिक्षण बदलते परिवेश में यह प्रश्न स्वाभाविक है कि अतीत के वे सामंतकालीन तथ्य किस सीमा तक मान्य हैं परन्तु मानवीय जीवन का नैतिक आकर्षण युग के परिवर्तन से प्रभावित अवश्य होता है, बदलता नहीं । देशकाल और परिस्थितियों से फलीभूत काव्यानुभूतियां, स्थितियों के साथ निर्मित इतिहास को अवलम्बन प्रदान करती है, आधार देती है । और उसी आधार पर टिका हुआ है युग-युगों का इतिहास । लेखनी और तलवार के धनी राजस्थानी कवीश्वरों ने कालचक्र की गति को अपने सुर्ख हस्ताक्षरों से गौरवान्वित किया है और आज भी समय – विशेष, परिस्थिति – विशेष में शूरवीरों द्वारा जीवन-आदर्शों की रक्षार्थ किया गया अनूठा प्राणोत्सर्ग हमारे लिए प्रेरणापुंज बना हुआ है । राजस्थानी कवियों ने विविध प्रसंगों के परिपेक्ष्य में जिन दोहों, छन्दों, गीतों तथा अन्य रचनाओं का प्रणयन किया उनमें तत्कालीन इतिहास बोलता दृष्टिगत होता है । युग-युगों से जनजिव्हा पर आसीन पीढ़ी दर पीढ़ी विरासत में मिले ये दोहे, सोरठे और गीत हमारे गौरवशाली अतीत के प्रतिबिम्ब हैं । १७ वीं शताब्दी से १८ वीं शताब्दी तक के आलोच्य प्रसंगों का अवलोकन करें तो उनमें तत्कालीन इतिहास की जीवन्त झांकी दिखाई देती है । इस शोध प्रबन्ध को मैं पढ़ता चला गया । पढ़ते – पढ़ते अनायास १८ वीं शताब्दी की ढलान का आख्यान सहज याद आ गया, प्रसंगवश जिसके उल्लेख के लोभ का संवरण नहीं कर पा रहा हूं । जोधपुर के स्वनामधन्य महाराजा मानसिंह वि० सं० १८६० मार्गशीर्ष

कृष्णा ७ हिजरी सन १२१८ ता० २१ अथान ईस्वी सन् १८०३, ७ नवम्बर को इतिहास प्रसिद्ध मेहरानगढ़ में दाखिल हुए और हुआ उनका राज्याभिषेक। महाराजा मान अपने युग के महान् योगी, सिद्ध, वीर, दानी, कलाविद् एवं सशक्त कवि थे। उनके काव्य में वीर, शृंगार और भक्ति रस की त्रिवेणी प्रवाहित हुई है।

कुछ विद्वानों का अनुमान है कि राजस्थानी साहित्य मात्र वीररस से अभिभूत है, निस्सन्देह उन्होंने विविध रसों में उपलब्ध विपुल परिमाण के साहित्य का रसास्वादन नहीं किया है। रसीलेराज के संगीतात्मक पदों, गीतों, छन्दों, सोरठों और अन्य शृंगार रसात्मक काव्यकृतियों में जितना माधुर्य, जितना आकर्षण है, उसकी सानी अन्य भाषाओं के काव्य में ढूंढ पाना कठिन है। महाराजा मान जैसे रसिक और भावुक नरेश अपने स्वामिभक्त राजपूत कीरीतसिंह सोढ़ा के अद्वितीय शौर्य एवं त्याग से प्रभावित हुए। जयपुर की फौज को फेरने वाले नरपुंगव कीरतसिंह सोढा की छतरी, आज भी उनके शौर्यमय त्याग की साक्षी है। महाराजा मान इस सत्य से अनभिज्ञ नहीं थे कि आन, मान और मर्यादा के लिए हुए बलिदानों को यदि कौम सम्मान नहीं देती, उनके प्रति श्रद्धानत नहीं होती, उन्हें सगर्व याद नहीं करती, वह कौम अधिक दिन तक जीवित नहीं रह सकती। महाराजा मान स्वयं में एक काव्य थे। उनका व्यक्तित्त्व और कृतित्त्व तो स्वयं में विस्तृत सांस्कृतिक, सामाजिक और साहित्यिक इतिहास था ही। साथ हो विविध प्रसंगों पर उनके मुख से मुखरित दोहे भी, उस युग की मान्यताओं, जीवन-आदर्शों, सोचने, समझने तथा चलने के तौर तरीकों का आभास करवाते हैं। जसोल के रावल मालव के प्रधान कीरतसिंह सोढ़ा के वीरोचित बलिदान की प्रतीक छतरी को देखकर, अनायास यह दोहा याद आ जाता है जो अठारहवीं शताब्दि में निर्मित होने वाले राजस्थानी काव्य की सहजता, सरसता और उसमें निहित काव्य गुणों का दिग्दर्शन करवाने से साथ-साथ कवि के व्यक्तित्व की गौरव-गरिमा पर भी प्रकाश डालता है। महाराजा मान द्वारा कीरतसिंह के शौर्यमय आत्मोत्सर्ग के प्रति किया गया कृतज्ञता-प्रकाशन कितना हृदयग्राही है —

तन भड़ तेगां तीख, पाड़ घरा मड़ पोढ़ियो।
कीरतो नंग कोडीक, जड़ियो गढ़ जोधाण रै॥

प्रस्तुत शोध-प्रबन्ध में इतिहास और साहित्य की गंगा-जमुना साथ-साथ प्रवाहित हुई है। ऐसे स्थलों पर जहां नूतन खोज की उद्भावना का आभास होता है, और अकाट्य प्रमाणों द्वारा लेखक ने नवीन प्रतिमानों

की स्थापना की है, उन विवरणों, पृष्ठों पर मन रम जाता है। महाकवि माघ की जन्मस्थली भीनमाल के राव जग्गा का उल्लेख निस्संदेह साहित्य-जगत् के लिए एक नवीन उपलब्धि है। ऐसे अज्ञात व्यक्तित्वों तथा कृतित्वों का अनुसंधान ही अन्वेषक की पैनी सूझ का प्रतीक माना जाता है और यहां पर यह लिखना युक्तियुक्त ही होगा कि डॉ० परिहार को यह प्रतिभा प्राप्त है।

महाराजा जसवन्तसिंह प्रथम के समय की घटना है। वे स्वयं भी उच्चकोटि के कवि थे। वक्त था शाहजहां का वि० सं० १७१५ वैशाख कृष्ण ८ हिजरी १०६८ ता० २२ रजब इस्वी सन् १६५८ त० २५ अप्रेल को, शाहजादा दराशिकोह की सलाह से बादशाह ने बीस हजार फौज के साथ महाराजा जसवन्तसिंह को विद्रोही शाहजादों-औरंगजेब और मुराद के विद्रोह को कुचलने के लिए भेजा। घमासान युद्ध के बाद जसवन्तसिंह के विश्वस्त साथी कासिमखां इत्यादि आलमगीर से जा मिले। जसवन्तसिंह की पराजय हुई। युद्ध-क्षेत्र से पराजय का कलंक लिए वे जोधपुर पहुंचे। रण से भागे पति का राजस्थानी वीरांगना स्वागत नहीं, तिरस्कार करती है। महारानी हाडी ने मेहरानगढ़ के द्वार बन्द कर दिये। पत्नी द्वारा अपने पति को दिये उपालम्भ का तत्कालीन कवि जग्गा राव द्वारा सुन्दर दिग्दर्शन करवाया गया है। भीनमाल निवासी जग्गा राव ने बड़े ही अनूठे ढंग से इन दोहों का सृजन कर अपनी स्वाभिमानी प्रवृत्ति का परिचय दिया है। कवि के वंशज स्वर्गीय राव जस्सा द्वारा उपलब्ध करवाए गये कवि जग्गा के दोहों में इतिहास बोलता नजर आता है, साथ ही राजस्थानी साहित्य को प्रशस्तिपरक बतलाने वाले आलोचकों के कथन भी इन दोहों द्वारा निर्मूल सिद्ध हो जाते हैं। ये दोहे कवि की सशक्त काव्य प्रतिभा के प्रतीक हैं और स्वयं में एक इतिहास हैं—

कुळ काळच ळागै जसा, भड़ रण सूं भागंत।
रण मांहि रजपूत ने, मरणो ही राचंत॥
धव घर आया भागने, मो उर बळगी आग।
जोधाणैं आया जसा, देवण कुळ नै दाग॥
रण में मरतो राठवड़, होतो हरख विसेख।
भड़ आयौ किम भागने, रणमाता रंगरेज॥

अपने खून से धरा को रक्तिम-आभा प्रदान करने वाला रंगरेज रणक्षेत्र से भाग आए तो शूरवीर पति के शहीद होने पर, अग्नि ज्वालाओं में नहाने की अभिलाषा संजोए बैठी शूरांगना की उमंगे आहत हो जाती है।

कर्तव्य की वेदी पर मर मिटने का ऐसा उल्लास राजस्थान की धरती के साहित्य और इतिहास के अतिरिक्त ढूंढ पाना असम्भव है। मनुष्य तो क्या? मूक पाषाण भी पराजित व्यक्ति को जीवित लौटते देख लज्जित और मलिन होने लगते हैं। शोध प्रबन्ध में कवि जग्गा द्वारा इसी भाव-भूमि पर प्रस्तुत एक दोहे का उद्धरण प्रस्तुत किया गया है, जो इस प्रकार है—

आज जोधगढ़ ऊमणो, परथक गढ़ री पोळ।
क्यूं नहं वाज्या काटरा, जाय मसांणा ढोल॥

कौन है जो ऐसे उपालंभ सुनकर चुल्लू भर पानी में डूब मरने को कटिबद्ध न हो। एक-एक पंक्ति इन्जेक्शन बन जाती है और व्यक्ति का सुप्त स्वाभिमान इन उपालंभों को सुनकर पुनः जागृत होने लगता है। जिस धरती के साहित्य की ऐसी दिशा, दृष्टि हो उस धरती का इतिहास, उस धरती का साहित्य मर नहीं सकता। मर-मर कर अमर होने वाला राजस्थान का साहित्य अमर है और युग-युगों तक अमर रहेगा क्योंकि यहां के साहित्य-दीपक की ज्योति तेल अथवा घृत से नहीं, रक्त से प्रज्वलित की गई है।

राव जस्सा की पुश्तैनी धरोहर जो हस्तलिखित उनके पूर्वजों द्वारा रचित काव्यग्रन्थों एवं वंशावलियों के रूप में थी जिनसे कवि जग्गा के स्वाभिमानी काव्य की जानकारी मिली। काश, डॉ जगमोहनसिंह परिहार उस समूची दुर्लभ संग्रहित धरोहर को बटोर पाते तो कितने ही प्रसार और अमर आख्यानों का प्रकाशन हो पाता। संस्कृत के महाकवि माघ की जन्मस्थली भीनमाल और उसके आस-पास का क्षेत्र आर्थिक दृष्टि से जर्जर परन्तु साहित्यिक उपलब्धियों की दृष्टि से अत्यन्त समृद्ध रहा है। आवश्यकता है एक सघन-आत्मीय सम्पर्क की, व्यापक अन्वेषणात्मक प्रवृत्ति की जिससे असीमित परिमाण में अज्ञात-स्थानों पर बिखरे साहित्य को प्रबुद्ध-पाठकों के सम्मुख लाया जा सके। मात्र सहज उपलब्ध प्रकाशित-अप्रकाशित सन्दर्भों की जोड़ बाकी अथवा गुणनफल अन्वेषण की इतिश्री नहीं करता। अपेक्षा इस बात की है कि उन घरों की खोज खबर लिया जाये, घर-घर अलख जगाने का सतत-प्रयास किया जाये जहां युग-युगों की संचित दुर्लभ ज्ञान-राशि दीमकों की शिकार हो रही है।

कौन कहता है कि मरुधरा उजाड़ रही है? काव्य, संगीत और कला के श्रद्धा संगम, इस मरु प्रदेश की गोद में पल्लवित काव्य में क्या नहीं है? भले ही वह काव्य वीररस का हो, भक्तिरस का हो अथवा शृंगार रस का क्यों न हो। सभी रसों के काव्य में पाठकों के हृदय को छूने की अद्भुत क्षमता विद्यमान है। प्रकृति से लोहा लेकर मानवीय क्षमताओं

के बल पर अपनी मनोदशा के अनुकूल बदलकर पहाड़ों को काटकर नदियां बहा देने, रेतीले टीबों को समतल बनाकर हरे-भरे खेत-खलिहानों में जीवन फूंक देने की अदम्य-इच्छा, घर-घर घी-दूध की नदियां बहाकर जन-जन के आंगन में सुख-समृद्धि की बारात का स्वागत करने की विह्वलता के दर्शन, हमें निष्ठा और राजप्रशस्ति से दूर, मां सरस्वती के प्रति तन्मय हृदयोल्लास में डूबे स्वांतः सुखाय रचनाकारों की रचनाओं में होते हैं। इन रचनाओं में तत्कालीन देशी रियासतों द्वारा मुगल सल्तनत के सम्मुख नत मस्तक और प्रजा की दोहरी बर्बादी इत्यादि का जीवन्त चित्रण देखा जा सकता है।

खेण गांव के चारण माला आसिया, सिरोही के राव अखैराज के समकालीन थे। अखैराज देवड़ा ने कवि के काव्यत्व से प्रभावित हो करोड़ पसाव और खांण गांव की जागीर नज़र की थी। माला आसिया का काव्य वि० सं० १५८६ में अपनी शीर्षस्थ अवस्था में था। निर्भीक कवि ने शासकों की शोषणवृत्ति पर कटाक्ष करते हुए लिखा है —

भरीयैं सावण भादवैं, नयणां बरसैं आज।
पथ हथ धरती आपरी, अख कठै अखैराज॥

सिरोही की धरती पर उस काल में व्याप्त अराजकता का साकार वर्णन इस दोहे में मिलता है। कवि माला आसिया के चाबुक सदृश शब्द-प्रहारों से अखैराज देवड़ा का सुप्त आत्मगौरव सहसा जाग उठा। उसने जालोर के पठानों को कैद कर, लोगों को भयमुक्त किया। कविवर माला आसिया के सपनों की सिरोही दृष्टव्य है—

जूझै माला झूंपड़ा, गावो जस रा गीत।
वेगी पाछी बावड़े, रणा मरण री रीत॥

झोपड़ों के जूझारु जीवन और उनकी निश्चिन्तता की परिकल्पना उस युग में कर पाना वस्तुतः कविहृदय में बसी दूरदर्शिता का प्रमाण है। राजस्थानी काव्यकार आने वाले युगों के पदचिन्हों को पहचानने में असमर्थ नहीं थे। माला आसिया के दोहे-सोरठे सिरोही की धरती की महत्त्वपूर्ण उपलब्धियां हैं। इन दोहों, सोरठों में युगीन इतिहास के सजीव संकेत मिलते हैं —

व्याळू बातांराह अकरम किम जीवे अठै।
हिलता हाथांराह दीपै करतब देवड़ा॥

बातों से कब पेट भरता है। बिना श्रम साधना के, हाथ पर हाथ

रखकर बैठे रहने से क्या मिलता है? अपने हाथों से किये कार्यों से ही यश और सफलता मिलती है। कर्मक्षेत्र में कूद पड़ने की प्रेरणा यदि [illegible] देवड़ा को नहीं मिलती तो शायद मुगल पठानों के क्रूर पंजों में फंसे सिरोहीवासी कराहते रहते।

राजस्थानी साहित्य का इतिहास बतलाता है कि तत्कालीन कर्मवीरों के चरण जिस धरती पर पड़ते वहां नये आख्यानों का जन्म होने लगता। डॉ० परिहार का यह यत्न ऐसे तथ्यों से सुवासित है—

रतन वसै धर झूंपड़ाँ, नग मुकुट जड़ जाय।
जसरी नदियाँ जगत में, आखरियां वह जाय॥

सत्य ही तो कहा गया है, पौरुष, शौर्य, त्याग और तपस्या का प्रादुर्भाव झोपड़ों से होता है। कठिनाईयों, दुःखों के इतिहास से ही सृजन का सूत्रपात होता है। मुश्किलों से जीवनपर्यन्त टकराते रहकर भी जो प्रलोभनों से समझौता नहीं करते, ऐसे कवियों की रचनाओं में ही साहित्य तथा इतिहास का सामंजस्य देखा जा सकता है। अपनी निर्भीकता से जो प्रत्येक अमानवीय कर्म की निन्दा करते हैं, ऐसे कवियों का काव्य ही अन्धकार में प्रकाश बनकर पथ-विस्मृत लोगों को राह दिखाता है। सिरोही की काव्य-रश्मियों की बानगी के बाद मैं आपको पुनः मरुधरा की ओर ले चलता हूं।

इतिहास-प्रसिद्ध महाराजा अजीतसिंह की उन्हीं के पुत्र बखतसिंह द्वारा हत्या की गई थी। राजनैतिक दृष्टि से इस कृत्य का अपना कुछ भी मूल्य हो पर नैतिक मूल्यविहीन राजनीति की, इस धरा के साहित्यकारों ने कभी वन्दना नहीं की। राजस्थानी साहित्यकारों ने अपने साहित्य में नैतिक-आदर्शों का समर्थन किया है भले ही वे साधारण से साधारण व्यक्ति के व्यक्तित्व में ही क्यों न रहे हों। अपने क्षण भंगुर स्वार्थों के लिए यहां के कवियों ने कलम नहीं उठाई। यही कारण है कि राजस्थानी कवियों की कलम, तलवार से भी अधिक सशक्त और पैनी प्रतीत होती है। जो नरपुंगव अन्याय और शोषण के आगे नहीं झुके, यहां के कवियों ने ऐसे निर्भीक शूरवीरों का अपने काव्य में वर्णन किया। क्या राजस्थानी कवियों की यह सरस्वती-वन्दना, प्रशस्ति-वन्दना है? राजस्थान के कवि मात्र प्रशस्तियों के गायक होते तो उनके काव्य में अनीति और अन्याय को प्रश्रय देने वाले शासकों का विरोध नहीं होता। बखतसिंह द्वारा अपने पिता अजीतसिंह की हत्या के दुष्कृत्य की तत्कालीन कवियों ने भर्त्सना की है। ये उनकी निर्भीक स्पष्टवादिता का प्रमाण है। उदाहरण देखिए —

दो.औ. वखता वखत वाहिरा, क्यूं मारियो अजमाल ।
हिन्दवाणी को सेवरो, तुरकाणी री शाल ।।

एक छप्पय और—

प्रथम तात मारियो, मात जीवती जळाई
असी चार आदमी, हत्या ज्यों री पण पाई
कर गाढ़ो इकलास, वेग जयसिंघ बुलायौ
मेटी धरम मरजाद, भरम गांठ रौ गमायौ
कवि अणां हूंत केवाकरे, धरा उदक लेवणधरी ।
वखतसी जलम पायां पछै, किसी बात आछी करी ।।

उपर्युक्त उल्लिखित दोहे और छप्पय में एक महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक घटनाचक्र छुपा हुआ है । वखतसिंह का जन्म वि. सं. १७६३ भाद्रपद कृष्णा ८ को हुआ था और वि. सं. १८०८ श्रावण शुक्ला १२ को उन्होंने जोधपुर पर अधिकार किया था । इतिहास घटनाओं की पुनरावृत्ति करता है । आज की कथित प्रजातन्त्र की राजनीति में नैतिक मानव मूल्यों और उन जीवन आदर्शों को स्थान कहां ? अपने क्षणभंगुर स्वार्थों के लिए, सत्ता की राजनीति में उलझे, मानवी-मूल्यों से दूर एन केन प्रकारेण सत्ता में आकर जनता का दोहन करने की प्रवृत्ति की भर्त्सना, युगीन साहित्यकारों तथा बुद्धिजीवियों से अपेक्षित है । देशभक्ति जिनके लिए आत्मविकास का माध्यम थी, उन शहीदों की मज़ारों पर, उनकी समाधियों पर श्रद्धा सुमन चढ़ाने की वात तो दूर, पर ये सत्ता की राजनीति के रसिक भ्रमर, आत्म – विस्मृत से देश को किस दिशा में ले जा रहे हैं, यह एक वड़ी चुनौती हमारे सामने है कि हम उसे नई युक्ति युक्त दिशा में मोड़ें ताकि आने वाली पीढियां हमारे वर्तमान को घृणा की दृष्टि से न देखे । स्वराज्य आया पर सुराज्य के इतिहास का नये सिरे से निर्माण करना है । आत्म प्रशस्तियों को कुंठाएं हमारे नवसृजन को कलुपित करती हैं । अभिनन्दन, वंदन से हटकर हमें उस क्रन्दन की ओर मुड़ना है जो कोटि – कोटि कण्ठों से समूचे देश पर आच्छादित है । कोटि-कोटि हृदयों में अभावों की चिताएं धधक रही है । और नयन-गगन से हो रही है आंसुओं की वरसात । 'कलम उठानी है तो उठाओ नये इतिहास के लिए कि धरा ये स्वर्ग हो जाये ।' आईए इस दोहे में निहित प्रश्नवाचक चिह्न का सही उत्तर दें— देवो से इसने पूछा है—

रुळियोड़ा रुळ रल रह्या, मद चकिया माचंत ।
धणियाणी थारी धरा, नुगरा किम नाचंत ।।

बर्बाद हुए बर्बादी की ओर धकेले जा रहे हैं । सत्ता के, धन के मद में, मदहोशों की बन आई है । नुगरों का ताण्डव नृत्य इतिहास का निर्माण नहीं कर सकता —

आथडता आगै बढे, भुजां जनबल भार ।
श्रम सजल करै इला, वे जुग रा जूंझार ।।

सही है, "कठिनाईयों और दुःखों का इतिहास ही सुयश है" और यह जूंझारु जीवट राजस्थानी काव्य की देन है । जूंझारु जिन्दगी के ऐतिहासिक आख्यान, जो दोहे के माध्यम से चार पंक्तियों में समाहित हो गये, उनमें समय-विशेष की चतुर्वेणी छलछलाती है । सत्य तो यह है कि तत्कालीन निरंकुश शासन के सिरफिरे गुंडियों की भर्त्सना, तत्कालीन साहित्यकारों की निर्भयता की परिचायक है । उस युग के कवि शासन और समाज को सही दिशादर्शन देना अपना महत्त्वपूर्ण उत्तरदायित्व समझते थे । क्षणिक स्वार्थों के लिए उन्होंने अपनी कलम को कलुषित नहीं किया । वह युग महाराजा रायसिंह के समय का था । तत्कालीन प्रशासन का चित्रण इस दोहे में कितनी सहजता से हुआ है—

टोळा रा टोळाह, दोला फिरग्या देसरै ।
मुंशीड़ा मोळाह, कहो दाता पड़सी कदै ।।

गांव कैर, धूलिया तहसील भीनमाल के निवासी चारण कवि [illegible] भी अपने युग के सशक्त एवं निर्भीक रचनाकार थे । सत्ताधिराजों को सही बात कहने में वे कभी नहीं चूके जिनका सन्दर्भ इस शोध-प्रबन्ध में आया है —

ठाकर बाजौ ठाकरां, अवरां रा आधार ।
काग माळारा कंवर, गरीबोड़ा मत मार ।।

ठाकुर यानि शासक वही है जो औरों को सुख सुविधाएं उपलब्ध करवाए, जो दीन-दुखियों का आधार बने । यदि शासक निरंकुश है और प्रजा के प्रति पिता की भूमिका नहीं निभाता तो ऐसे शासक को, शासन करने का अधिकार नहीं है । मरे हुए लोगों को मारना असम्मानजनक कार्य है जो कम-से-कम शासकवर्ग को शोभा नहीं देता —

मिनखा नह मिलसी तनै, रोवां सूं [illegible] ।
आवै जै तब ऊपरा, लड़ लड़नै ललकार ।।

महंगे आंसू बहानें, दूसरों के आगे हाथ पसारने और लाचारगी ग्रहण करने से वह सब प्राप्त नहीं हो सकता जिसकी अपेक्षा जीवन को

होती है । महत्त्वपूर्ण कार्य और सफलताएं, बलिदान मांगती हैं । यही कारण है कि समय-समय पर कवियों ने जनविरोधी कार्य करने वालों के प्रति विद्रोह हेतु जन – जन को प्रोत्साहित किया है । भारतवर्ष में प्रस्फुटित जनवाद और जननायकों के अभ्युदय का श्रेय उन जनकवियों को जाता है जिन्होंने उसका बीजारोपण किया । इस प्रकार के दोहे, सोरठे और गीत वस्तुतः जनतान्त्रिक इतिहास के आधार हैं, इस सत्य को विस्मृत नहीं किया जा सकता । झोपड़ों की जीत के स्वप्न संजोकर जीने वाले कवियों की काव्य अनुभूतियां आज के समाजवाद की पृष्ठभूमि कही जा सकती है ।

आसी पीढ़ी आगली, गासी थारां गीत ।
आप पणा वळ आवसी, झूंपड़ियां री जीत ।।

झोपड़ों की जीत को प्रत्यक्ष आंखों से देखने की अभिलाषा रखने वाला यह कवि दूरदृष्टा था । उसे विश्वास था कि कल का सवेरा झोपड़ों का होगा । ऐसे दृढ़ संकल्पों से अभिभूत दोहे हमारी ऐतिहासिक धरोहर नहीं, तो और क्या हैं ? क्षेत्र-विशेष में ही सही, अपने काव्य द्वारा तत्कालीन कवियों ने आज के युग की परिस्थितियों का उस युग में आह्वान किया था । कवि गुमानदान के समान ऐसे अनेक कवि हैं जिनके दोहे लोकजीवन के कण्ठहार बन गये हैं ।

नित दारु नाडाह उपमा पायनै उमगै ।
जुलमी सै जाडाह गारत होसी गुमानिया ।।

सत्ता और मदिरा की मस्ती में मदहोश हो, अपने अधीनस्थ लोगों का शोषण करने वाले अत्याचारियों को, एक न एक दिन मिटना है । जोर और जुल्म से इतिहास बदल जाते हैं परन्तु तलवार के बलपर जन-मन को नहीं बदला जा सकता । साम्यवाद का चितेरा महान् मनीषी कार्ल मार्क्स अपने विचार दर्शन को उजागर करने हेतु, लंदन के पुस्तकालय में संदर्भ ग्रन्थों की गहराई में डूबकर, विविध ग्रन्थों का मंथन करने में संलग्न था ठीक उसी समय राजस्थान के काव्यजगत् में शोषण, असमानता और पूंजीवाद से प्रभावित लोगों के घुटन भरे आक्रोश की आग भीतर ही भीतर सुलग रही थी । तत्कालीन कवियों के दोहों में, जन-आक्रोश की चिनगारियों की धधक देखी जा सकती है ।

लोई पीवो मत लाडलां, ओ नह वाली वाट ।
इक दिन पांणी उतरसी, घर घर घाटो घाट ।।

सत्ता प्राप्ति के हिंसक संघर्षों की अवज्ञा जिसे कालान्तर में सत्याग्रह के रूप में जाना, माना और पहचाना गया, राजस्थानी काव्य में इसका

साक्षात्कार किया जा सकता है । जब-जब अन्याय, स्वार्थ और शोषणवृत्ति के वशीभूत हो किसी शासक ने अन्य लोगों के स्वातन्त्र्य को छीनने का प्रयत्न किया तब चारण कवीश्वरों ने भीषण रक्तपात से जनमन को त्राण दिलवाने के लिए दोनों ओर की सेनाओं के मध्य जाकर सत्याग्रह किया । कवियों के इन सद् प्रयासों से ही युद्ध की विभीषिका से क्षेत्र-विशेष को बचाया जा सका । यह उस युग की मान्यताओं और मर्यादाओं के प्रतिपादन का प्रभाव था कि म्यान से निकली तलवारें अनायास थम जाती थीं । यह तत्कालीन कवियों के आत्मबल का प्रभाव ही था कि एक दूसरे के खून के प्यासे शूरवीरों में प्रज्ञा का प्रादुर्भाव हो जाता और न्यायसंगत बात को स्वीकार करने के लिए वे तैयार हो जाते । कलम के धनी भीनमाल के रावों के लिए विख्यात है—

भाटै भीनमाळैह कलमां वळ साको कियो ।
ताते आगाळे जळ राख्यो जालोर रो ॥

लोक श्रद्धा के पात्र, जन्मजात चारण कवीश्वरों के प्रति युगमान्यता रही है —

राखण नै रजवट धरा, ओर नह दूजी ओळ ।
देव गुणां कुल चारणां, पूजां थांरी पोळ ॥

जिस देश में कवि और उसके काव्य के प्रति जनमन श्रद्धासुमन नहीं चढ़ाता, उस कौम के प्रेरणा-स्रोत शनैः शनैः विलुप्त होने लगते हैं । इसी तथ्य को दृष्टिगत रखकर रसीलेराज महाराजा मानसिंह ने यह दोहा कहा —

चारण तारण क्षत्रियां, भगतां तारण राम ।
इक अमरा पर ले चले, इक नरखण्ड राखै नाम ॥
जोगो किरण जोग, जोगो तो मुकव कियो ।
लूठा चारण लोग, तारण कुल क्षत्रियां तणो ॥

डॉ० परिहार के शोध प्रबन्ध में वि० सं० १६५०-१८०० के मध्य की ऐसी अनेक विस्मयकारी परन्तु शत प्रतिशत सत्य घटनाओं का विवरण देखा जा सकता है । वि० सं० १७६३ फागण वदी १४ को [illegible] का देहावसान हो गया । जालोर से महाराजा अजीतसिंह ने जोधपुर की ओर कूच किया । चैत्र कृष्णा ५ को महाराजा अजीतसिंह के जोधपुर पर अधिकार पर शुभकामना प्रकट करते हुए, जालोर की भीनमाल तहसील के अखैगढ़ ग्राम- जो अब वीरानप्राय हो चला है, के निवासी [illegible]

सशक्त कवि समरथदान ने अपनी हृदयस्थ अभिव्यक्ति का चित्रांकन करते हुए लिखा—

भम भम दुरगै भाखरां न्रप कीधो समरथ ।
अवै भालो अजीतसी रजवट हंदो रथ ।।
तन मन सूं त्यागी साम धरम संवेरतो ।
वावो वैरागी ओ तप मोटो आसवत ।।
धन धरती मरुधरा धन पीली परभात ।
जिण पुळ दुरगो जलमियो धन वा माभल रात ।।
धन रजपूती आसवत धन थारी तपनाह ।
निछरावळ कर नांकिया सेजां रा सपनाह ।।

वीरवर दुर्गादास राठौड़ ने अपने तप त्याग से अजीतसिंह को जोधपुर का शासक बनने में अनिवर्चनीय सहयोग प्रदान किया परन्तु इस अपूर्व त्याग का प्रतिफल मिला, दुर्गादास का मारवाड़ से निष्कासन । काश दुर्गादास को यह आदेश अजीतसिंह द्वारा न मिला होता । मृत्युशैय्या पर पड़े कवि समरथदान को जब अजीतसिंह द्वारा अपेक्षित कृतज्ञता की उपेक्षा का समाचार मिला तो उनके अन्तर का कवि यह दुष्कृत्य सहन न कर पाया । रुग्ण कवि ने महाराजा अजीतसिंह को निम्नलिखित दोहे लिख भेजे जिनमें कर्तव्य की उपेक्षा का आरोप तथा अपने संरक्षक सहयोगी दुर्गादास के साथ किए अमानवीय व्यवहार की कटु निन्दा की गई है—

रखवाली कर राजरी पाळी अणहद प्रीत ।
दुरगा देसां काढनै अवखी करी अजीत ।।
समो तो पलटणसील है, राज वदल जुग रीत ।
देसी मेहणी देसड़ा, आगमतैनै अजीत ।।

मरुधर निर्वासन से दुर्गादास का निर्लिप्त व्यक्तित्व और अधिक निखर गया परन्तु महाराजा अजीतसिंह के कृत्य को कोई नहीं सराहता । डॉ० जगमोहनसिंह परिहार ने अपने विवेचन में मानव-आदर्शों के विपरीत कार्य करने वाले नरेशों की काव्यात्मक निन्दा के प्रसंगों को प्रस्तुत कर स्पष्ट किया है कि कविधर्म का दूसरा नाम सत्य और स्पष्टवादिता है । किसी भी व्यक्ति के व्यक्तित्व का मूल्यांकन उसके द्वारा सम्पादित अच्छे-वुरे कार्यों के संकलन के वाद ही किया जा सकता है।

राजस्थान के स्वर्णिम इतिहास को कलंकित करने वाले एक अन्य प्रसंग का उल्लेख भी डॉ० परिहार की इस पुस्तक में देखा जा सकता है। बादशाह फर्रुखशियर ने महाराजा अजीतसिंह से क्रुद्ध होकर अपने सेनापति हुसैन अली को उनपर आक्रमण के लिए भेजा। हुसैन अली का पलड़ा भारी देख अजीतसिंह ने उससे समझौता कर लिया और अपनी राजकुंवरी इन्द्रकुंवर बाई का डोला दिल्ली भिजवाया ताकि मुगल शासक उनकी अद्वितीय सौन्दर्यमयी भेंट से प्रसन्न हो सकें। महाराजा अजीतसिंह का यह कृत्य भले ही सत्ता की राजनीति के सन्दर्भ में कुत्सित और हो परन्तु सत्ता के लिए आत्म-समर्पण और साथ में आन, मान और परम्परागत मर्यादा के आत्म-विस्मरण को स्वाभिमानी कवि भभूतदान सहन नहीं कर पाए। अजीतसिंह के आश्रित होते हुए भी, विष के उस घूंट को वे नहीं पी सके, महाराजा के अन्य चापलूस सलाहकारों की भांति वे इस कलंकपूर्ण घटना को मूक दर्शक बनकर नहीं देख सके। अपने आश्रयदाता के आत्म-पतन से, कवि का हृदय घृणा और आक्रोश से भर उठा। उन्होंने कलम उठाई और उपालंभ दोहों का सृजन किया। ये दोहे कवि की स्पष्टता, निर्भीकता एवं आत्म गौरव को अक्षुण्ण बनाए रखने की मनोवृत्ति के परिचायक हैं। अजीतसिंह के राजपूती आदर्शों के विरोधी, दुष्कृत्य की पराकाष्ठा को भी लज्जित कर देने वाले कदम ने, कवि में वैराग्य उत्पन्न कर दिया। अपने आश्रयदाता को उपालंभ के दोहे सुनाकर वे सूंधा की पहाड़ियों में चले गये और वहां सन्यासीवत् रहने लगे। कवि भभूतदान गांव कैर जिला जालोर के निवासी थे। आत्मश्लाघा से कोसों दूर इस संतकवि की रचनाएं भले ही अबतक प्रकाश में न आ पाई हों पर क्षेत्रीय हरजस मंडलियों द्वारा गाये जाने वाले हरजसों-रागिनियों पर, उनकी अमिट छाप दिखाई देती है। महाराजा अजीतसिंह को कहे गये कवि के दोहों में देश, काल और परिस्थितियों का इतिहास है। डॉ० परिहार का यह अन्वेषण निस्सन्देह निष्पक्ष पाठकों को भायेगा। भभूतदान के स्वाभिमानी, निर्भय एवं सशक्त दोहों के कतिपय उदाहरण पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत किए जा रहे हैं —

रोवै रजपूती, डबडब नयणां देखनै।
मन री मजबूती, अब बिसरीयो तू अजा ॥
काळख री कुल में कमंद, राची किम या रीत।
दिल्ली डोलो भेजने, अबखो करी अजीत ॥
फरकसर फेराह, डोळो तुरक देखनै।
डरीयां तव डेराह, उखड़ती रहसी अजा ॥

मरुधर रो मूंडो काळो किम किधो कुंवर ।
ऐसो घाव ऊंडो अवखो मनं लागै अजा ।।
रण रा रंग राता, खांतो सांहा रैं संरण ।
नित जोड्यो नाता, अवसळ नह रेसी अजा ।।
इन्दर कुंवरी ने, हाय भेजी हुसेन संग ।
मेणी मरुधर ने, इतिहासां दीधी अजा ।।

अकाट्य प्रमाणों के द्वारा लेखक ने राजस्थानी साहित्य में अवतक दोहराई जाने वाली भ्रान्तियों का विरोध करते हुए पाठको के समक्ष ऐतिहासिक विवरणों को प्रस्तुत किया है। उदाहरण के लिए महाराजा अजीतसिंह की पुत्री इन्द्रकुंवर बाई का फर्रुखसियर के पास डोला ले जाने वाले लोगों में, कर्नल टॉड द्वारा करणीदान बारहठ के स्थान पर करणीदान कविया का उल्लेख करना और राजस्थानी साहित्य में प्रथम भक्ति महाकाव्य 'रामरासो' के प्रणेता भक्तकवि माधोदास दधवाड़िया के व्यक्तित्व और कृतित्व का विद्वानों द्वारा सिर्फ पांच पंक्तियों में मूल्यांकन करते हुए उनके काव्य-उदाहरण के स्थान पर किसी नाम साम्य माधोदास की काव्य पंक्तियां प्रस्तुत करना आदि-आदि अनेक विसंगतियों का निराकरण करते हुए डॉ० परिहार ने पाठकों को वस्तुस्थिति के सम्मुख पहुंचाने का प्रयास किया है।

डॉ० जगमोहनसिंह परिहार का यह शोधप्रवन्ध भाव, भाषा और शैली की दृष्टि से सत्यम्, शिवम्, सुन्दरम, की परिभाषा के अन्तर्गत् आता है। विस्तारभय और शोधप्रवन्ध की सीमा को दृष्टिगत् रखते हुए कहीं-कहीं लेखक को अति संक्षिप्त विवेचन का भी आश्रय लेना पड़ा है। डॉ० परिहार द्वारा बीकानेर राज्य का तिथि संवतानुसार काव्यमय इतिहास लिखने वाले अज्ञातकवि कासीराम छंगाणी और उनकी रचनाओं का प्रथम बार प्रकाशन राजस्थानी साहित्य और इतिहास को नवीन देन है।

अद्यावधि ज्ञात रचनाओं में कवि कासीराम छंगाणी प्रणीत अनोपकुल वर्णन ग्रन्थ साहित्य एवं ऐतिहासिक दृष्टि से अत्यन्त उपयोगी और महत्त्वपूर्ण काव्यरचना है। इसमें कवि ने बीकानेर राज्य की स्थापना के समय से लेकर महाराजा अनोपसिंह तक के शासनकाल की प्रमुख घटनाओं का प्रमाणपुष्ट ऐतिहासिक विवरण प्रस्तुत किया है। वि० सं० १७४१ में सृजित इस कृति को, अवतक ज्ञात रचनाओं में अत्यधिक प्रमाणिक रचना माना जाना चाहिए क्योंकि इसमें प्रत्येक शासक का नाम और उसके शासनकाल में घटित महत्त्वपूर्ण घटनाओं का तिथि क्रमानुसार विवरण प्रस्तुत किया गया है। डॉ० परिहार ने कवि कासीराम छंगाणी और उनकी काव्य-रचनाओं को प्रकाश में ला कर न सिर्फ साहित्य की वरन् इतिहास की भी

अनुपम सेवा की है । इस प्रयास के लिए वे बधाई के पात्र हैं । ऐसी दुर्लभ और लुप्तप्रायः रचनाओं के अन्वेषण से निस्सन्देह इतिहास और साहित्य में अबतक दोहराये जाने वाले भ्रान्तिदायक विवरणों से पाठकों को मुक्ति मिलेगी और कम से कम समय में वे अधिकाधिक प्रामाणिक सामग्री का उपयोग कर सकेंगे, ऐसा मेरा अनुमान है । इसके अतिरिक्त उनके द्वारा अन्वेषित, अप्रकाशित और अज्ञात रचनाओं का प्रकाशन साहित्यान्वेषी समाज को एक नया पथ और उस को गति प्रदान करेगा, इसमें सन्देह नहीं है । डॉ० परिहार का यह [illegible]-ताप निस्सन्देह राजस्थानी साहित्य, संस्कृति एवं कला को उजागर करने की दिशा में अनुपम प्रयास है। आशा करता हूं अपने अध्ययन और अनुसंधान द्वारा राजस्थानी भाषा और साहित्य के भण्डार को वे भविष्य में भी समृद्ध करते रहेंगे ।

शुभकामनाओं के साथ,

६ जून. १९७९

हनुवन्तसिंह देवड़ा
१३-२१, देवड़ा निवास
वीर दुर्गादास नगर
चामी मैदान, पावटा सी रोड,
जोधपुर (राजस्थान)



प्राक्कथन ---

प्रकार और परिणाम की दृष्टि से राजस्थानी साहित्य यद्यपि पूर्णतया समृद्ध रहा है परन्तु फिर भी इसमें सुव्यवस्थित क्रमबद्धता का अभाव-सा परिलक्षित होता है। अव्यवस्थित और बिखरे हुए साहित्य को सुव्यवस्थित स्वरूप प्रदान करने के उद्देश्य से ही 'राजस्थानी साहित्य का इतिहास - विक्रम संवत् १६५०–१८००' विषय का चयन किया गया है। राजस्थानी साहित्य का यह काल परिमाण एवं स्तर प्रत्येक दृष्टि से उत्कृष्टतम विशेषताओं से अभिभूत है। इन्हीं विशेषताओं के आधार पर राजस्थानी साहित्य के इस काल को, स्वर्णकाल की संज्ञा दी जाती है।

यहां की विशिष्ठ परिस्थितियों में वीररसात्मक साहित्य विपुल परिमाण में लिखा गया। वीररस से परिपूर्ण साहित्य के प्राचुर्य को देखते हुए कुछ विद्वानों ने डिंगल साहित्य को वीररस का पर्याय मान लिया है परन्तु यह दृष्टिकोण भ्रामक और तत्कालीन परिस्थितियों में निहित सत्य से, अनभिज्ञता प्रदर्शन का परिचायक है। डिंगल साहित्य को अतिरंजक गाथा चारणों की विरुदावली मात्र बतलाना, भारतीय संस्कृति के आधारभूत सिद्धान्तों से अनभिज्ञता प्रकट करने के समान है।

राजस्थान के शूरवीरों ने मात्र अपने दंभ से प्रेरित होकर अथवा साम्राज्य–विस्तार की तुच्छ मनोवृत्ति से अभिभूत हो युद्धों में भाग नहीं लिया। इतिहास में ऐसे असंख्य उदाहरण देखे जा सकते हैं जिनमें राजस्थानी योद्धाओं के निस्वार्थ पराक्रम–प्रदर्शन और लोक मर्यादा को कायम रखने के लिए किए गये बलिदानों का विवरण है। समष्टिगत कल्याण के सम्मुख व्यक्तिगत स्वार्थ को निरर्थक समझकर, मर मिटने वाले शूरवीरों से हमारा इतिहास भरा हुआ है। उदाहरण के लिए वि० सं० १७३६ में ठाकुर श्यामसिंह के एकमात्र पुत्र सुजानसिंह ने खंडेला के मोहनजी के मन्दिर की रक्षा हेतु शाही–सेना से प्रलयंकारी युद्ध किया था। इस युद्ध में अद्भुत शौर्य का प्रदर्शन करते हुए अन्ततः वीरवर सुजानसिंह ने मृत्यु का वरण किया। कहा जाता है कि विवाह करके सुजानसिंह मारवाड़ से लौट रहे थे, तभी मार्ग में एक [illegible] के [illegible] ने व्यंग झेलते हुए कहा था —

झिरमिर झिरमिर मेहा बरसै, मोरां छतरी छाई ।
कुल में है तो आव सुजाणां, फौज देवरे आई ।।

इस आह्वान को सुनते ही सुजानसिंह ने बारात को मार्ग में ही छोड़कर, खण्डेला मन्दिर के समीप पहुंचकर अत्याचारी मुगलों को ललकारा। घमासान, लोमहर्षक युद्ध के बाद शूरवीर सुजानसिंह ने अपने प्राणों को न्यौछावर कर दिया। वीर सुजानसिंह के इस बलिदान की स्मृति को चिरस्थायी बनाए रखने के लिए, खण्डेला दुर्ग का द्वार 'काला दरवाजा' कहा जाने लगा। अपने पति के शौर्यमय बलिदान के समाचार को सुनकर सुजानसिंह की नवपरिणिता ने भी जौहर की धधकती ज्वालाओं में अपने शरीर को भस्मीभूत कर दिया ताकि वह स्वर्ग में पुनः शूरवीर पति का पति रूप में वरण कर सके। खण्डेला में स्थित छत्री आज भी उस इतिहास-पुरुष की गौरवगाथा गाती प्रतीत होती है—

दातां मंदिर सिर दियो, आतां दळ अवरंग।
इण वातां सूजो अमर, राय सलोता रंग ।।

प्राचीन राजस्थानी साहित्य में वीररस के साथ-साथ शृंगार और भक्ति रस का भी सुन्दर और चित्ताकर्षक निरुपण हुआ है। जहां तक धार्मिक साहित्य का प्रश्न है-धार्मिक साहित्य सृजन के क्षेत्र में जैन विद्वान अग्रणी रहे हैं। जैन साहित्यकारों ने अपने धर्म सम्बन्धी आख्यानों के साथ-साथ अन्य महत्त्वपूर्ण विषयों पर भी रचनाओं का निर्माण किया। जैन कवियों द्वारा निर्मित रास, चौपई, विवाहला, फागु काव्य एवं संधि काव्य राजस्थानी साहित्य रूपी भंडार के बहुमूल्य रत्न हैं। अपने धार्मिक साहित्य के साथ-साथ अन्य धर्म के साहित्यकारों की रचनाओं का संग्रह जैन धर्म के अनुयायियों की उल्लेखनीय विशेषता कही जा सकती है।

भक्ति साहित्य के अन्तर्गत् सगुण और निर्गुण दोनों प्रकार का साहित्य आता है। सगुण भक्ति के कवियों ने राम और कृष्ण की भक्ति में अपने हृदय के उद्गार व्यक्त किये। अनेक कवियों ने कृष्ण द्वारा रुक्मणी हरण पर काव्य सृजन किया। शक्ति पूजा की परम्परा भी राजस्थानी जन-जीवन की महत्त्वपूर्ण विशेषता रही है। चारण कवियों ने अपनी कुल-देवियों का वर्णन भी अत्यन्त प्रभावपूर्ण शैली में किया है। यहां के इतिहास में ऐसे अनेक प्रसंग मिलते हैं जब इन देवियों ने संकट के समय अपने श्रद्धालुओं को अपना स्नेह-सम्बल प्रदान कर अनुगृहित किया।

सगुण भक्ति काव्य की तुलना में राजस्थान में, निर्गुण भक्ति काव्य

का प्राधान्य रहा है । निर्गुण-निराकार ब्रह्म की उपासना करने वाले सम्प्रदायों में कबीर और नाथपंथ का प्रभाव बहुत प्राचीन काल से यहां के जनमानस पर पड़ता आया है । जोधपुर के महाराजा मानसिंह के समय नाथों का प्रभाव अपने चरम उत्कर्ष पर था । नाथपंथ के अतिरिक्त जसनाथी, दादूपंथी, रामसनेही, निरंजनी, चरणदासी एवं जाम्भोजी विश्नोई इत्यादि अनेक सम्प्रदायों ने अपनी वाणियों के द्वारा आत्म मुक्तिमार्ग के महत्त्व पर प्रकाश डाला । भारतीय संत-परम्परा के विकास में राजस्थानी संतों का अभूतपूर्व योगदान रहा है । राजस्थानी जन-जीवन में व्याप्त संतों की वाणियां निर्गुण-निराकार ईश्वर के प्रभाव की ओर संकेत करती है ।

जीवन जहां संकटमय होता है वहां उसका महत्त्व और भी अधिक बढ़ जाता है । यही कारण है कि निरन्तर संकटों के बीहड़ रास्तों से गुजरने वाले राजस्थान के शृंगार रसात्मक साहित्य का आस्वादन कर अपूर्व आनन्द और स्वाभिमान की प्राप्ति होती है । जीवन की वास्तविकता के मध्य, प्रेम और सौन्दर्य का ऐसा अद्भुत शब्दांकन हमारे यहां के साहित्य की महत्त्वपूर्ण उपलब्धि है । आलोचयकाल में घटित प्रणय-प्रसंगों का राजस्थानी साहित्यकारों ने गद्य और पद्य में अत्यन्त प्रभावशाली भाषा-शैली में चित्रण किया है ।

जटिल राजनैतिक परिवेश और शासन-व्यवस्था की अनिश्चितता के कारण लम्बे समय तक राज-कर्मचारियों को अवकाश आदि सुविधाओं से वंचित रहना पड़ता था । जोधपुर के महाराजा अजीतसिंह के शासन-काल में लम्बी अवधि तक पति के घर न लौटने के कारण, विरहाग्नि में सुलग-झुलस रही एक कवि की विदूषी पत्नी ने पत्र लिखकर पति को घर भिजवाने का, महाराजा से निवेदन किया । इस गीत में विरह-वेदना की मार्मिकता के साथ-साथ राजस्थानी पत्र-लेखन कला के विकास की झलक भी देखी जा सकती है । गीत की कतिपय पंक्तियां दृष्टव्य हैं —

सिध श्री महाराज अजा जोधपुर सथाने
जसारा जोध जुग कोड़ जीज्यो ।
कविण री पदमण घणीं कोडूं करै,
सो देस मुरधरा धणी सीख दीज्यो ॥१॥

गुणां रा पारख हवै हेक होळी गई,
दीवाली तीज गणगोर दारू ।
म्हारा पीव नूं घरा दिस मोकलो,
उगन्ते भाग जसवाद थारू ॥२॥

शृंगार रस के डिंगल गीत भी असंख्य परिमाण में उपलब्ध होते हैं। मध्यकाल के शृंगार गीत रचयिता कवियों में द्वारिकादास दधवाड़िया का विशेष स्थान है। ये महाराजा अभयसिंह जोधपुर के समकालीन थे। लम्बे समय तक महाराजा के साथ युद्ध में बाहर रहने के कारण कवि के भावुक हृदय में प्राकृतिक सौरभ के आकर्षणों को देख, प्रियमिलन की स्मृतियां पल्लवित होने लगी। प्राकृतिक सौन्दर्य के उन्माद एवं षोड़सी परिणिता से चिरवियोग की स्थिति के बीच कवि-हृदय कराहने लगा। सावन के महिने में वर्षा की फुहारें शीतलता के स्थान पर मन को और अधिक दग्ध करके लगी। ऐसी ही दुःखद और विषम परिस्थिति में कवि ने एक गीत लिखकर, आश्रयदाता से अवकाश का निवेदन किया—

गोरी गामड़े हालीजी गाया, साड धड़ूकं सवद सुणाया ।
सर भरिया पालर वरसाया, अभमल मोकळ पावस आया ।।
दमकण लागी सहरे दामण, करवत भाड़ भबूके कामण ।
सुत अजमल रित घणो सुहामण, सीख दया हरियाळे सामण ।।
हरिया गिरवर धर तर हरिया, धँवूवे अंवर धरहरिया ।
धारोळा वादळ धाहरिया, सुकव विदा कर धर संभरिया ।।
कहियां विना जाणजै कैसे, जगत सधार नवाजण जैसे ।
वुगला ही पावस धर वैसे, अभमल धरम विचारो अैसे ।।
तखत विराज नवाज किता ही, मोरी आस मूझ मन मांही ।
तोने ईसर तूटै त्वांटी, वानी अवस चढ़ै वूढां ही ।।

वीर और शृंगार रस के साथ-साथ राजस्थानी कवियों द्वारा निर्मित शान्त रस की रचनाएं भी कम महत्त्वपूर्ण नहीं हैं। यहां के कवियों द्वारा प्रणीत दोहे, सोरठे, पद, हरजस और गीत आदि प्रभूत परिमाण में प्राचीन पोथियों में संकलित हैं। भक्तिरस की ये रचनाएं सिर्फ लेखनीबद्ध ही नहीं मिलती, मौखिक परम्परागत रूप से भी ये एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में संस्तरित होती रही है। राजस्थानी साहित्य की इन अमूल्य रचनाओं की खोज आवश्यक है। लिखत-अलिखित रूपों में बिखरी इन अपरिमित रचनाओं के संकलन के बिना राजस्थानी साहित्य का उचित मूल्यांकन नहीं किया जा सकता। राजस्थानी साहित्य का अन्वेषण करते समय अनेक अपूर्ण रचनाएं यत्र-तत्र बिखरी दिखाई देती हैं। इनमें से किसी में आरम्भ का, किसी में मध्य का तो किसी में अन्तिम भाग पूर्णतया कीटभक्षित अथवा अन्य किसी कारण से कालकवलित हो चुका है। अति शोचनीय अवस्था में नष्टप्रायः ऐसी महत्त्वपूर्ण रचनाओं का संकलन

तथा संरक्षण अत्यावश्यक है । इन रचनाओं में साहित्य और इतिहास के न जाने कितने उपयोगी और दुर्लभ तथ्य छुपे हुए हैं । उदाहरण के लिए तुलछो कवि प्रणीत प्रेमवल्ली रा दूहा तथा किसी अज्ञात कवि द्वारा निर्मित श्रीकृष्ण जी रो विवाहलो ऐसी ही अपूर्ण परन्तु महत्वपूर्ण रचनाएं हैं । वि० सं० १७८६ चैत्र शुक्ला पूर्णिमा में, किसी जैन कवि द्वारा रचित 'श्रीकृष्णजी रो विवाहलो' १४ ढाल में निमित कृति है । लोक साहित्य जैसी सरसता वाले इस काव्य में श्रीकृष्ण जन्म से लेकर कृष्ण-रुक्मणी परिणय तक की घटनाओं का विवरण निहित है । पाठकों की जानकारी के लिए काव्यकृति से उद्धरित कुछ पंक्तियां यहां प्रस्तुत की जा रही है—

थारइं साली लागां हो हरजी नइं गालयां गास्यां ।
थारी जात न जाणां हो हरजी थे कवण जात ।।
थारइं पाय पड़वां हो हरजी रइं दोय दिना ।
थारी वहन सहोद्रा अरजन साथ गई ।।

मानव जाति को कर्तव्य पथ की ओर अग्रसर करने में, राजस्थानी साहित्य ने जो भूमिका अभिनीत की है, शब्दों के माध्यम से उसका अभिव्यक्तिकरण सम्भव नहीं है । वैसे तो डिंगल-साहित्य की सभी विधाओं में, मार्गदर्शक बनकर जन-जीवन को कर्तव्यपथ पर उन्मुख करने की शक्ति विद्यमान है परन्तु डिंगल-गीतों ने यहां के लोगों को कर्तव्योन्मुखी बनाने में जो भूमिका निभायी है, वह अपने आप में अद्वितीय उपलब्धि कही जा सकती है । वैसे तो मध्यकालीन आलोच्य काल खण्ड में भी कवियों ने समसामयिक योद्धाओं के शौर्यमय कार्यकलापों को जीवन्त बनाये रखने के लिए गीतों का प्रणयन किया लेकिन डिंगल गीत-लेखन परम्परा में हुक्मीचन्द खिड़िया का सर्वोपरि स्थान रहा है । इनके गीतों के माध्यम से उन्होंने सुप्त राष्ट्रीय चेतना को जाग्रत किया । हुक्मीचन्द के गीत सम्पूर्ण वातावरण को जीवन्त बनाने वाले हैं । इनके गीतों को सुनकर, शौर्यत्व की चिनगारियां स्वतः अग्नि ज्वालाओं के रूप में परिवर्तित होने लगती हैं । विविध प्रकार के छन्दों तथा पौराणिक उपमानों के द्वारा हुक्मीचन्द ने ऐसे प्रभावशाली गीत लिखे कि उन्हें सुनकर कायर से कायर व्यक्ति का लुप्त शौर्य अनायास जाग्रत होने लगता । साधारण से साधारण व्यक्ति के असाधारण कार्यों का मूल्यांकन हुक्मीचन्द के गीतों में देखा जा सकता है ।

दोहा-छन्द, राजस्थानी काव्य का सर्वाधिक लोकप्रिय छन्द रहा है । दोहे की प्राचीनता के सम्बन्ध में प्रामाणिक रूप से कुछ भी नहीं कहा जा सकता क्योंकि लिपिबद्ध स्वरूप में ढलने से पूर्व, मौखिक रूप में भी यह छन्द

लोक प्रचलित रहा होगा । राजस्थान के कवियों ने इस छन्द का अत्यधिक प्रयोग किया है । मध्यकाल में आते-आते यह प्रवृत्ति काव्य का अभिन्न अंग बन गई । मध्यकालीन काव्य में दोहों का प्राधान्य, जनजीवन में उनकी लोकप्रियता का प्रमाण है। मध्यकाल के सभी कवियों ने दोहा छन्द को अपनाया। इतना ही नहीं, इस काल में ऐसे असंख्य कवि हुए जो कतिपय दोहे लिखकर श्रेष्ठ कवि कहे जाने लगे । मध्यकालीन राजस्थानी साहित्य का अन्वेषण करते समय अपरिमित दोहे उपलब्ध होते हैं, इनमें से असंख्य दोहे जनजीवन में अत्यधिक लोकप्रिय हैं लेकिन आश्चर्य की बात है कि इन दोहों के रचयिता सर्वथा अज्ञात हैं। इन दोहों में ऐतिहासिक महत्त्व की अनेकानेक घटनाएं छुपी हुई हैं । ऐसे असंख्य दोहे हैं जो इतिहास का प्रतिरूप बन गये हैं । अतः मध्यकालीन दोहों का सर्वांगीण अध्ययन अपेक्षित है ।

नाम-साम्य के कारण राजस्थानी साहित्य के इतिहास लेखन में अनेक भ्रान्तियों की पुनरावृत्ति की जाती रही है। उदाहरण के लिए, आलोच्यकाल में माधौदास नाम के तीन कवि हुए हैं। नाम-साम्य के कारण विद्वानों में इन कवियों के सम्बन्ध में काफी मतभेद रहा है। कुछ विद्वानों ने माधौदास कवियों की रचनाओं को एक ही कवि की रचनाएं बतलाकर सन्तोष कर लिया है । प्रसंगवश, यहां माधौदास नाम के तीनों कवियों का संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत किया जा रहा। पहले माधौदास दधवाडिया राजस्थानी भाषा में लिखे प्रथम महाकाव्य 'रामरासो' के रचयिता हैं । राजस्थानी जनजीवन तथा भक्त-समुदाय में अतिलोकप्रिय उनके इस ग्रन्थ का रचनाकाल वि. सं. १६७५ है—

संवत सोलह सै समै, पचहोतरै प्रमाण ।
श्रावण सुदि छठि सुकुळपख, कागद लिखत कल्यांण ।।

दूसरे माधवदास, गाडण शाखा के चारण, मारवाड के छीड़िया ग्राम के निवासी और प्रसिद्ध कवि केशवदास गाडण के लघुभ्राता थे । कवि-प्रणीत वि. सं. १७०१ के आसपास के अनेक गीत उपलब्ध होते हैं जिनमें समसामयिक योद्धाओं के शौर्य का शब्दांकन किया गया है ।

तृतीय माधौदास, चारणों की बारहठ शाखा में उत्पन्न हुए थे । अद्यावधि अज्ञात से रहे माधौदास बारहठ द्वारा निर्मित लघुकृति 'अक्षर बावनी' उपलब्ध हुई है जिसमें भगवान विष्णु तथा उनके विविध अवतारों द्वारा भक्तों पर की गई अनुकम्पाओं का सरस विवरण संकलित है । ३ दोहे, ३१ त्रिभंगीछन्द और १ छप्पय-जिसे कवित्त कहा गया है, में कवि की भक्ति-भावना का श्लाघ्य रूप में दिग्दर्शन हुआ है । इस रचना के समापन छन्द में कवि ने, अजामिल द्वारा अपने पुत्र नारायण के नाम-स्मरण से भवसागर से तर जाने की घटना को लक्ष्य कर ईश्वर से अपने उद्धार की

सर्जना की है। 'अक्षर बावनी' की वि. सं. १७८० की लिपिबद्ध रचना प्राप्त है जिसके आधार पर कवि का रचनाकाल इस समय से पूर्व का अनुमित होता है।

वीर, शृंगार और भक्तिरस के साथ-साथ राजस्थानी साहित्यकारों ने छन्द शास्त्र पर भी महत्त्वपूर्ण ग्रंथ लिखे हैं। इन छन्द ग्रंथों के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि मध्यकाल में डिंगल की काव्य-रचना कितनी सुव्यवस्थित थी। पद्य साहित्य के अतिरिक्त राजस्थानी का गद्य साहित्य भी अपनी विशेषताओं से परिपूर्ण है। राजस्थानी गद्य-साहित्य का सृजन भी अत्यन्त प्राचीनकाल से होता आया है। पौराणिक एवं ऐतिहासिक गद्य विविध विधाओं में लिखकर यहां के साहित्यकारों ने अपने प्रकाण्ड पाण्डित्य का परिचय प्रस्तुत किया। इन गद्य रचनाओं में बात, ख्यात, वचनिका, खत, पीढ़ियां, वंशावलियां, बहियां एवं शिलालेखों पर अंकित सामग्री सम्मिलित हैं। इसी प्रकार अनुवाद तथा टीका निर्माण की दृष्टि से भी राजस्थान अत्यन्त समृद्ध रहा है।

राजस्थान के साहित्यकारों ने सिर्फ डिंगल भाषा में ही साहित्य सर्जन नहीं किया अपितु उस समय प्रचलित अन्य प्रान्तीय-भाषाओं में भी साहित्य-प्रणयन कर, अन्य भाषाओं के प्रति अपने हृदय में स्थित सहज अनुराग का परिचय प्रस्तुत किया। प्रस्तुत शोधप्रबन्ध में उन्हीं कवियों के काव्य का आलोचनात्मक विवरण प्रस्तुत किया जा रहा है जिन्होंने डिंगल भाषा में काव्य की सर्जना की है। इस पुस्तक में उन रचनाओं को सम्मिलित नहीं किया जा रहा है जो अब तक डिंगल की रचनाएं मानी जाती रही हैं परन्तु उनमें डिंगल भाषा की विशेषताएं उपलब्ध नहीं होती। उदाहरण के लिए जैन कवि मान प्रणीत राजविलास काव्यकृति, जिसमें मेवाड़ के महाराणा राजसिंह प्रथम के जीवन-चरित्र का वर्णन सर्गों में [illegible] कुछ विद्वानों ने डिंगल भाषा की रचना तो कुछ ने राजस्थानी [illegible] ब्रजभाषा की रचना बतलाकर, राजस्थानी साहित्य के अन्तर्गत [illegible] है। जहां तक डिंगल भाषा की रचना का प्रश्न है सूक्ष्म विवेचनात्मक एवं भाषा शास्त्रीय अध्ययन राजविलास कृति को डिंगल भाषा [illegible] से दूर ले जाता है। 'राजविलास' में कवि ने ब्रजभाषा [illegible] है अतः उसे डिंगल साहित्य की रचना न मानकर ब्रजभाषा की रचना मानना अधिक तर्कसंगत होगा। इसी प्रकार महाकवि वृन्द को भी डिंगल भाषा का श्रेष्ठ कवि बतलाया जाता रहा है जबकि डिंगल भाषा में [illegible] प्रामाणिक रचना उपलब्ध नहीं होती। वृन्द कवि के [illegible] द्वारा 'रघुनाथ रूपक' की टीका के अन्त में प्रस्तुत महाकवि वृन्द के [illegible] डिंगल गीतों को, ज्यों का त्यों प्रस्तुत करके विद्वानों ने इन्हें डिंगल [illegible]

कवि घोषित किया है जबकि यह मत सर्वथा असंगत है । कवि प्रणीत तथाकथित डिंगल गीतों की प्रमाणिकता सन्दिग्ध है । कुछ विद्वानों ने वृन्द रचित वचनिका को भी डिंगल भाषा की कृति बतलाया है जबकि उसमें डिंगल भाषा का प्रयोग नहीं के बराबर किया गया है । अतः वृन्द और जैन कवि मान की रचनाओं को व्रजभाषा की रचनाएं मानते हुए, उनके विवरण को आलोच्य कालखण्ड के अन्तर्गत् नहीं लिया गया है ।

शोध-प्रवन्ध की सीमा-रेखा को दृष्टिगत् रखते हुए कुछ ऐसे कवियों को, जो आलोच्य कालावधि को छूते थे, उनके विवरण को इसलिए सम्मिलित नहीं किया गया है क्योंकि वे विवरण मध्यकालीन साहित्य की अन्य पुस्तकों में सहजता से उपलब्ध हैं । वि. सं. १६५० से १८०० के राजस्थानी साहित्यकारों एवं उनके द्वारा प्रणीत रचनाओं की खोज के दौरान, ऐसे असंख्य साहित्यकारों के विवरण पढ़ने-सुनने को मिले जिनमें से किसी का जीवनवृत्त तो किसी की रचनाएं सर्वथा अज्ञात है । प्रमाणाभाव के कारण ऐसे कवियों के व्यक्तित्व और कृतित्व को शोधचर्चा का विषय न बनाकर, प्रामाणिक विवरणों से युक्त सामग्री को ही प्रकाश में लाने का यत्न किया गया है जिसके द्वारा साहित्य और इतिहास की लुप्तप्रायः कड़ियों को जोड़ा जा सके ।

मेरे शोध-निर्देशक डॉ० राजकृष्ण दूगड़ ने शोधकार्य में आरम्भ से लेकर अन्त तक और बाद में इस पुस्तक के प्रकाशन के समय असीम सहयोग तथा अपनत्व प्रदान किया, मेरे लिए यह गौरव की बात है । डॉ० दूगड़ द्वारा प्रदत्त असीमित सहयोग के प्रति मैं नतमस्तक हूं ।

राजस्थानी साहित्य में गहन रुचि और अधिकार रखने वाले विद्वान-साहित्यकार श्री कैलाशदानजी उज्ज्वल ने शोध प्रवन्ध को आद्योपान्त पढ़कर अपने बहुमूल्य सुझाव दिए । श्री उज्ज्वल के सौहार्द एवं सहयोग के प्रति मैं अपना हार्दिक आभार व्यक्त करता हूं ।

राजस्थानी भाषा, साहित्य और इतिहास के मनीषी एवं समालोचक श्री सौभाग्यसिंह शेखावत ने शोध-कार्य के संग्रह, लेखन और प्रकाशन के समय अपने बहुमूल्य सुझाव देकर, शोध-प्रवन्ध को अधिक-से-अधिक उपयोगी बनाने के प्रयास में सहयोग प्रदान किया, इसके लिए मैं उनका आभारी हूं ।

हिन्दी तथा राजस्थानी के सुप्रसिद्ध कवि और साहित्यकार श्री हनुवन्तसिंह देवड़ा के विशद ज्ञान एवं आत्मीय सहयोग के फलस्वरूप अनेक अज्ञात कवियों के विवरण उपलब्ध हुए । श्री देवड़ा के सौहार्दपूर्ण सहयोग एवं भ्रातृभाव के प्रति शाब्दिक-आभार व्यक्त करना मात्र औपचारिकता प्रदर्शन-सा विदित हो रहा है ।

श्रद्धेय पण्डित नरोत्तम स्वामी और श्री पतराम गौड़ ने शोध-प्रबन्ध के सम्बन्ध में अनेक महत्त्वपूर्ण सुझाव दिए, इसके लिए मैं उनका हार्दिक आभारी हूं ।

डॉ० कृष्णा मोहनोत, प्राध्यापक हिन्दी विभाग, जोधपुर विश्वविद्यालय, जोधपुर द्वारा शोध-सामग्री के संकलन और प्रकाशन के समय प्रदत्त अपरिमित सहयोग के प्रति मैं अपना हार्दिक आभार प्रकट करता हूं ।

राजस्थानी साहित्य के प्रतिभाशाली विद्वान और मेरे सहयोगी श्री नारायणसिंह भाटी 'नानण' उद्‌घोषक, राजस्थानी विभाग, आकाशवाणी जोधपुर ने शोध-प्रबन्ध सम्बन्धी नवीन एवं अज्ञात सामग्री प्रदान की, इसके लिए मैं उनका आभारी हूं ।

श्री वसन्त कुमार दत्ता, केन्द्रीय रुक्ष अनुसंधान क्षेत्र, जोधपुर ने इस पुस्तक के प्रकाशन में सहयोग दिया इसके लिए मैं उनका हार्दिक आभारी हूं ।

श्री कानसिंह राठौड़ 'बुचकला' उद्‌घोषक, राजस्थानी विभाग, आकाशवाणी जोधपुर, डॉ० कल्याणसिंह शेखावत, अध्यक्ष राजस्थानी विभाग, जोधपुर विश्वविद्यालय, जोधपुर, डॉ० नित्यानन्द शर्मा, अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, जोधपुर विश्वविद्यालय, जोधपुर, डॉ० नारायणसिंह भाटी, निर्देशक, राजस्थानी शोध संस्थान, चौपासनी और डॉ० पुरुषोत्तम लाल मेनारिया, उप निर्देशक, प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर ने समय – समय पर शोध – कार्य में मार्ग-निर्देशन किया, इसके लिए मैं इन समस्त विद्वानों का आभारी हूं ।

शोध-प्रबन्ध के सुरुचिपूर्ण एवं आकर्षक मुद्रण के लिए पी. के. वीरेनसन्स मुद्रणालय जोधपुर के श्री शेखर फड़के विशेष रूप से बधाई के पात्र हैं । उनके सौहार्द एवं सहयोगपूर्ण व्यवहार के फलस्वरूप ही यह पुस्तक इस रूप में प्रस्तुत की जा सकी है ।

अन्त में उन सब विद्वानों और विद्या प्रतिष्ठानों के प्रति मैं श्रद्धा के सुमन समर्पित करता हूं जिन्होंने परोक्ष अथवा अपरोक्ष रूप से इस शोध - कार्य को लक्ष्योन्मुखी बनाने में अपरिमित सहयोग प्रदान किया ।

जगमोहनसिंह परिहार

१५-जून-१९७९



अनुक्रमणिका

चारण-काव्य

राजस्थान का विगत इतिहास मानव जीवन की अनुपम गाथा है। [illegible] के इतिहास में वीरता की जो अद्भुत छवि दिखाई देती है, वहां का [illegible] उसी का प्रतिबिम्ब है। शूरवीरों के रक्त से सिंचित राजस्थानी [illegible] कण-कण आज भी इस सत्य को दोहराता है कि मिट्टी, पत्थरों, नदियों, [illegible] और समुद्रों से देश नहीं बनते, हजारों-लाखों मनुष्यों के पैदा होने से भी [illegible] बनते। देश बनते हैं— वीरों के शौर्य से, वीरांगनाओं के [illegible] से और [illegible] रक्त से।

राजस्थान विश्व की गौरवशाली वसुन्धरा है जिसके [illegible] अद्भुत तथा अमिट कहानियां अंकित हैं। इस पवित्र भूमि पर जिसने [illegible] में कदम रखा, उसे अपार स्नेह, आदर और सम्मान मिला लेकिन जिस किसी ने इस धरती पर अधिकार के स्वप्न देखे, उसे प्रत्येक कदम पर [illegible] पड़े, काल से साक्षात्कार करना पड़ा। जब-जब देश पर संकट [illegible] मातृभूमि के मान-सम्मान को चुनौती दी गई, तब-तब [illegible] हथेली पर रखकर मृत्यु को ललकारा, रक्त की अन्तिम बूंद [illegible] शत्रुओं को मौत के घाट उतारा। जीवन और मृत्यु को [illegible] जीने वाले इन सेनानियों के हृदय में शौर्य, स्वाभिमान [illegible] अग्नि प्रज्ज्वलित करने का श्रेय यहां के चारण [illegible] राजस्थानी वीर-काव्य के निर्माता अधिकतर चारण [illegible] इसी दृष्टिकोण के आधार पर यहां के वीर-रसात्मक [illegible] नाम से भी सम्बोधित किया जाता है। यद्यपि [illegible] चारण कवियों द्वारा ही लिखा गया है परन्तु चारण कवियों [illegible] के कवियों ने भी वीर-काव्य का सृजन कर, राजस्थानी साहित्य [illegible] आशातीत अभिवृद्धि की है। राजपूत, [illegible] ढोली तथा ओसवाल जाति के कवियों द्वारा प्रणीत वीर-[illegible] और गौरवशाली है।

चारण-काव्य और उसकी भाषा का मूल्यांकन करते समय हमारे सामने अनगिनत विशेषताओं की चिर नवीन छवियां अंकित हो जाती हैं। जिस भाषा ने कायर से कायर व्यक्ति को शौर्य और पराक्रम की प्रतिमूर्ति बना दिया, वह भाषा अनुपम और विलक्षण होगी, इसमें संदेह नहीं होना चाहिए। जीवन और जगत् की वास्तविकता को मूर्त रूप प्रदान करने में डिंगल भाषा बेजोड़ है। चारण कवियों ने सुनी-सुनाई कथा--कहानियों को काव्य के आकर्षक परिधानों में परिवेष्ठित नहीं किया। उन्होंने जीवन और मृत्यु के ताण्डव नृत्य को अपनी आंखों के समक्ष देखा था। यही कारण है कि उनके काव्य में जीवन की वास्तविकता का सजीव विवरण बड़े ही प्रभावशाली ढंग से प्रस्तुत किया गया है।

इतिहास इस सत्य का स्पष्ट प्रमाण है कि यहां के चारण कवियों ने कायर से कायर व्यक्ति के हृदय की निष्क्रियता को, अपने प्रभावोत्पादक काव्य के द्वारा सक्रियता, पराक्रम तथा निडरता की भावना में परिवर्तित कर दिया है। एक हाथ में कलम और दूसरे हाथ में तलवार रखने वाले चारण कवियों ने, अपने सजीव काव्य के द्वारा लोगों के हृदय में शौर्य की अग्नि ही प्रज्वलित नहीं की वरन् संकट के समय केसरिया वाने पहनकर अपनी अद्वितीय शूरवीरता का भी, अद्भुत परिचय प्रस्तुत किया। डिंगल गीत की निम्न पंक्ति में चारण कवियों की शूरवीरता एवं उदारता की ओर संकेत करते हुए उचित ही कहा गया है--

लख पावरा दियरा सवा लख लाखां,
रूपग कहरा संभायां रूक।
चारण मरण पराया चंहरे,
चारण मरण न पाड़ै चूक ।।

राजस्थानी संस्कृति में चारण और क्षत्रिय जाति का अटूट सम्बन्ध रहा है। संकट-विपदा के समय दोनों जातियों ने परस्पर एक-दूसरे की सहायता कर, युग-युगों से चले आ रहे पारस्परिक सम्बन्धों को, अधिक से अधिक प्रगाढ़ बनाने में अपना सहयोग प्रदान किया है। चारण क्षत्रियों के याचक नहीं, सलाहकार, सच्चे मित्र, हितैषी और सहायक थे। शरीर और आत्मा के समान ये दोनों जातियां, जीवन की सभी अवस्थाओं में, एक दूसरे का साथ देती आई हैं। अंतरंग मित्रता, सौहार्द, भ्रातृभाव तथा स्नेहानुभूति जैसी विशेषताओं से प्रभावित होकर महाराजा मानसिंह ने सत्य ही लिखा है--

चारण खत्री भाईयां, ज्यां घर खाग तियाग।
खाग तियागा बाहिरा, त्यां सूं लाग न भाग ।।

क्षत्रियों को कर्तव्य-पथ की ओर ले जाने वाले कवियों का, उनकी योग्यता के अनुरूप यथोचित मान-सम्मान, जमीन-जायदाद, लाख-पसाव तथा करोड़-पसाव इत्यादि सम्मानों से गौरवान्वित किया गया। यह अत्यन्त हर्ष और गौरव की बात है कि राजस्थान में राजा-महाराजा से लेकर साधारण भूस्वामी तक ने अपने-अपने आर्थिक-स्तर के अनुकूल चारण कवियों का सम्मान किया।

राजस्थानी-काव्य एवं तत्कालीन साहित्यिक परिस्थितियों से अनभिज्ञ कुछ विद्वद्जन राजस्थानी काव्य का सम्बन्ध सिर्फ वीर रस से जोड़ते हैं, परन्तु यह दृष्टिकोण भ्रामक और एकाकी है। जैसे-जैसे विविध विषयों से सम्बन्धित साहित्य का शोध-अन्वेषण के द्वारा प्रकाशन हो रहा है, वैसे-वैसे विद्वानों की यह धारणा निर्मूल सिद्ध होती जा रही है। राजस्थानी काव्य में वीर रस की प्रधानता का यह अभिप्राय कदापि नहीं है कि यहां के कवि, वीर-रस के अतिरिक्त जीवन के अन्य पक्षों के प्रति उदासीन रहे। वीर-रस के साथ-साथ शृंगार तथा भक्ति रस की अनुपम रचनाओं का सृजन करने में भी, यहां के कवि अग्रणी रहे हैं। मनोनुकूलकारी प्रभाव के कारण शृंगार रसों का राजा कहलाता है परन्तु जोश और उत्साह के अभाव में शृंगार की सरसता शनैः शनैः नीरसता में परिवर्तित होने लगती है। उत्साह के अभाव में महानतम उद्देश्यों की पूर्ति नहीं की जा सकती। यही कारण है कि अन्य रसों की तुलना में वीर रस को अधिक महत्व प्रदान की गई है। भरतमुनि ने नाट्यशास्त्र में 'उत्साहः सर्वरसेषु सारभूतः मानसी क्रिया' कथन द्वारा वीरत्व के महत्व का प्रतिपादन किया है। साहित्य दर्पणकार विश्वनाथ ने भी 'उत्तमप्रकृतिर्वीरः' लक्षण द्वारा वीर-रस को अन्य रसों से सर्वोपरि बतलाया है। वीर-रस को सर्वश्रेष्ठ मानने वाले विद्वानों का दृष्टिकोण शत-प्रतिशत सही है क्योंकि जीवन जहां संघर्षमय होता है वहां उसकी उपयोगिता और भी अधिक बढ़ जाती है। सीधे सहज रास्तों पर चलकर चरम लक्ष्यों की सिद्धि नहीं होती। महत्वपूर्ण उद्देश्यों को फलीभूत करने के लिए, असाधारण पथ पर कदम बढ़ाने पड़ते हैं। मौत को जीवन का प्रतिफल समझने वाले ही मुश्किल से मुश्किल काम को आसान बनाने में सफल हो सकते हैं। अपने अस्तित्व को खोए बगैर बीज अंकुरित नहीं होता, उसी प्रकार कुछ पाने के लिए कुछ न कुछ खोना पड़ता है। स्वार्थी और कायर व्यक्ति ऐसा नहीं कर पाते। ऐसे असाधारण कर्म, असाधारण व्यक्तियों के द्वारा ही सम्पादित होते हैं जिन्हें शूरवीरों की संज्ञा से सम्बोधित किया जाता है। राजस्थान के शूरमाओं के कार्यकलापों का अध्ययन करते समय विदित होता है कि इनमें शौर्य के गुणों का कहीं लोप नहीं हुआ। जीवन के प्रत्येक मोड़ पर राजस्थानी शूरमाओं में अपूर्व उत्साह, स्वाभिमान और बलिदान की भावना विद्यमान रहीं। यही कारण है कि निरन्तर संकटों से घिरे रहने पर भी शूरवीर

वाले राजस्थान के शृंगार रसात्मक साहित्य के आस्वादन से अपूर्व आनन्द तथा स्वाभिमान की उपलब्धि होती है। जीवन की वास्तविकता के मध्य सौन्दर्य और प्रेम का ऐसा अनोखा चित्रण राजस्थानी साहित्य की अपनी महत्त्वपूर्ण विशेपता है।

राजस्थानी चारण-काव्य वस्तुतः वीर, शृंगार और भक्ति का संगम-स्थल है। यहां के साहित्य में आद्योपान्त एक प्रकार की पावनता के दर्शन होते हैं। यहां के वीर-साहित्य में तेजोमय वीर बनाने की शक्ति है, शृंगार-साहित्य में सुरम्य प्रणय-धारा बहाने की क्षमता है, करुण-साहित्य में पत्थर पिघलाने का जादू है और शान्त-साहित्य में कैवल्यमान करने की करामात है।

भाषा के आधार पर राजस्थान में निर्मित काव्य को तीन भागों में विभाजित किया जाता है—

(१) डिंगल
(२) पिंगल और
(३) शुद्ध व्रज भाषा

चारण कवियों ने डिंगल और पिंगल दोनों विधाओं में उत्कृष्टकोटि के काव्य का प्रणयन कर अपनी बहुमुखी प्रतिभा का परिचय दिया है परन्तु प्रादेशिक भाषा होने के कारण डिंगल भाषा के प्रति उनका अनुराग सहज और स्वाभाविक ही था। यही कारण है कि डिंगल भाषा को राजस्थानी साहित्य की साहित्यिक तथा परिनिष्ठित भाषा बनने का गौरव प्राप्त हुआ।

जीवन और जगत् से सम्बन्धित कोई भी कोना डिंगल-काव्यकारों की सूक्ष्म दृष्टि से अछूता नहीं रहा। डिंगल के साहित्यकारों ने गद्य, पद्य और वचनिका (चम्पू)—अर्थात् साहित्य की सभी विधाओं में विपुल परिमाण एवं उच्च साहित्यिक विशेषताओं से युक्त साहित्य का प्रणयन कर अपनी अद्वितीय सूझबूझ, काव्य कुशलता एवं विद्वता का परिचय दिया है। दिन-प्रतिदिन जो हस्तलिखित ग्रंथ प्रकाश में आ रहे हैं, उनसे ऐसा प्रतीत होता है कि डिंगल के समकक्ष साहित्य पिंगल में तो क्या संस्कृत भाषा में भी शायद न हुआ हो। गुण और परिमाण दोनों ही दृष्टियों से राजस्थानी साहित्य एक अनुपम उपलब्धि के समान है।

वि० सं० १६५० से १८०० तक का काल राजस्थानी साहित्य का स्वर्णकाल है। इस काल में कवियों ने उच्चकोटि के काव्य का सृजन किया। आलोच्य-काल के विलक्षण प्रतिभा-सम्पन्न कवियों में केशवदास

गाडण, कविवर करणीदान, वीरभान रतनू, [illegible] कवि मान तथा महाकवि वृन्द के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय [illegible] कवियों ने ऐतिहासिक प्रबन्ध, मुक्तक एवं स्फुट रचनाएं [illegible] और साहित्य की जो अमूल्य सेवाएं की है उन्हें विस्मृत नहीं [illegible] सकता ।

डिंगल में निर्मित गीत राजस्थान की सांस्कृतिक [illegible] हैं। इतिहास शूरवीरों के अपूर्व त्याग और बलिदान को [illegible] सकता है, जनमानस के स्मृति-पटल से शूरवीरों की शौर्य [illegible] हो सकती हैं परन्तु डिंगल गीतों की यह उल्लेखनीय विशेषता है कि [illegible] से साधारण व्यक्ति के कार्यकलापों में भी उन्होंने शौर्य, दानवीरता, [illegible] अथवा स्वाभिमान और त्याग की झलक देखी तो उसे चिरस्मरणीय [illegible] रखने का प्रयत्न किया। आलोच्य काल में राजस्थान के प्रायः सभी [illegible] ने डिंगल गीतों के रूप में किसी न किसी शूरवीर के [illegible] सराहा है। ऐतिहासिक तथ्यों की प्रमाणपुष्ट जानकारी [illegible] के साथ-साथ काव्य-शिल्प की दृष्टि से भी डिंगल गीत सर्वोत्तम [illegible] राजस्थानी साहित्य के आलोचकों ने डिंगल गीतों को प्रशस्तिपरक [illegible] कर उनके महत्व को कम करने की चेष्टा की है, परन्तु [illegible] अल्पज्ञता का ही सूचक कहा जा सकता है। गीतों को [illegible] वाले आलोचकों की दृष्टि-सीमा से शायद तत्कालीन परिस्थितियां [illegible] सी हो गई प्रतीत होती है। तत्कालीन सामाजिक परिस्थितियों और राजनैतिक दुष्प्रभाव को कम से कम करने के लिए जिन [illegible] व्यक्तिगत स्वार्थों की आहुति दे कर तथा आततायियों से [illegible] प्राणों को न्यौछावर किया, ऐसे असाधारण योद्धाओं के [illegible] अमरत्व प्रदान करना, प्रशस्ति-प्रदर्शन अथवा [illegible] वास्तविकता को अभिव्यक्त करना है। फिर राजस्थान के कवियों [illegible] राजा-महाराजा अथवा अपने आश्रयदाताओं का कीर्ति-वर्णन [illegible] किया है अपितु साधारण से साधारण व्यक्ति में भी यदि [illegible] प्रकट हुआ है तो कवियों ने उसे अपने गीत का विषय [illegible] यह कहना कि चारण कवियों ने अपने आश्रयदाताओं की [illegible] हैं, सर्वथा असंगत दृष्टिकोण ही कहा जाएगा। [illegible] कवियों ने गीत आदि स्फुट रचनाएं की हैं परन्तु [illegible] कोई सानी नहीं है। कविवर हुक्मीचन्द के गीतों [illegible]

ज्योतिष, तन्त्र-मन्त्र, भाषा एवं [illegible] हुक्मीचन्द के गीतों को डिंगल काव्य-पारखियों ने [illegible] से विभूषित किया है—

खड़िये रा आखर खरा, रूपक राड़ि रीत ।
हुकमीचंद रा हालिया, गुरड़ वचां जिम गीत ।।

"गीत गीत हुक्मीचन्द कहगो, हमैं गीतड़ी गावो' आदि उक्तियों से हुक्मीचंद की गीत–प्रणयन–प्रतिभा का परिचय मिलता है ।

किसी भी भाषा का स्वरूप अकस्मात नहीं बदलता, भाषा के स्वरूप-परिवर्तन में सदियां लग जाती हैं। राजस्थानी दोहों के प्रारम्भिक स्वरूप पर जब हम दृष्टिपात करते हैं तो वे अत्यधिक अपभ्रंशमय दिखाई देते हैं। दोहों का उत्पत्तिकाल सातवीं अथवा आठवीं शताब्दि माना गया है। दोहा छंद राजस्थानी काव्य में अत्यन्त प्राचीनकाल से प्रयुक्त होता आया है, इसी आधार पर इन्हें राजस्थानी साहित्य का सबसे प्राचीनतम प्रकार माना जाता है। राजस्थानी आदिकाल की अपेक्षा अन्य कालों में दोहा-प्रयोग परम्परा का तीव्र गति से विस्तार हुआ और १६ वीं शताब्दी तक आते आते दोहा-छन्द राजस्थानी साहित्य का अनिवार्य अंग बन गया। मध्यकालीन राजस्थानी काव्य रचनाओं में दोहा-छन्द का प्राचुर्य इसकी लोकप्रियता का स्पष्ट प्रमाण है। वि० सं० १६५० से १८०० तक का काल राजस्थानी दोहों का भी उत्कर्ष काल है। राजस्थान के प्रायः सभी कवियों ने दोहा-छन्द में अपने भावों का निरूपण किया । इस काल में ज्ञात–अज्ञात कवियों द्वारा इतने अधिक परिमाण में दोहे लिखे गये कि उनका संग्रह-कार्य अभी तक अपूर्ण बना हुआ है ।

चारण कवियों द्वारा निर्मित आलोच्यकाल का भक्तिकाव्य भी अपूर्व और महत्वपूर्ण विशेषताओं से परिपूर्ण है ।

रामभक्ति काव्य परम्परा के अन्तर्गत् भक्त कवि माधोदास दधवाडिया का प्रमुख स्थान माना जाता है। माधोदास उच्चकोटि के भक्त होने के साथ-साथ डिंगल साहित्य के प्रकाण्ड पंडित भी थे । इनके द्वारा लगभग सोलह सौ छन्दों में निर्मित 'रामरासौ' नामक वृहत काव्य–ग्रंथ उपलब्ध हुआ है जिसमें मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्री राम की कथा का विवेचन किया गया है। छन्द वैविध्य, भाषा - शिल्प, प्रवन्धात्मकता एवं काव्य सौष्ठव की दृष्टि से यह राजस्थानी का सर्वप्रथम तथा सर्वश्रेष्ठ महाकाव्य माना जाता है।

इसी प्रकार श्रीकृष्ण को अपना आराध्य मानकर उनकी भक्ति में अपने काव्य–प्रसूनों की शुभांजलि अर्पित करने वाले भक्त कवियों में चारण कवि सांया झूला का महत्वपूर्ण स्थान है। सांया जी द्वारा निर्मित 'रुकमणी हरण' तथा 'नाग दमण' भाषा, शैली तथा काव्योचित विशेषताओं से ओत-

प्रोत होने के कारण धार्मिक, दार्शनिक एवं साहित्यिक दृष्टियों से राजस्थानी साहित्य की अनूठी रचनाएं मानी जाती हैं।

जोधपुर के महाराजा अजीतसिंह भी काव्य-मर्मज्ञ, भक्त और डिंगल भाषा के अच्छे विद्वान थे। उन्होंने भी काव्य-प्रणयन के लिए भगवान [illegible] और उनकी भक्त-वत्सलता का गुणगान किया।

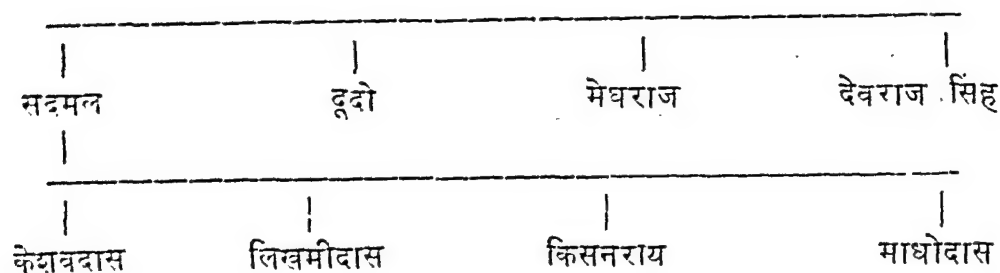
आलोच्यकाल के अन्य कृष्णभक्त कवियों में [illegible], [illegible], तेजसिंह, शंभूदान और कवयित्री सोढ़ी नाथी के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं।

राजस्थानी चारण काव्य वस्तुतः एक सागर के समान है जिसमें अनगिनत नदियां आकर समाहित और एकाकार हो गई हैं। यहां के चारण कवियों ने जीवन के सभी सुप्त-असुप्त पक्षों को छूकर सिद्ध कर दिया है कि वे मात्र वीरता और शौर्य के ही आराधक नहीं हैं वरन् जीवन के अन्य रसों के प्रति भी उनके हृदय में मानवोचित अनुराग-[illegible] विद्यमान है। इस प्रकार से कहा जा सकता है कि विक्रम संवत् १६५० से १८०० में निर्मित चारण-काव्य, भाषा-शिल्प, काव्य सौष्ठव, छन्द वैविध्य तथा अलंकार आदि की दृष्टि से अत्यन्त सुन्दर, आकर्षक एवं प्रभावोत्पादक है। प्रस्तुत अध्याय में विक्रम संवत् १६५० से १८०० की कालावधि में राजस्थानी काव्य-प्रणयन करने वाले सभी कवियों का व्यक्तित्व एवं कृतित्व प्रस्तुत किया जा रहा है। इन राजस्थानी रचनाकारों ने उच्चकोटी का ऐतिहासिक काव्य लिखकर साहित्य के साथ-साथ इतिहास की भी [illegible] सेवा की है।

केशवदास गाडण

डिंगल-भाषा के प्रसिद्ध कवियों में केशवदास गाडण का प्रमुख स्थान है। इनके पिता सदमल मारवाड़ के चारणों की शाखाओं से [illegible] थे। पुष्कर(अजमेर) में स्थित करणी माता के मंदिर के पुजारी और [illegible] के गुरु महात्मा श्री रामदासजी पाराशर ब्राह्मण की बही में पृष्ठ [illegible] पर गाडण जाति की वंशावली का उल्लेख किया गया है जो इस प्रकार है[1]

१ राजस्थानी शब्द कोश, भूमिका – श्री सीताराम लालस, पृ० [illegible]



गाडण जाति की नवमी पीढ़ी में सदमल उत्पन्न हुए जिनकी काव्योचित प्रतिभा से प्रसन्न होकर मारवाड़ राज्य के प्रधान गोविन्ददास भाटी उन्हें अपने साथ जोधपुर ले आये। जोधपुर-नरेश शूरसिंह ने सदमल की काव्य प्रतिभा तथा कुशाग्रता से प्रभावित होकर उन्हें दरबार में उचित स्थान देने के साथ-साथ संवत् १६५३ में लवेरा के समीप स्थित छिड़िया ग्राम देकर सम्मानित किया।[1] डॉ० मोतीलाल मेनारिया ने इन्हें सोजत परगने के चिड़िया नामक गांव का निवासी बताया है।[2] यह गांव आज भी सदमल के वंशजों के पास विद्यमान है।

केशवदास भी अपने पिता के समान प्रतिभा-सम्पन्न थे। यही कारण है कि उन्होंने अपने काव्य-चातुर्य से जोधपुर-नरेश का हृदय जीतकर राज्याश्रय प्राप्त कर लिया। केशवदास जोधपुर के महाराजा गजसिंह (सूरसिंह के पुत्र) के आश्रित थे। महाराजा गजसिंह ने अन्य प्रमुख कवियों के साथ इनको भी लाख पसाव देकर सम्मानित किया था।[3]

कवि की मुक्तक रचनाओं के आधार पर इनका रचनाकाल १६५० विक्रम से १६९० के आसपास ठहरता है। कवि की जन्मतिथि के बारे में प्रामाणिक जानकारी के अभाव में अभी तक मतभेद बना हुवा है।

---

[1] मुहता नैणसी ने अपनी गांवों की तवारीखों में छीड़िया गांव के बारे में लिखा है —

छीडियो राजा श्री सूरसिंघ जी री दत्त गाडण।
मंहू हुदावत नूं हमें माधोदास बेटो सदूरो चारण॥

[2] राजस्थानी भाषा और साहित्य — डॉ० मोतीलाल मेनारिया, पृ० १५८

[3] गाडण केसव गुणे भवे पंचम लख बाइक — सूरजप्रकास पृ० ९

राजस्थान के चारण समाज में एक किंवदन्ती प्रचलित है जिसके अनुसार गुरु गोरखनाथ ने बाल्यावस्था में केशवदास को दर्शन देकर काव्य-प्रणयन की शक्ति प्रदान की थी।[1] यही कारण था कि गृहस्थ होते हुए भी केशवदास गेरुआ वस्त्र पहनते थे। उच्चकोटि के कवि होने के साथ-साथ केशवदास ईश्वर के परम भक्त भी थे।

अपने भक्ति विषयक ग्रंथ निसांणी विवेक वारता में कवि ने अपने समकालीन कवि ईसरदास द्वारा निर्मित हरिरस ग्रंथ की प्रशंसा करते हुए लिखा है —

जग प्राजळ तौ जाण, अघ दावानल ऊपरा ।
रचियौ रोहड़ रांण, समंद हरिरस सूरजन ॥

उपरोक्त सोरठे के उत्तर में महात्मा ईसरदास ने निसांणी विवेक वारता की प्रशंसा में निम्नलिखित सोरठा कहा —

निसाणंद नीसाण, केसव परमारथ कियो ।
पोहस्वारथ परमांण, सो वोसोतर वरण सिर ॥

केशवदास की मृत्यु के सम्बन्ध में भी इतिहास मौन है। किन्तु संवत् १७०१ में अमरसिंह राठौड़ की आगरा में वीरोचित मृत्यु के पश्चात् कवि द्वारा अमरसिंह राठौड़ तथा बळू चंपावत के बारे में लिखे हुए गीतों आदि से कवि के दीर्घायु होने का अनुमान लगाया जा सकता है। केशवदास की निम्नलिखित रचनाएं उपलब्ध हुई हैं —

(१) गजगुण रूपक बंध
(२) निसांणी विवेक वारता
(३) राव अमरसिंह रा दूहा
(४) गज गुण चरित्र
(५) महादेव जी रा छंद
(६) छन्द श्री गोरखनाथ
(७) फुटकर वीर गीत, दोहे और कवित्त आदि।[2]

---

1 सांदू चैनाकृत जालन्धरनाथ चरित्र में लिखा है —
किवी उभै करलाह दवो भीम [illegible]
गाडण केसव मधो [illegible]

2 हस्तलिखित प्रति, क्रमांक १२६, [illegible]

गजगुण रूपक बन्ध—

गजगुण रूपक वंध[1] डिंगल भाषा का वीर रस से परिपूर्ण ऐतिहासिक ग्रंथ है। इसमें कवि ने जोधपुर-नरेश गजसिंह की दक्षिण–विजय के समय प्रदर्शित शूरवीरता का विस्तृत वर्णन किया है। केशवदास गजसिंह द्वारा लड़े गये सभी युद्धों में उनके साथ थे। इसीलिए गजगुण रूपक वंध के वर्णन सरस, प्रभावोत्पादक तथा वर्णित दृश्य की सजीवता में, चार चांद लगा देने वाले हैं। गजगुण रूपक वंध का निर्माण कवि ने दोहा, कवित्त, गाहा, अड़ल मयाणा इत्यादि सब मिलाकर लगभग एक हजार छंदों द्वारा किया है। काव्यकृति का रचनाकाल संवत् १६८१ है—

सोळह सह संवत हुए, जोगणपुर चाळै।
समै एकासियै मास, काती वड़ाळै ॥

काव्य का आरम्भ कवि ने मंगलाचरण से किया है। मंगलाचरण के पश्चात् महाराजा गजसिंह की वंशावली का क्रमिक वर्णन है। शूरवीर योद्धा में वाल्यकाल से ही वीरोचित-गुण प्रकट होने लगते हैं। गजसिंह द्वारा वाल्यावस्था में प्रदर्शित अतुल वल–पराक्रम का उल्लेख करते हुए कवि ने लिखा है—

गाल मेर गज भीम, महाजोधा ऊतळी वळ।
भुजा दंड परचंड, जेम गंगाजळ उजळ ॥
किरणा कळ कळ कमळ, सकळ झाळाहळ निम्मल।
तेज पूंज राजांन, धीर कांधोधर धम्मल ॥

कवि ने अपने चरित्र नायक की जन्मजात वीरता, अद्वितीय सौन्दर्य एवं उत्तरोत्तर वढ़ती हुई अवस्था का अत्यन्त सुन्दर, सजीव तथा अलंकारिक वर्णन करते हुए लिखा है—

कमळ वीय ससि-कळा, कळा वडती जग वदै।
कळाहीण खल हुवै, जेम निस पूनिम चंदै।

---

[1] हस्तलिखित प्रतिलिपि सेठ सूरजमल जालान, पुस्तकालय, कलकत्ता।

भुज विसाल लंकाल, वरण कानीहिन सुंदर ।
भरि माते भाद्रवै, जाणि ऊगो भाणंकर ।

महाराजा शूरसिंह के युद्ध में जाने पर अपने पिता की अनुपस्थिति में गजसिंह ने वड़ी कुशलता से राज्य की वागडोर सम्भाली तथा प्रारम्भिक अवस्था में ही सीसोदिया, वालेसा तथा सींघल आदि राजपूतों को परास्त कर, अपने शौर्य का वेजोड़ परिचय दिया—

सोलंकी सारे मछर मारे ढंढोले पहाड़ ।
वालीसा वोए फौजां ढोए मलवट्टे मेवाड़ ।
सींघल संघारे वोल उतारे मेले दल कलि मूल ।
खांगे खूमांणां रेहलि निज थाणां नाडूल ।।

अवसर मिलने पर कवि ने प्रकृति के विविध उपादानों का वर्णन कर प्राकृतिक-सुषमा के प्रति अपने सहज आकर्षण का भी परिचय दिया है । नगर, वाजार, तालाव तथा उपवनों के वर्णन ने काव्य की सुन्दरता में चार चांद लग गये है । उपवन के चित्रण में कवि के वस्तु-वर्णन का चमत्कार देखिए—

भुजंग वेलि चांदनी न कुंज में तमाल ए ।
अनेक वृक्ष अन्नि, अन्नि रूप में रसाल ए ।
चलांणि पत्रियांणि वट्ट आंवली अरांभ ए ।
वकांणि नींव में वहत्त रविग्रहे अलंभ ए ।।

हिन्दुस्तान के वादशाह जहांगीर, गजसिंह के शौर्यपूर्ण व्यक्तित्व से बहुत प्रभावित हुए । उन्होंने शाही दरवार में गजसिंह को अनेक बार सम्मानित किया था । ज़ालोर-शासक के कुप्रशासन से क्रुद्ध होकर जहांगीर ने जालोर का शासन गजसिंह के पिता शूरसिंह को सौंप दिया । जहांगीर द्वारा प्रदान किये गये अधिकार को कार्यरूप में परिणित करने के लिये युवराज गजसिंह ने जालोर पर सुव्यवस्थित चढ़ाई कर दी । सम्पूर्ण काव्य में युद्ध-वर्णन के प्रसंग इस कवि के वीर रस के प्रति अनुराग के परिचायक हैं । गजसिंह की सेना, शत्रु की सेना, सैनिकों की साज-सज्जा तथा घोड़े-हाथियों के वर्णन द्वारा कवि ने युद्ध-क्षेत्र का वड़ा प्रलयंकारी दृश्य उपस्थित कर दिया है—

जवर जंग जंत्र में अनंत आरावा छूटै ।
वोम गोम धड़हड़ै, टूक पाहारां टूटै ।।
गडि गडि गोळा नाळि, छिल फूटै लिगि अंवर ।
अगन वांण ऊछळे, धोम धूंधूं घर अंवर ।।

बिहारी मुसलमानों के साथ हुए इस घमासान युद्ध में गजसिंह ने शत्रुओं के दांत खट्टे कर, विजयश्री का वरण किया था—

मिळे कोट खग चोट, वडा कमधां वरियांमां।
पडै राडि पठ्ठांन, चंद रवि चाडे नांमां॥
जाळंवर पलटियौ, वडौ रिण जंग भारथ करि।
वीहारी विढ़ दियौ, कियौ साकौ किणिया गिरि॥

महाराजा शूरसिंह की मृत्यु के पश्चात् विक्रम संवत् १६७६ में गजसिंह राजगद्दी पर बैठे। अपने राज्य की शासन-व्यवस्था आसोप ठाकुर राजसिंह को सौंपकर, अपने पिता द्वारा दक्षिण के उपद्रवियों के विद्रोह को दबाने के अपूर्ण कार्य को पूर्ण करने के लिए गजसिंह विशाल सेना लेकर निकल पड़े। बुरहानपुर जाकर गजसिंह ने शत्रुओं को समूल नष्ट कर डाला। गज-गुण-रूपक-बंध वस्तुतः महाराजा गजसिंह की दक्षिण-विजय का कीर्ति-काव्य है। विविध युद्धों में गजसिंह द्वारा प्रदर्शित पराक्रम का वर्णन ही कवि का लक्ष्य रहा है। युद्ध-विजेता गजसिंह का प्रशस्ति-गान करते हुए कवि केशवदास ने लिखा है—

दळ भंजे दिखणाधरा, की गज वंध हवक्क।
गा नर सिंध संपेखियौ, भूतां तण कटक्क॥
दळ भंजे डेरा फरळि, गमि दखणीं दहवाट।
गज केसरी धांसाड़ियौ, दोइणां वाळे दाट॥

माया-मोह के सांसारिक उपादानों से विरक्त सन्यासियों का जिस प्रकार सांसारिक सुख-दुख से कोई सम्बन्ध-सरोकार नहीं रह जाता, उसी प्रकार युद्ध के लिये कूच करने वाले सैनिक भी, सांसारिक माया-मोह के बन्धनों से पूर्णतया विमुक्त हो जाते हैं। सांसारिक उपादानों का ध्यान छोड़कर, विजय-प्राप्ति की अटूट अभिलाषा ही उन्हें विजयी बनाती है। सेनाओं के प्रयाण, साज-सज्जा तथा युद्ध भूमि में आक्रमण-प्रत्याक्रमण का वर्णन करते समय राजस्थानी साहित्य में सैनिकों की उपमा योगियों से दी जाती है। ये मौलिक सूझ-बूझ कवि केशवदास गाडण की ही है—

असरंग विभूत सनाह उपावै, लोह छत्तीस सिघार लियं।
सिव बारह पंथक तेरह साखा 'केहरि' गोरखरूप कियं॥

कमधज्ज तजे मनमोह कायाचौ, वीर निमोह [illegible] ।
ततले निरवांण क राजतियाग, गोपीचन्द [illegible] ॥[1]

काव्य-रचना में सर्वत्र वीर-रस का प्राधान्य है। वीर रस के [illegible] कवि ने यत्र-तत्र शृंगार-रस का वर्णन भी किया है। युद्ध-विजय [illegible] गजसिंह के स्वागत के समय के वर्णन में, कवि ने अपनी लेखनी को [illegible] रस में डुबाते हुए लिखा है—

गजबंधी गढ़ आवियो, मेरो धाऊ [illegible] ।
जोवैं गांहो जाळियां, गोरी मांग [illegible] ॥
गज बंधी वाधाविजै, मोती [illegible] ॥
लूण उतारैं राइ-घी, चढ़ियै [illegible] ॥

इसी प्रकार अपूर्व सौन्दर्यमयी षोडसियों के नख-शिख [illegible] कवि का शब्द-चयन अत्यन्त कमनीय है —

चपळ मेत्र सारंग, रेख भ्रूहां [illegible] ।
दीपक नासा दिरंन, [illegible] ॥
डंसण बीज दाडंम, वेणि-[illegible]-भुयंगम ।
भटियाणी वर कमध, [illegible] गंगानदि संगम ॥

प्रियतम के आते ही प्रियतमा की समस्त अभिलाषाएं [illegible] हो जाती हैं —

सबै मनोरथ पूगिया, [illegible] ।
जांण कमोदिणि खिल उठे, तन-मन [illegible] ॥

जहांगीर के पुत्र खुर्रम द्वारा विद्रोह की सूचना [illegible] युद्ध के लिए प्रस्थान करते हैं। खुर्रम, [illegible] में अपनी सेना [illegible] कर दिल्ली पर आक्रमण की योजना बनाकर, [illegible] परन्तु मार्ग में गजसिंह की विशाल सेना, [illegible] की दीवार बन जाती है। दोनों सेनाओं में [illegible] युद्ध [illegible] —

---

१ गजगुण रूपक बंध —सम्पादक डॉ॰ [illegible], भूमिका, पृ॰ [illegible] प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर द्वारा प्रकाशित

भयानक हेक करै भराथ ।
हिका मसतक्क पड़ै पग हाथ ॥
वैणी-डंड हेका वीखरियाह ।
लुटे भुंई हेक लुही भरियाह ॥

XX XX XX

खळहळे रत्त परनाल खाळ, डोलियां पडै धड़ जूह डाल ।
करड के कंध संधाण कट्ट, फरडक्के फीफरां ग्राल फट्ट ॥

देखते ही देखते सम्पूर्ण समर-भूमि श्मशानवत् दिखाई देने लगती है। भीषण रक्त-पात के वाद अन्ततः खुर्रम की सेना तितर-वितर हो जाती है।

कवि केशवदास ने गजगुण रूपक वंध कृति में ऐतिहासिक घटनाओं को सुन्दर ढंग से समायोजित कर अपने काव्य-चातुर्य का परिचय प्रस्तुत किया है। सम्पूर्ण-काव्य अनुप्रास की छटा से सुसज्जित है—

कटै कडियाल वहे करमाळ ।
कट्टक्के कोपर कंध कपाळ ॥

वयण सगाई (वर्ण-मैत्री) डिंगल-काव्य में प्रयुक्त होने वाला सर्वाधिक लोकप्रिय अलंकार है। राजस्थानी के सभी कवियों ने न्यूनाधिक रूप से इसका प्रयोग कर अपने काव्य-सौष्ठव को वढ़ाने का प्रयत्न किया है। कवि केशवदास गाडण के काव्य में भी वयण-सगाई की सुन्दर छटा देखी जा सकती है—

हेम में जड़ित हीर, जूग्रले मौजा जंजीर ।
दूसरे गंगा दवाढ़, जड़ी कड़ी जमदाढ़ ॥

भाषा-शैली और ऐतिहासिकता की दृष्टि से गजगुण रूपक वन्ध राजस्थानी साहित्य की श्रेष्ठ काव्यकृति है जिसमें काव्य की समस्त विशेषताएं अपने चरम उत्कर्ष पर हैं। प्रभावशाली भाषा-शैली के साथ ऐतिहासिक घटनाओं के समायोजन के कारण काव्यकृति ऐतिहासिक दृष्टि से भी उपयोगी है।

केशवदास द्वारा लिखी हुई रचनाओं में मुक्तक तथा प्रवन्ध दोनों प्रकार की रचनाएं मिलती हैं—

विवेक वार निसाणी—

यह निसांणी छन्दों में लिखी २८ छन्दों की शान्त रस प्रधान कृति है जिसमें कवि ने वेदान्त वर्णन किया है। यह कृति साधु-समाज में वहुत लोकप्रिय रही है, इसका प्रमाण है कृति की अनेक प्रतिलिपियों का उपलब्ध

होना ।[1] कुछ अलोचकों ने इस ग्रंथ को वारता के रूप में स्वीकार किया है परन्तु इसे वारता ग्रंथों के अन्तर्गत रखना अनुपयुक्त प्रयास ही कहा जा सकता है । 'वार' और 'वारता' का कोई तात्विक सम्बन्ध नहीं है । आलोचकों ने शायद भ्रमवश ऐसा लिख दिया हो। वार निसाणी, निसाणी छन्द का ही एक रूप है। 'रघुनाथ रूपक गीतां रो' में वार निसाणी के लक्षण बताते हुए लिखा गया है —

कर पहली पनरै कळा, पनरै अवर प्रवेस ।
रगण अंत मोरै ररै, वार निसाणी वेस ॥[2]

राजस्थानी साहित्य के समान पंजाबी साहित्य में भी वार निसाणी एक लोकप्रिय छन्द रहा है। इसमें सजित चंडी दी वार, गुरु नानक दी वार, बंदा बैरागी री वार और जयमल पतै दी वार आदि पंजाबी साहित्य की महत्त्वपूर्ण रचनाएं हैं ।[3]

विवेक वार निसाणी की भाषा राजस्थानी है, परन्तु विशुद्ध नहीं। कृति में राजस्थानी भाषा के साथ पंजाबी और ब्रज भाषा के कुछ शब्द भी घुल-मिल गये हैं। उदाहरण के लिये पंजाबी के 'दां' और 'दा' प्रयोगों के प्रयोग निसांणी छन्दों के लिये अनिवार्य से हो गये हैं। वेदान्त दर्शन के ब्रह्मसूत्र का आधार शांकर भाष्य को बनाया है। शंकर के विशुद्ध अद्वैतवाद के साथ भक्ति भावना का संपुट भक्तकवि के समन्वयवादी दृष्टिकोण का संकेत देता है । लोकोक्तियों एवं मुहावरों के सटीक प्रयोग से भाषा और भाव-सौन्दर्य अधिक रसग्राह्य बन गये हैं। जटिल-दार्शनिक विषय को कवि ने इतने सरल तथा सहज रूप में प्रस्तुत किया है कि साधारण से साधारण स्तर का पाठक भी काव्य के मर्म को समझते हुए रसास्वादन में तल्लीन हो सकता है। उदाहरण के लिए एक निसाणी प्रस्तुत की जा रही है —

फूलां मध्यै वासना तिल तेल पीछाना ।
वैसन्नर लकड़ पाखाण तिम लोह तुराना ।

---

[1] (अ) अभय जैन ग्रंथ भंडार, बीकानेर, प्रति संख्या २५
(ब) पुरालेख विभाग बीकानेर बं ३४ फा० ४८
[2] रघुनाथ रूपक गीतांरो – श्री महताब चन्द खारैड़, पृ० २३८
[3] राजस्थानी साहित्य संग्रह (प्रथम भाग) प्रस्तावना–डॉ० मनोहर शर्मा पृ० [illegible]

थरिण मझि खीर सरीर जिम गुदरतिक माया ।
आठां अंगा मझली तत पंचै काया ।
गोरस चोपड़ एकठा दोनूं एक दिखाया ।
सूरिज घाम संजोइया जिम अगन उन्हाया ।
जिम चेतन मज्झे पवन मन ही मज्झि माया ।
आदर खाणी उदवुदा जिम वीज वंधाया ।
कांसी माहे गैवका जिम सवद सुणाया ।
पाणी चंद प्रतिविव जिम दरपण छाया ।
देवां देतां दाणवां एह ग्यान द्रिढ़ाया ॥
विन खोज्यां पाया नहीं खोज्या जिहां पाया ।
एकणि ठाहि अल्लाह कूं किण ही न वताया ।
घट-घट मज्झे तूं रहै भर-पूर समाया ।

इति श्री केसवदास विरचितं विवेक वार चतुर्थी निसाणी ॥४॥

छन्द श्री गोरखनाथ[१] —

इस रचना में कवि ने गुरु गोरखनाथ की महत्ता का प्रतिपादन करते हुए लिखा है —

त्रिगुण तत पच्चीस, भेद पचास भणिजै,
पंच व्योम त्रिण सुंनि, पंच तहां अगनि पुणिजै,
पंच मुद्रा खट कमळ, पोडसै खंभ अभ्यंतरि,
सपत धात अष्टांग, नाडि नव कोठा वीहतरि,
साधिक असाध काया सभंग, मति अगाधि पति जोगसुर ।
सिघनाथ जयो केसव सुकवि, गोरख आदि अनादि गुर ॥

छन्द श्री गोरखनाथ रचना के आधार पर सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है कि कवि केशवदास के हृदय में सिद्ध गुरु गोरखनाथ के प्रति अगाध श्रद्धा थी।

---

[१] हस्तलिखित प्रति क्रमांक १२६, अनूप संस्कृत लाइब्रेरी, बीकानेर

छन्द महादेवजी रा[1] —

यह ३३ छन्दों की कृति है जिसमें भगवान शंकर का स्तुति गान किया गया है। कवि ने महादेव के वस्त्राभूषण, रूप-सौन्दर्य, वाहन, गंगा, चन्द्रमा [illegible] एवं पार्वती इत्यादि का अत्यन्त प्रभावोत्पादक वर्णन किया है। उदाहरण [illegible]—

जटा मुकट गंगा जागेसं, रारि हुताम [illegible] [illegible] ।
संकर हार भयंकर सेसं, ईसाणंद रूप [illegible] ॥ १ ॥
करगे घारण स्त्रोड कपाळं, मंडति कंठि [illegible] में [illegible] ।
वेस अनेक महाविकराळं, कामदहण जीपण [illegible] ॥ २ ॥
अद्भुत रूप उभै सुर आराण, [illegible] [illegible] नेत [illegible] ।
विमल महावल धमळज वाहण, ईसाणंद नमो [illegible] ॥ ३ ॥
वसण मुसांणे कासीवासी, नीलकंठ – [illegible] [illegible] ।
अगर अगोचर जोग अभ्यासी, रात्रण नाद वंध [illegible] ॥ ४ ॥

कवि केशवदास गाडण कृत राव अमरसिंघ रा दूहा नागौर के [illegible] राव अमरसिंह राठौड़ के पराक्रम की अंतिम घटना-विषयक [illegible] इतिहास-प्रसिद्ध घटना है कि राव अमरसिंह ने शाहजहां के [illegible] की हवेली में लगे दरवार में वख्शी सलावतखां द्वारा [illegible] तत्काल अपनी कटारी से ढेर कर दिया था। यह घटना वि० सं० [illegible] श्रावण शुक्ला २ की है।[2]

वस्तुतः सिंह और क्षत्रिय को 'तू' कहना भी जहां गाली [illegible] हो, उस प्रदेश की वीर परम्परा में जन्मे किसी [illegible] भरे-दरवार में गाली दे, तो ऐसे व्यक्ति की मृत्यु [illegible] अमरसिंह राठौड़ और सलावत खां के मध्य घटित हुई थी।

राव अमरसिंघ रा दूहा एक खण्डकाव्य है जिसमें [illegible] अत्यन्त महत्त्वपूर्ण सामग्री संकलीन है।

---

[1] केशवदास नामक दो चारण कवि — श्री [illegible] जुलाई १९६५, पृ० २४

[2] (अ) मारवाड़ का मूल इतिहास – [illegible]
(आ) मारवाड़ का इतिहास (द्वितीय भाग) – [illegible] पृ० ३६६

[3] डिंगल के ऐतिहासिक प्रबन्ध काव्य — डॉ० [illegible]

केशवदास स्वाभिमानी प्रकृति के व्यक्ति थे। बूंदी के राव रतनसिंह हाडा द्वारा इन्हें भगवे कपड़े पहने हुए देखकर कवि सदृश सम्मान न मिलने पर ये बड़े खिन्न हुए। बाहरी साज-सज्जा पर रीझने वाले राव हाडा की भर्त्सना करते हुए कवि ने ५ सोरठे कहे जो इस प्रकार हैं —

मौज तुहाळी भोज तरण, रतनागर कुरियंद।
मरे न छर लागी मुई, दादुर तणी गयंद ॥ १ ॥

बूंदी बगली भोज बग, बगेल डाह रतन्न।
बाहिर दीसै ऊजला, मांहे मैला मन्न ॥ २ ॥

संवळ भोज रतन्नफल, सहजांणे सह कोई।
हांडि न कच्चे खिरि गये, लाभ न पक्के होई ॥ ३ ॥

गीत कवित्ती दूहड़ै, मूल न राचे मन्न।
कपड़ो नूर खुदाय रौ, रीझै राव रतन्न ॥ ४ ॥

कवियरण गुण सरलै मिलै, मूल न मेले मन्न।
आदि वैर दत कुण दिवै, हाडौ राव रतन्न ॥ ५ ॥

केशवदास गाडण सत्रहवीं शताब्दी के श्रेष्ठ कवि थे जिन्होंने अपने काव्य द्वारा भक्ति, वीर और शृंगार-रस की त्रिवेणी बहाकर, राजस्थानी की सर्वश्रेष्ठ कवि-परम्परा में अपना नाम अंकित करवाया।

हेम सामोर —

चारणों की सामोर शाखा के कवि हेम बीकानेर राज्य में स्थित सीयल ग्राम के निवासी थे। डिंगल, संस्कृत, अरबी तथा फारसी भाषाओं के विद्वान होने के कारण ये जोधपुर महाराजा गजसिंह के कृपापात्र बन गये और यहीं रह कर काव्य-प्रणयन करने लगे। इनका रचनाकाल वि० सं० १६८५ के आसपास माना जा सकता है।[1] कवि-प्रणीत गुण भाखा चरित्र ग्रन्थ उपलब्ध हुआ है जिसमें कवि ने अपने आश्रयदाता गजसिंह का शौर्य-वर्णन किया है। गुण भाखा चरित्र में वर्णित युद्ध की एक झलक देखिए—

---

[1] राजस्थानी सबद कोस (प्रथम खण्ड) – भूमिका, श्री सीताराम लाळस, पृ० १४५.

वहै उजळा वीजळा सार वज्जै । मड़ां अंथळां [illegible] मझ्झै ।
डळां हड्डुळां गुड्डुळां टूट उड्डै । वडां अन्तुळां मानळां नीर [illegible] ॥ १ ॥
चळां रत्तळां वाहळां स्त्रोण चल्लै । झुकै कम्मळां [illegible] झल्लै ।
रुळां अंतुळां तंतुळां घाव रुकां । हुळां सावळां स्त्रोण [illegible] ॥ २ ॥[1]

सम्पूर्ण काव्यकृति में भाषा प्रवाहमयी है तथा शब्दों का [illegible], भावों को मूर्त रूप प्रदान करने में समर्थ है ।

सांया झूला —

राजस्थानी साहित्य के अनेक विद्वानों ने भक्त कवि सांया झूला का [illegible] विक्रम संवत् १६३२[2] भाद्रपद कृष्णा नवमी बतलाया है, परन्तु [illegible] की रचनाओं तथा उपलब्ध समसामयिक ऐतिहासिक सामग्री के आधार पर उपरोक्त विवरण असंगत प्रतीत होता है । सांया झूला गुजरात [illegible] के प्रसिद्ध नगर ईडर से बारह मील पूर्व की ओर [illegible] नदी के तट पर बसे लीलछा[3] नामक गांव के निवासी थे । ये ईडर के राव [illegible] राठौड़ के आश्रित थे । इनकी काव्य-प्रतिभा पर रीझ कर [illegible] ने

---

१ रियां सेठावाळी, पीपाड़ के राव श्री [illegible] के पास [illegible] चरित्र की हस्तलिखित प्रति से

२ (अ) राजस्थानी भाषा और साहित्य — डॉ० मोतीलाल मेनारिया पृ० १७५ – ७६

(ब) राजस्थानी सबद कोस - प्रथम खण्ड-भूमिका सम्पादक श्री सीताराम लाळस, पृ० १४४

(स) डिंगल साहित्य - डॉ गोवर्द्धन शर्मा, पृ० [illegible]

(द) नागरी प्रचारिणी पत्रिका, वर्ष [illegible] अंक [illegible] में [illegible] का 'सांया झूला कृत नागदमण' विषयक निबन्ध पृ० [illegible]

(क) राजस्थानी भाषा और साहित्य - डॉ० हीरालाल माहेश्वरी पृ० [illegible]

(ख) 'परम्परा' राजस्थानी साहित्य का [illegible] – [illegible] लाल मेनारिया का 'चारण कवि सांयाजी झूला' [illegible] पृ० ३१९

३ (क) चारण त्रैमासिक, वर्ष- [illegible], अंक - [illegible] [illegible] – [illegible] कविया का 'भक्त-कवि सांया झूला और उनकी [illegible]' विषयक लेख

(ख) राजस्थानी साहित्य सम्पदा- श्री सौभाग्य सिंह शेखावत, पृ० [illegible]

इनका उचित सम्मान किया था।[1]

पिता की मृत्यु के पश्चात् सांयाजी विद्याध्ययन के लिए ईडर जा रहे थे तो रास्ते में उनकी भेंट सुलेमान नामक जमादार से हुई। सांयाजी के व्यक्तित्व से प्रभावित होकर वह उन्हें अपने साथ ले गया और एक ब्राह्मण के यहां उनके ठहरने तथा खाने पीने का प्रबन्ध किया। महात्मा हरिदास के शिष्य महात्मा गोविन्ददासजी की विद्वता की प्रसिद्धि सुन कर सांयाजी ने गोविन्ददासजी को अपना गुरु बनाया।[2] सांयाजी की गहन अभिलाषा को देख कर महात्मा गोविन्ददास जी ने उन्हें दीक्षा प्रदान की तथा नियमित रूप से शास्त्रीय ग्रंथों के साथ-साथ भागवत-पुराण आदि धर्म-ग्रन्थों की शिक्षा भी देने लगे।

ईडर राज्य पर उन दिनों राठौड़ राव वीरमदेव का शासन था। प्रत्येक पूर्णिमा की रात को ईडर-नरेश आमन्त्रित कवि से अपना यशोगान सुनते तथा कीर्तिकाव्य सुनाने वाले कवि को लाख-पसाव भेंट कर सम्मानित किया करते थे। पूर्णिमा की ऐसी ही एक रात्रि को, काव्य सुन कर लाख पसाव देने के उद्देश्य से, आलोजी नामक चारण कवि को निमन्त्रित किया गया। कवि आलोजी और वीरमदेव में किसी विषय पर वाद-विवाद हो जाने के कारण आलोजी को लाख पसाव देने का कार्यक्रम स्थगित कर तत्काल किसी अन्य कवि को राज दरबार में उपस्थित करने का आदेश दिया गया। उचित अवसर देखकर जमादार सुलेमान ने प्रतिभा-सम्पन्न कवि सांयाजी को दरबार में उपस्थित किया। सांयाजी के व्यक्तित्व और उनकी काव्य-प्रतिभा से प्रभावित होकर राव वीरमदेव ने लाख पसाव तथा रेहड़ा नामक गांव देकर सांयाजी का सम्मान किया।

राव वीरमदेव की मृत्यु के पश्चात् उनके छोटे भाई कल्याणमल ने ईडर राज्य की शासन-व्यवस्था सम्भाली। वीरमदेव की ही भांति कल्याण मल के हृदय में भी सॉयाजी के प्रति अपार स्नेह, आदर एवं श्रद्धा थी। एक बार राव कल्याणमल ने स्वयं छोटी सवारी पर बैठकर कवि का सर्वोच्च सम्मान किया था। सांयाजी भूला के बारे में जन-जीवन में अनेक किंवदन्तियां प्रचलित हैं। इनके द्वारा गाय पर झपटते हुए बाघ को श्राप देकर

---

[1] गुजरात के इतिहास 'रासमाला' में इस घटना का उल्लेख मिलता है।

[2] नागरी प्रचारिणी पत्रिका वर्ष ६६, अंक ३ में डॉ० अंबाशंकर नागर का सांया झूला कृत नागदमण लेख, पृ०३६८

गधा बना देना, ईडर के सरोवर पर स्नान करते समय मगर को काव्य-दान द्वारा यक्ष बना देना तथा द्वारिका स्थित रणछोड़जी के मन्दिर में लगी अग्नि को ईडर दरबार में बैठे-बैठे बुझा देना आदि अनेक कथाएं प्रचलित हैं। इन कथाओं में अधिक सच्चाई हो न हो, फिर भी वे कवि की लोक-प्रियता पर प्रकाश अवश्य डालती हैं।

सांया झूला ईडर-नरेश कल्याण मल राठौड़ के राज्याश्रय में अवश्य रहते थे परन्तु उन्होंने समसामयिक ऐतिहासिक घटनाओं का भी अपने गीतों आदि में दिग्दर्शन करवाया है। अपनी प्रतिभा एवं कुशाग्र बुद्धि के कारण सांयाजी ने अनेक राज्यों के अधिपतियों द्वारा लाख पसाव आदि पुरस्कार प्राप्त किए थे। उदाहरण के लिये दयालदास सिंढायच की ख्यात में उल्लिखित विवरण प्रस्तुत है जिसमें अन्य कवियों के साथ, सांया झूला को भी पुरस्कार देने का विवरण है —

हाथी एक दूदै आसिये नूं दीनो। हाथी एक देवराज रतनूं नै दीनो।
हाथी एक अखैजी बारठ नूं दीनो। हाथी एक बारठ [illegible] नूं [illegible]।
हाथी एक गैपे तुंकारे संढायच नूं दीनो। हाथी एक झूलै सांगै नूं दीनो।
हाथी एक भाट खेतसी गांव दागड़ै रै नूं दीनो।[1]

अर्थात् बीकानेर-नरेश रायसिंह राठौड़ के साथ उदयपुर के महाराणा उदयसिंह की राजकुमारी के विवाह के उपलक्ष में कवि दूदा आसिया, देवराज रतनू, अक्खा बारहठ, गैपा तुंकारा, सांईया झूला तथा खेतसी भाट का, हाथी, सिरोपाव इत्यादि द्वारा सम्मान किया गया था। यह घटना विक्रम संवत् १६३१ की है।

बीकानेर-नरेश रायसिंह ने विक्रम संवत् १६४६ में जैसलमेर के [illegible] भाटी की राजकुमारी के साथ भी विवाह किया था। जैसलमेर में सम्पन्न इस परिणय-समारोह में भी जाडा मेहडू, दुरसा आढा, [illegible] रतनू और सांया झूला को ससम्मान पुरस्कृत करने का ऐतिहासिक विवरण दयालदास की ख्यात में मिलता है।[2]

---

1 दयालदास की ख्यात– सम्पादक डॉ० दशरथ शर्मा, पृ० [illegible]
2 दयालदास की ख्यात–सम्पादक डॉ० दशरथ शर्मा, पृ० [illegible]

इन घटनाओं से ज्ञात होता है कि सांया झूला का अवतक माना जाने वाला जन्मकाल सर्वथा कपोलकल्पित है। सांया झूला द्वारा विक्रम संवत् १६३१ में पुरस्कार प्राप्त करने की घटना से स्पष्ट होता है कि वि. सं. १६३१ तक वे अन्य पुरस्कार प्राप्त कवियों के समवयस्क तो रहे ही होंगे।

जोधपुर के राजा मालदेव और दिल्ली के वादशाह शेरशाह के मध्य गिररी समेल नामक स्थान पर लड़े गये युद्ध के सम्वन्ध में, सांया झूला का एक गीत मिला है, जिसका सृजन कवि ने विक्रम संवत् १६०० में किया था। इस युद्ध में मालदेव के प्रसिद्ध सामन्त और योद्धा शौर्य प्रदर्शनोपरान्त वीरगति को प्राप्त हुए थे।[1] सांया झूला ने नागौर प्रान्त के ठिकाने खींवसर के स्वामी कूंपा मेहराजोत पर भी एक सुन्दर रूपक-गीत लिखा जो इस प्रकार है—

गीत कूंपा मेहराजोत रौ झूला सांइया रौ कहियो—

भुज सिंध भुजंगण भुजळग, थय हथलेवे सुग्रम्भ थई।
इभ गिर सस्तर विमर ऊतरी, पांणीहंड ईडा प्रसई ॥१॥

आच कमंध अह अहि कीय असंमर, काम कळह वंधगेह अकाळ।
जळहड संख असंखत जणिया, कुंजर गिर भांजते कपाळ ॥२॥

हत तस कमंध उरंग धरणीहर, धरीये अभ मेल्हे अंग ढाळ।
थय मदझर झरते कुंभायळ, अरक समे प्रसई ईडाळ ॥३॥

पांण पनंग पनंगण ग्रहरण, विप अभ होय सिखर वणिया।
विहर कपोळ ढोळ अग वहते, जळहड चा छोरू जणिया ॥४॥

कळह कंकाळ काळ त्रिय किरमर, हथ जुडतां सेमाथ हुई।
करण कपोळ उतारी कूंपे, जणिया मोती सींप ज्यूं ई ॥५॥

ऐसे प्रभावशाली रूपक-गीत के रचनाकार सांया झूला विक्रम संवत् १६०० तक कम से कम २० वर्ष की आयु के तो रहे ही होंगे। अतः सांया झूला का जन्म-समय, विक्रम संवत् १५८० के लगभग माना जाना चाहिए।

---

[1] मारवाड़ का इतिहास-प्रथम भाग-श्री विश्वेश्वर नाथ रेऊ, पृ० १३०.

कवि सांया झूला के जन्मकाल के समान, उनके पिता के नाम के सम्बन्ध में भी, विद्वानों की धारणा अब तक भ्रांतिदायक ही रही है। अबतक विद्वान् स्वामीदास को सांया झूला के पिता मानते आये हैं जब कि स्वामीदास सांया का ही संस्कृत परिनिष्ठित रूप है। एक प्रमाण कवि द्वारा निर्मित गीत से स्पष्ट होता है कि सांया झूला के पिता का नाम स्वामीदास नहीं अपितु भाया झूला था। साक्षी के लिए गीत का दोहा प्रस्तुत है जिसकी द्वितीय पंक्ति में सांया झूला को 'भायावत' अर्थात् भाया का पुत्र कहलाया गया है —

माया मोह न लागो जे मन, गढवी तूज लगो हर ध्यान।
लीधा भायावत चै लावै, सहस नाम फल एक समान ॥८॥[1]

सांयाजी बाल्यकाल से ही कुशाग्रबुद्धि एवं भक्त-प्रवृत्ति के थे। इनके पिता शैव थे। अतः सांयाजी भी प्रतिदिन भगवान-महादेव की पूजा-स्तुति करने मन्दिर जाते थे। कहते हैं सांयाजी की अगाध श्रद्धा, भक्ति और लगन से प्रभावित होकर शंकर ने उन्हें दर्शन दिये थे। इनको संगीत और ज्योतिष का भी अच्छा ज्ञान था।[2]

सांयाजी काठियावाड़ के निवासी थे अतः उनकी रचनाओं में डिंगल-भाषा के साथ-साथ गुजराती भाषा की झलक भी दिखाई देती है। कुछ स्फुट पद्य-रचनाओं के अतिरिक्त कवि के भक्ति-विषयक प्रसिद्ध लौकिक निम्नलिखित काव्य-ग्रन्थ मिलते हैं जिनमें भगवान श्री कृष्ण के प्रति अनन्य भक्ति-भावना का सुन्दर प्रदर्शन किया गया है —

१ नाग दमण
२ रुक्मिणी हरण,

शास्त्रीय दृष्टि से काव्य के अनेक भेद किये गये हैं। मुख्य रूप से काव्य को दो भागों में विभाजित किया जाता है — प्रबन्ध काव्य एवं मुक्तक काव्य। घटनाक्रम तथा कथाबन्ध के आधार पर प्रबन्ध काव्य को पुनः दो भागों में विभक्त किया जा सकता है — (१) महाकाव्य (२) खण्ड काव्य।

---

१ लेखक के पास स्थित गीत की हस्तलिखित प्रति में से।
२ राजस्थान एवं गुजरात के मध्यकालीन संत एवं भक्त कवि - डॉ० मदनकुमार जानी, पृ० २०२

नागदमण में श्री कृष्ण के सम्पूर्ण जीवन चरित्र का वर्णन न होकर उनके जीवन की घटना विशेष का वर्णन हुआ है। अतः उसे खण्डकाव्य कहना अधिक तर्कसंगत होगा।

नागदमण ग्रंथ में १२९ छन्दों में कालिय-मर्दन की कथा का कवि ने बड़ा ही पुष्ट और सजीव वर्णन किया है। वर्णन चित्रात्मक है। यही कारण है कि प्रत्येक छन्द वर्णित वातावरण को सजीव-साकार बना देता है। कवि जिस वस्तु, व्यक्ति, दृश्य अथवा प्रसंग को लेता है उसका हूबहू चित्र आंखों के सामने खिंच जाता है। उदाहरणार्थ कृष्ण द्वारा गायों को वन की ओर लेकर जाना, श्री कृष्ण के दर्शन के लिये गोपियों की विह्वलता, कृष्ण का सौन्दर्य वर्णन, कालियनाग की विकरालता एवं क्रूरता, कृष्ण की कोमलता एवं कमनीयता, नागरानियों को कृष्ण की सीख, द्वन्द्व युद्ध वर्णन आदि प्रसंग बहुत ही प्रभावोत्पादक हैं।[1] काव्य पढ़ते समय कौतूहल में निरन्तर वृद्धि होती है। कवि ने कृष्ण तथा नागणी के संवादों में आश्चर्य, भय वात्सल्य, माधुर्य एवं उत्साह इत्यादि अनेक भावों का सुन्दर वर्णन किया है। मुहावरेदार साहित्यिक राजस्थानी भाषा में निर्मित इस ग्रंथ में वात्सल्य करुण तथा वीर तीनों रसों की समन्वयात्मक झलक दिखाई देती है।

नागदमण ग्रंथ की कथा आरम्भ करते हुए कवि माता शारदा से निवेदन करते हुए कहता है — हे शारदा। मुझ पर कृपा कीजिए ताकि श्री कृष्ण ने कालिय नाग के सिर पर चढ़कर जो पराक्रमपूर्ण युद्ध किया था, उसका सफलतापूर्वक वर्णन कर सकूं —

बळ वो सादर वरणवू, सारद करो पसाय ।
पवाड़ो पन्नगां सिरै, जदुपति कीधौ जाय ॥[2]

प्रातःकालीन भोजनादि से निवृत्त होकर श्री कृष्ण गोप-सखाओं के साथ गौ-चारण के लिये अपने घर से रवाना होते हैं। श्री कृष्ण गायों को हांकते हुए आगे बढ़ रहे हैं और प्रेम-विह्वल गोपिकाएं बड़ी ही आतुरता से अपने - अपने झरोखों से झांक-झांक कर उनके मोहक-रूप का रसपान कर

---

[1] नागरी प्रचारिणी पत्रिका वर्ष ६९, अंक ३ – डॉ० अंबा शंकर का सांया झूला कृत नागदमण निबन्ध, पृ० ३२९

[2] नागदमण, छन्द संख्या – १

रही हैं। रास्ते में गोपिकाएं अपनी-अपनी गायों को श्रीकृष्ण के ही समूह में मिलाती जाती हैं —

हरि हो हरि हो हरि धेन हांके, भळकै चढि नंद कुमार झांके ।
अहि राणियां अव्वला भूळ आवे, भगव्वान नै धेन गोपी भळावे ॥[1]

समस्त गायों को लेकर श्रीकृष्ण गोप-ग्वालों के साथ यमुना के तट पर पहुंचते हैं। कालिन्दी-तट पर, कदम्ब के वृक्षों की शीतल छाया में, मित्र-सखाओं के अनुरोध पर, कृष्ण गेंद का खेल खेलने लगते हैं। अनायास गेंद उछल कर यमुना के जल में विलीन हो जाती है। यमुना में स्थित कालियनाग के आतंक को समाप्त करने का उचित अवसर पाया जान, श्रीकृष्ण कदम्ब की टहनी पकड़ कर यमुना में कूद पड़ते हैं। यह समाचार तीव्र गति से चारों ओर फैल जाता है तथा कालियनाग की भयंकरता का स्मरण कर लोगों में हाहाकार-सा मच जाता है —

जदूनाथ काळी सभी वाथ जोड़े, धणो भोम चाली चढ़ी वात घोड़े ।
उभा गाय गोपाल झूरंत आरे, हाहाकार हुक्कार संसार सारे ॥[2]

माता यशोदा इस समाचार से बहुत घबरा जाती है और पुत्र-स्नेह से व्याकुल हो कर कन्हैया, कन्हैया पुकारती हुई, कदली-स्तम्भ के सदृश भूमि पर गिर पड़ती है —

सुण्यौ वात आघात माता सनेही, जसोदा ढळी कदळी थंभ जेही ।

माता यशोदा कन्हैया, कन्हैया कहती हुई तथा दोनों आंखों से अश्रुधारा बहाती हुई, यमुना के तट पर इस प्रकार लोट रही थी मानो किसी हीन निर्धन के हाथ से एकमात्र चिंतामणि रत्न खो गया हो। कवि ने माता यशोदा की व्याकुलता का अत्यन्त मार्मिक चित्रण किया है —

विहूं लोचनै नीर-धारा वहंती, कनैगो कनैगो कहंती [illegible] ।
कळंदी तणै आई लोटंत कांठे, नखो जांणि चिंतामणि रंक हाथै ॥[3]

---

[1] नागदमण, छन्द संख्या-५
[2] नागदमण, छन्द संख्या-१५
[3] नागदमण, छन्द संख्या-१८

श्री कृष्ण कालिय के दरबार में पहुंचते हैं। कालिय नाग गहरी नींद में सो रहा है। नाग-पत्नियां श्री कृष्ण के अनुपम सौन्दर्य को देखकर मोहित-सी हो जाती हैं। फिर कृष्ण और नाग-पत्नियों में परस्पर संवाद आरम्भ होता है। नागणी कहती है कि यह भयंकर नाग का निवास-स्थान है, यहां आने वाला वापस सकुशल नहीं लौट सकता।

कृष्ण, नागणी के कथन को अनसुना करते हुए गेंद मांगते हैं। नाग-पत्नियां पुनः नाग के विकराल स्वरूप और उसकी भयंकरता का वर्णन करने लगती हैं। कृष्ण के मुख से कालिय से युद्ध की बात सुनकर नाग-पत्नियां कृष्ण के भोलेपन की हंसी उड़ाती हैं। वे कहती हैं कि अरे नादान अपनी शक्ति और उम्र से ज्यादा ऐसी बातें मत करो जिनसे युद्ध भड़क जाये। अभी तक तुम्हारे बाल्यकाल के बालों का मुण्डन भी नहीं हुआ है। जाओ अपने माता-पिता के पास जाकर उनकी गोद में खेलो-कूदो। भोले! क्या विस्तृत आकाश को बाहुपाश में भरा जा सकता है —

आळा मा करै सामुहा जुद्ध चाळा,
वधाऱ्या न थारै अजै बाळ-वाळा।
खेलीजै रमीजे पिता मातु खोळा,
भरीजै नहीं आभ सूं बाथ भोळा ॥[1]

कालिय-नाग के सहस्त्र मुखों से निकली हुई विष-ज्वालाएं हरे-भरे वृक्षों को जलाकर क्षण भर में राख कर देती है। हिमालय की शीतल चोटियां भी उसकी भीषण फूत्कार सुनकर कंपकंपाने लगती हैं। तुम्हारे पास न सेना है, न सेनापति। मैं पूछती हूं तुम किस बलबूते पर लड़ोगे? हमें तो तुम्हारे हाथ में एक बांसुरी के अतिरिक्त कुछ भी दिखाई नहीं देता। कृष्ण कहते हैं कि तुम जाओ और नाग को जगादो। आज इसी अखाड़े में हम दोनों युद्ध करेंगे —

जाओ नागणी नाग वेगो जगाड़ो, अठे मांडयां आज दोनूं अखाड़ो ॥[2]

---

[1] नागदमण, छन्द संख्या-३६

[2] नागदमण, छन्द संख्या-३७

कृष्ण कहते हैं कि बिना अस्त्र-शस्त्र के, हाथों से ही मैं युद्ध करूंगा। युद्ध में हारना-जीतना तो ईश्वराधीन है —

कट्टकां खगां वाहर नाग काछे, अभा नागणी पनागे [illegible] ।
बुलाड़ो जगाड़ो जुओ जुद्ध वाथे, हायां जीतिआं वात [illegible] ॥[1]

लाख समझाने पर भी जब नहीं मानते तो नागणी कहती है कि तुम स्वयं जाकर कालिय को जगालो श्री कृष्ण बांसुरी बजाने लगते हैं। [illegible] सुमधुर स्वर-लहरी से ब्रजवासियों की लुप्त चेतना पुनः लौट [illegible] है। नींद में विघ्न पड़ने से कालिय क्रोध से फुंफकार कर इधर-उधर देखता है और गोपालकृष्ण को अपने सामने देखकर उन पर आक्रमण करने के लिए आगे बढ़ता है। कालिय और कृष्ण में आक्रमण-प्रत्याक्रमण आरम्भ होता है। जिस प्रकार गारुड़ी सांप के साथ खेल करता है वैसे ही श्रीकृष्ण कालिय के साथ क्रीड़ाएं कर रहे हैं। कालिय क्रोध से फुंफकारता है। [illegible] ताण्डव से यमुना के जल में हलचल-सी मच जाती है। देवता [illegible] विमान में बैठे हुए इस दृश्य का अवलोकन करते हैं। कृष्ण के [illegible] के निरन्तर प्रहारों से रक्त-रंजित होकर कालिय अन्ततः गिर पड़ता है। भगवान कृष्ण उसके सिर पर चढ़कर नृत्य करने लगते हैं —

तिसी तंत ताती वजी ताल ताली, मंड्यौ पाव आनन्दिनो [illegible] ।
तताथे तताथे तताथे सतानं, उरं अंतरं अनर्थ [illegible] ॥[2]

गिड्डथो गिड्डथो गिड्थोक गाजे, वाई बांसळी नाद [illegible] ।
काळी नाचियो ऊपरे नित्त काळी, वळीरंभ नाटारंभे [illegible] ॥[3]

नाग-पत्नियां श्री कृष्ण की शक्ति को देखकर [illegible] होती हैं तथा भगवान कृष्ण से क्षमा मांगते हुए कहती हैं —

जपी नाथसुं नागणी हाथ जोड़ी, भयो दोष मोटो [illegible] ।
तुकारे रिकारे जिकोरे तमानु, आया [illegible] ॥[4]

---

१ नागदमण, छन्द संख्या – ९१
२ नागदमण, छन्द संख्या – ११२
३ नागदमण, छन्द संख्या ११३
४ नागदमण, छन्द संख्या ११५

इस प्रकार कालिय के गर्व को तोड़कर भगवान श्री कृष्ण दोनों हाथ जोड़े माता यशोदा के पास चले जाते हैं । ग्रंथ की समाप्ति पर कृष्ण-चरित्र के महात्मय को समझाते हुए कवि ने लिखा है —

सणे पणे समवाद, नंद नंदन अहि नारी
समंद्र पार संसार होय गोपद अनुहारी
अनंत अनंत आनन्द सवे वपु तासु सुहावे
भगत मुगत भंडार कृश्न भुगताज कहावे
रचियो चरित्र राधारमण दो भज क्रन काली दमण ।
चैतवण सुणण गहरा तणा मेटण काज आवागमण ।।

नागदमण की कथा भगवान श्री कृष्ण की बाल लीला से सम्बन्धित एक चरित्र-काव्य है । कालिय-दमन की कथा महाभारत (सभा ३८), हरिवंश (२, १२), ब्रह्म पुराण (१८५) तथा श्रीमद्भागवत आदि पौराणिक ग्रंथों में मिलती हैं । सांया झूला ने श्रीमद्भागवत महापुराणोक्त कालियदमन लीला की कथा को ही अपनी मौलिक सूझ-बूझ तथा काव्य-प्रतिभा के बल पर नवीन रूप से प्रस्तुत किया है । यमुना के तट पर कन्दुक-क्रीड़ा कवि की मौलिक उद्भावना है । आज भी ग्वाल—बालों को यह खेल खेलते हुए देखा जा सकता है । भागवत का कालिय श्रीकृष्ण द्वारा उत्तेजित करने पर क्रोधित होता है जबकि नागदमण का कालिय जन्मजात क्रूर एवं अभिमानी है । कालिय-दरबार तथा श्रीकृष्ण-नागणी संवाद के प्रसंग भी कवि की मौलिक सूझ-बूझ के परिचायक हैं । सांयाजी के श्रीकृष्ण वस्तुतः ईश्वर ही हैं ।

गो-महत्ता का प्रसंग भी कवि की मौलिकता का प्रमाण है । नागदमणकार के युग में गौओं की अवस्था सोचनीय थी । मुसलमानों द्वारा गायों की हत्या से क्षुब्ध होकर ही कवि ने इस प्रकरण पर प्रकाश डाला है । नाग-पत्नी द्वारा बार-बार परिचय पूछने पर श्रीकृष्ण कहते हैं कि माता यशोदा ने हम दोनों भाईयों को गायें चराने के लिए नियुक्त किया है । आज मेरी बारी है । गायों की सेवा श्रेष्ठ कार्य है । गौ की पद-रज से पाप-समूह नष्ट हो जाते हैं —

नवै मात, भ्राता विन्है, धैन चारौ, वहै आज तै नागणी मुझ वारौ ।
सुरंभी तणी नागणी ऊंच सेवा, गलै अव्ध ओधां खुरी खेहग्रवा ।।[1]

---

[1] नागदमण, छन्द संख्या ६१

श्रीकृष्ण गौ-महत्ता का प्रतिपादन करते हुए पुनः कहते हैं कि [illegible] देश के दान की अपेक्षा गौ-दान अधिक श्रेष्ठ दान है—

नरां खेह लागे रहे देह नीको, तिसी नागणी गऊ [illegible] ।
वधा देस दीजै विप्रं वेद बोले, नहीं नागणी तोई गोदान [illegible] ॥[1]

कवि द्वारा वयण-सगाई के नियमों का निर्वाह प्रमाणित करता है कि भाषा, छन्द तथा अलंकार आदि पर उनका अच्छा अधिकार था। एक उदाहरण देखिए —

मंडयौ दूसरो खेल खेलंत माथे, हिवै ऊतरी [illegible] गोपाल [illegible] ।
करै त्रीन खंडो नमंतेय कानां, जोवै धेन पछीर [illegible] ॥

पांडित्य और भक्ति भावना के सम्मिश्रण ने नागदमण की कथा के आकर्षण और प्रवाह को बढ़ा दिया है । कथा की [illegible] सुन्दर और प्रभावशाली है । मुगलों के अत्याचारों से [illegible] के सामने भगवान श्रीकृष्ण की विविध लीलाओं का चित्रण करके, कवि ने मानव-जीवन को एक नया सन्देश प्रदान किया है ।

रुक्मिणी हरण —

रुक्मिणी हरण की कथा श्रीमद्भागवत महापुराण में [illegible] है। इस काव्य कृति में श्री कृष्ण द्वारा रुक्मिणी का हरण तथा [illegible] का वर्णन किया गया है। नागदमण की भांति यह [illegible] कृष्ण-भक्ति भावना का द्योतक है।[2]

---

१ नागदमण, छन्द संख्या ६२

२ इसकी हस्तलिखित प्रतिलिपि सेठ [illegible] में है जिसमें कुल ४३५ छन्द हैं — ३ [illegible] १ दोहा, ४३० [illegible] और १ कवित्त ।

कुछ विद्वानों ने[1] सांया जी के रुक्मिणी हरण तथा राठौड़ पृथ्वीराज कृत वेलि क्रिसन रुकमणी री की तुलना कर, एक दूसरी कृति को अलग-अलग स्तरों पर रखने का प्रयास किया है किन्तु सूक्ष्म अध्ययन के पश्चात् निःसंकोच कहा जा सकता है कि दोनों ही रचनाएं अपने-अपने क्षेत्र में अनुपम हैं। वेलि में शृंगार और भक्ति रस का अपूर्व समन्वय हुआ है तो रुक्मिणी हरण वीर रस की अनुपम कृति है। आरम्भ के दोहे से विदित होता है कि रुक्मिणी हरण वीर रस प्रधान वर्णनात्मक काव्य है[2] —

हूं गायेस रुपमण हरण, मंगलाच्यार मुकंद ।
कुळ जादव पूरण कळा, प्रगटे परम अणंद ।

शब्द-चयन रसों के सर्वथा अनुकूल और चित्रमय है। नागदमण के समान रुक्मिणी हरण में भी संवाद हैं। रुक्मिणी के विवाह के विषय को लेकर भीष्मक और रुखमी के बीच प्रारम्भ में लगभग १०० छन्दों तक वार्तालाप चलता है। रुक्मिणी हरण कथा का आरम्भ कवि ने पारम्परिक मंगलाचार से किया है —

भल कव वहण भले गुण भरया, उकत विशेषे पार उतरिया।
काला ई वाला जेणें करया, गाये आप आपरे तरया ॥१॥[3]
सवद-जयाज वहण टंकसाली, तर-तर सकव गया तण ताली
म्हण संसार तरण वनमाली, जोड़िस हूं एक तुम्वा जाली ॥[4]

---

[1] (क) राजस्थानी सबद कोस (प्रथम खण्ड) - भूमिका - श्री सीताराम लाळस, पृ० १४४

(ख) राजस्थानी भाषा और साहित्य – डॉ० मोतीलाल मेनारिया, पृ० १३३

(ग) परम्परा के राजस्थानी साहित्य का मध्यकाल अंक में डॉ० पुरुषोत्तम लाल मेनारिया का चारण कवि सांयाजी झूला लेख, पृ० ३२०

[2] राजस्थानी भाषा और साहित्य - डॉ० हीरालाल महेश्वरी, पृ० १८१

[3] रुक्मिणी हरण, छन्द संख्या १

[4] रुक्मिणी हरण, छन्द संख्या २

भीष्मक अपनी कुंवरी का विवाह श्रीकृष्ण से करवाना चाहते हैं। अपने पिता के मुख से कृष्ण की प्रशंसा सुनकर रुक्मैया [illegible] होने लगता है —

भाषियो भीमक चवद जोतां गुवण। कुंवरी-वर जोर वर [illegible] ॥
रुकमियो जांण कर जलण घृत राळयो। भला भीमंक तुमे [illegible] ॥[1]

रुक्मीया अपनी बहिन रुक्मिणी का विवाह शिशुपाल के साथ करवाना चाहता है। अतः वह कृष्ण के चरित्र पर दोषारोपण करते हुए कहता है —

लषण बत्रीस तेतीसमो ए लषण। घरा घर चीर उ पनू [illegible] ॥
प्रथम दही दूध मांषण तणी पत गली। आंगली आपतां बाह् [illegible] ॥[2]

घाट जमुना तणे दीह् धोले घणा। ताकतो पांगरण [illegible] ॥
कदम डाले चढी चीर भूंटे असन। नीर में कंवरे नारि बैठी नगन ॥[3]

इस प्रकार पिता और पुत्र के मध्य संवादात्मक वार्तालाप चलता है। भीष्मक कृष्ण की अनेक लीलाओं — पूतनावध, चीर हरण, दान लीला, ओखल बन्धन, नाग दमण, गोवर्धन धारण, सागर मन्थन तथा लक्ष्मी-वरण आदि का विवरण देते हुए कहते हैं कि श्रीकृष्ण के चरणों से तीनों लोकों को पवित्र करने वाली पावन नदियां निकलती हैं —

कुंवर त्रीलोक जे गंग पावन करे। नरबुदा एहीजरा [illegible] ॥[4]

अपने पिता की आज्ञा की परवाह न कर रुक्मैया शिशुपाल के पास विवाह के लिए लग्न पत्रिका भिजवा देता है। शिशुपाल इस निमन्त्रण को सहर्ष स्वीकार करता है और विशाल सेना तथा बारात लेकर कुन्दनपुर की ओर प्रस्थान करता है।

---

[1] रुक्मिणी हरण, छन्द संख्या ३
[2] रुक्मिणी हरण, छन्द संख्या ७
[3] रुक्मिणी हरण, छन्द संख्या ८
[4] रुक्मिणी हरण, छन्द संख्या ४६

विवाह के लिये कूच करते समय शिशुपाल के रास्ते में, अनेक अपशकुन प्रकट होने लगते हैं —

बुध चौथो सनीसर वारमो, अरक माठो मंगल आवियों आठमों।
रुप सूके मळै देव वैठी रही, तीसरो डाहँणो वोलियौ त्रहत्रही।
चडो सिसपाल जै काल री चौघड़ी, पागड़े पाव दैतं पड़ी पाघड़ी।
घरहुं चाळिया जंन मेलै घणी, जीमणी देव नै संममी जोगणी।
हुयो डावो हरण हेक डावो हणू, घुघुयो जीमणो कसु अचरज तणू ।।

शिशुपाल द्वारा वारात लाने का समाचार क्मिणी के हृदय में व्यथा और वेदना के भावों का संचार कर देता है। विक्षिप्तावस्था में रुक्मिणी एक ब्राह्मण के साथ श्रीकृष्ण के पास सहायता के लिये आने का सन्देश भिजवाती है। कवि ने रुक्मिणी की विकल अवस्था का वड़ा ही मार्मिक और हृदयविदारक चित्र खींचा है —

जल भरया नेत्र ने खेत पेहरण जुई। हलाहल छोडतां छींक सनमुख हुई ।।
वंभ तिण दूसरो आंण वोलाविओ। अंतरजामी तणौ जाणीये आवीओ ।।[1]

रुक्मिणी का सन्देश मिलते ही श्रीकृष्ण कुन्दनपुर की ओर प्रस्थान करते हैं। श्रीकृष्ण की सहायता के लिए बलराम भी विशाल सेना लेकर रवाना होते हैं। रुक्मिणी उन के आगमन की सूचना से प्रसन्न होती है। कृष्ण जब कुन्दनपुर पहुंचते हैं तो रुक्मीया के अतिरिक्त सभी निवासी उत्साहपूर्वक उनका स्वागत करते हैं। राजा भीष्मक श्रीकृष्ण को सात खण्ड वाले भव्य महल में ठहराते हैं —

विसनु आइयो मंगल घराघर वरतीया। रुकमिया हेक वण सहू रलियात थिया ।।
दीनवन्धू तणा सेन दरसावीया। चौसरी प्रज मेडे चडे चाहीया ।।[2]

श्रीकृष्ण के साथ शिशुपाल भी कुन्दनपुर पहुंचता है। एक ही कन्या से विवाह-हेतु दो वरों के आगमन से युद्ध-सदृश स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

---

[1] रुक्मिणी हरण, छन्द संख्या ६४
[2] रुक्मिणी हरण, छन्द संख्या ६१

रुक्मिणी जब अंबिका-पूजन के लिए मन्दिर जाती है तो उसकी रक्षा के लिए विशेष सैन्य प्रबन्ध किये जाते हैं। अंबिका-मन्दिर में पहुंचे श्रीकृष्ण, रुक्मिणी को रथ में बिठाकर भीषण शंखनाद करते हुए शत्रुओं को ललकारते हैं। दोनों पक्षों की सेनाएं युद्ध-हेतु सन्नद्ध हो जाती हैं। सैनिकों और हाथी-घोड़ों के पावों से उड़ी धूल से आकाश अन्धकारमय हो जाता है —

चक्कवे-चक्कवी पूर रयणी चिया। गेहणी छोड़ भरतार दूरे गिया॥
मेंण पुड ऊपड़ी वेह वेहां-मली। आारां वझांने नां उनवां मनली॥[1]

शस्त्रास्त्रों के प्रहार एवं घनघोर गर्जन से चारों ओर हाहाकार सा मच जाता है —

गाज त्रंबाल पड़ रोल गैंणाइयां, साम्हले सिंधुवे राग सरणाइयां।
कूद गया कायरां वाजती काहली, वीर आकासमां सूरमां वक्कुरी॥[2]

श्री कृष्ण तथा बलराम के हाथों शिशुपाल, जरासंध और रुक्मी रुक्मैया की पराजय होती है। सम्पूर्ण युद्धक्षेत्र रक्त से आप्लावित हो जाता है। चारों तरफ सैनिकों एवं हाथी-घोड़ों की लाशों के अंबार लग जाते हैं। श्री कृष्ण की विजय का उल्लेख करते हुए कवि लिखता है —

नर दले असपती गजपती नरपती। दुलहणी लावीआ जीप जानकी।
किसन कारज वने पंथ हेकण कीया। सेसनो भार उतार नांखी सीस॥[3]

श्री कृष्ण रुक्मैया को बांध लेते हैं परन्तु रुक्मिणी के आग्रह पर रुक्मैया को मारने का विचार त्याग कर उनकी आधी मूंछ और सिर मुंडवा कर छोड़ दिया जाता है।

द्वारिका पहुंचने पर कृष्ण और रुक्मिणी का शाही अभिनन्दन होता है। ज्योतिषियों द्वारा विवाह के लिए शुभ-मुहूर्त निकलवाया जाता है। इस प्रकार श्री कृष्ण तथा रुक्मिणी विवाह के पावन-बन्धन में बंध जाते हैं।

रुक्मिणी हरण और नागदमण काव्यकृतियों की भाषा, शैली, ऐतिहासिकता, मौलिकता तथा पाठकों के हृदय में भक्ति-भावना जागृत करने

---

१ रुक्मिणी हरण, छन्द संख्या – १३०
२ रुक्मिणी हरण, छन्द संख्या – १५१
३ रुक्मिणी हरण, छन्द संख्या – १६४

की अपूर्व क्षमता को दृष्टिगत रखते हुए इन ग्रन्थों को राजस्थानी भक्ति साहित्य की अमूल्य धरोहर कहा जा सकता है। काव्य के वर्णन अत्यन्त सहज, सरल, सरस, चित्रात्मक, भक्तिरस से ओत-प्रोत तथा हृदय को छूने वाले हैं।

रुक्मिणी हरण और नागदमण रचनाओं के अतिरिक्त सांया झूला द्वारा निर्मित भक्ति विषयक गीत भी मिलते हैं। अपने गीतों में भक्त कवि ने संसार की अनित्यता, परमात्मा नाम स्मरण की महत्ता, माया-मोह आदि आशक्तियों से निवृत्ती आदि अनेक विषयों पर प्रकाश डाला है। ईश्वर के दरबार में कोई भी प्राणी सदकर्मों की नौका पर चढ़कर बिना किसी प्रकार की रोक-टोक के जा सकता है। वहां पहुंचने पर किसी प्रकार का अभाव शेष नहीं रहता। ईश्वर के अद्‌भुत दरबार का शाब्दिक-चित्र खींचते हुए कवि ने लिखा है—

पछितावै कांइ प्रौळिपालि तो, जीव गंवार विचारे जोई।
काठी ग्रहे ओळगत केसव, काटियो न होवत कोई ।।१।।
द्वारपाळ नह देत दुहाई, धर काजि म फिरत घरोघरि।
हरी पावड़ी उजाळत हाथे, हाथ न मांडत राइहरि ।।२।।
पर द्वारे द्वारे पालीतो, मम करि खुणस विचारि मनि।
इम जौ करत अनत मुंह आगी, इम न करत आगळी अनि ।।३।।
अघपति द्वारि अम्होणा आतम, रावै जिणि तिणि ठौड़ि रहि।
टहल करत हरि महल तणी तूं, सहल हुवत तौ महल सहि ।।४।।[1]

माधोदास दधवाड़िया —

केशवदास गाडण के समकालीन कवियों में भक्त कवि माधोदास दधवाड़िया का विशेष स्थान है। ये चूंडा दधवाड़िया के पुत्र और जोधपुर राज्य में स्थित बलूंदा नामक ग्राम के निवासी थे।[2] समसामयिक काव्य-कृतियों के विवरणों के आधार पर इनका जन्मकाल वि० सं० १६१० से

---

[1] लेखक के पास स्थित सांया झूला कृत भक्ति गीत की प्रतिलिपि से
[2] राजस्थानी सबद कोस (प्रथम खण्ड) भूमिका — श्री सीताराम लाळस, पृ० १४३

१६१५ के मध्य ठहराया गया है। ये जोधपुर के महाराजा सूरसिंह के कृपापात्र थे। वेलि किसन रुपमणी के रचनाकार राठौड़ राव पृथ्वीराज से भी माधोदास के सौहार्दपूर्ण सम्बन्ध थे। पृथ्वीराज राठौड़ की वेलि को पढ़कर इन्होंने उनकी मुक्तकण्ठ प्रशंसा की थी। प्रत्युत्तर में वेलिकार ने माधोदास के प्रति अपनी हृदयस्थ शुभकामनाओं को निम्नलिखित दोहे द्वारा अभिव्यक्त किया —

> चूंडे चत्रभुज सेवियो तत्फल लागो तास ।
> चारण जीवो चार जुग, मरो न माधोदास ॥

मिश्रबन्धुओं ने माधोदास का रचनाकाल वि० सं० १६६४ बतलाया है।[1] ऐसा कहा जाता है कि एक बार कुछ मुसलमान उनकी गायें चुराकर ले गये। इस घटना की सूचना मिलते ही माधोदास ने अपने पुत्र के साथ लुटेरों का पीछा करके उनके साथ संघर्ष किया। वि० सं० १६६० में घटित इस घटना में कवि का घटनास्थल पर ही देहान्त हो गया था।

डिंगल के प्रतिभा सम्पन्न कवि माधोदास उच्चकोटि के भक्त भी थे। उनकी समस्त रचनाएं शान्त-रस की हैं। कवि माधोदास की रचनाओं में शान्त-रस का प्राधान्य, राजस्थानी साहित्यालोचकों के मिथ्या आक्षेपों का खण्डन करता है जिनमें चारण साहित्य का सम्बन्ध वीर-रस के साथ जोड़कर उसे एकांगी [illegible] बतलाया जाता है। कवि-प्रणीत अद्यावधि उपलब्ध काव्यकृतियां हैं —

(१) रामरासो
(२) भासा दसम स्कंध
(३) गजमोख

रामरासो सर्वाधिक लोकप्रिय डिंगल भक्ति-काव्य-ग्रन्थ है। इसमें मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्री राम की कथा का लगभग सोलह सौ छन्दों में सरस वर्णन किया गया है। महाकाव्यजनित विशेषताओं के कारण इसे राजस्थानी के प्रथम महाकाव्य की संज्ञा से विभूषित किया जाता है। [illegible] डिंगल और दैनिक बोलचाल की राजस्थानी भाषा के समन्वित प्रयोग से रामरासो जनसाधारण का प्रिय एवं स्तुत्य ग्रन्थ बन गया है। किसी भी कृति की सर्वप्रियता उसकी सरल भाषाशैली प्रयोग-कला पर निर्भर करती है। क्लिष्ट और दुरूह-शब्दावली युक्त कृतियां प्रबुद्ध वर्ग को भले ही आनन्दित कर दें परन्तु ऐसी रचनाएं जन-साधारण

---

1 मिश्रबन्धु विनोद (प्रथम भाग) पृ० ३७६

को साधारणीकरण के स्तर तक नही पहुंचा पाती। साहित्य में लोक मंगल तथा सबको साथ लेकर आगे बढ़ने की कामना होती है परन्तु वर्णित-विषय दुरूह भाषा-शैली का आवरण पहिनकर अपरिचित बन जाये अथवा वर्ग विशेष का ही प्रतिनिधित्व करने लगे तो फिर ऐसी रचना को साहित्य के अन्तर्गत् न रखकर, वर्ग-विशेष की मनोरंजन सामग्री कहना अधिक उपयुक्त होगा। छन्दों की विविधता, भाषा–सौष्ठव, प्रबन्धात्मकता, प्राचीनता तथा सरल भाषा शैली के कारण रामरासो, राजस्थानी भक्ति–काव्य परम्परा का अतिलोकप्रिय ग्रन्थ बन गया है। ग्रन्थ में आरम्भ से लेकर अन्त तक वर्णन चित्रात्मक और रसमग्न कर देने वाले हैं। घटना के अनुरूप शब्दों का चयन कर कवि ने प्रत्येक दृश्य को साकार बना दिया है। भाषा में सहजता, सरलता तथा गतिमानता होने से, नीरसता का किंचित भी आभास नहीं हो पाता। लंकेश रावण द्वारा सीता के हरण की घटना से राम बहुत व्यथित हो जाते हैं। सीता का वियोग राम के हृदय को कचोटने लगता है। राम की मार्मिक विकलता का भाव विभोर कर देने वाला शब्द चित्र देखिए —

लखमंण सूना झूंपड़ा, सींता चोर पइठ।
वर घण दीसौ नाह विण, घण विन नाहम दीठ।
तरि तरि पेखि न कलपतरू, सर सर हंस म सोझि।
कुशल न लखमंण जांनकी, नडि नडि विहड न खोजि।
भंणि भंणि सीत सुभांम, वंन वंन खिण खिण विचरतां।
व्यापै रांम विरांम, जल तोछै थळ माछ जिम।[१]

रामरासो में भाषा-सौन्दर्य अत्यन्त कमनीय तथा मनोमुग्धकारी है। चतुर शिल्पज्ञ के समान कवि ने एक–एक शब्द को अत्यन्त सूझ–बूझ के साथ जड़कर रामरासो रूपी हीरक हार का निर्माण किया है। कवि के भाषा-सौन्दर्य का एक उदाहरण देखिए—

नींदै प्रजा सुभ्यंतनौ, छूटी रथ संपेखि।
सांमि जु मेल्हे सांकड़ै, सेवग ध्रिग सुलेखि॥

---

[१] श्री हनुवन्त सिंह देवड़ा, आकाशवाणी जोधपुर के पास स्थित रामरासो की हस्तलिखित प्रति से।

रामण मारातांह, त्रिन मारीति विचारिनो।
तो भुजि राघव ताह, मूंकाहि नारां मुगति ॥[1]

वयण सगाई तथा अन्य अलंकारों के प्रयोग से काव्य की सुकुमारता में और अधिक निखार आया है।

रामभक्ति साहित्य की ऐसी अनुपम कृति के सम्बन्ध में अनेक विद्वानों ने भ्रान्तिदायक विवरण दिये हैं। वास्तविकता से अनभिज्ञ ऐसे लेखकों ने समसामयिक साहित्यिक तथा ऐतिहासिक विवरणों की अनदेखी कर राजस्थानी साहित्य का जो मूल्यांकन किया है, वह तबतक प्रकाशित पुस्तकों के विवरणों को [illegible] शब्द परिवर्तन के साथ, ज्यों का त्यों लिख देने के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है। ऐसा दुष्प्रयास करते समय तथाकथित विद्वान-लेखकगण समसामयिक प्रामाणिक इतिहास ग्रन्थों तथा राजस्थानी साहित्यकारों की रचनाओं का भी पर्यवेक्षण कर लेते तो संभवतः ऐसे अनर्गल विवरण, प्रश्नचिन्ह बनकर शोधार्थियों की पथ-बाधा नहीं बनते। उदाहरण के लिये डॉ० मोहनलाल जिज्ञासु ने चारण साहित्य के इतिहास लेखन में रामभक्ति शाखा के प्रतिनिधि कवि तथा डिंगल के प्रथम महाकाव्यकार माधोदास दधवाड़िया और उनकी रामरासो का परिचय सिर्फ पांच पंक्तियों में प्रस्तुत किया है।[2] राजस्थानी भक्ति-साहित्य की ऐसी शीर्षस्थ रचना की आलोचना तो दूर डॉ० जिज्ञासु रामरासो के उदाहरण के रूप में किसी नाम-साम्य माधोदास कवि की लिखी चौपाई 'करत [illegible] रघुनाथ बड़ाई' उद्धृत कर आगे बढ़ गये हैं। प्रसंगवश, उपर्युक्त विवरण डॉ० जिज्ञासु ने, डॉ० मोतीलाल मेनारिया की पुस्तक राजस्थानी भाषा और साहित्य से उद्धृत किया है। डॉ० मेनारिया की भ्रांति का अन्धानुकरण करने से पूर्व डॉ० जिज्ञासु यदि उल्लेख्य प्रसंग को इतिहास तथा साहित्य की कसौटी पर कस लेते तो असंगत विवरणों की पुनरावृत्ति नहीं हो पाती।

गजमोख निसांणी छन्दों में निर्मित सुन्दर [illegible] भक्तकवि ने महाभारत की सुप्रसिद्ध गज और ग्राह कथा का [illegible]

---

१ श्री सौभाग्य सिंह शेखावत के पास स्थित रामरासो की हस्तलिखित प्रति से

२ चारण साहित्य का इतिहास – डॉ० मोहनलाल जिज्ञासु, पृ० [illegible]

हुए ईश्वरभक्ति को सर्वोपरि बतलाया है। भासा दसम स्कंध भी कवि की शान्तरस प्रधान रचना है। माधोदास प्रणीत तीनों हीं काव्यकृतियां यद्यपि श्रेष्ठ और राजस्थानी भक्ति काव्य भंडार की अमूल्य रत्नराशियां हैं परन्तु रामरासो काव्यकृति सर्वाधिक लोकप्रिय और भक्तिरस की शीर्षस्थ रचना है। निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि माधोदास सत्रहवीं शताब्दि के सर्वश्रेष्ठ भक्तकवि थे जिनकी भक्ति-रचनाएं आज भी राजस्थानी जन जीवन का कण्ठहार बनी हुई हैं।

कल्याण दास —

मेहड़ू शाखा में उत्पन्न चारण-कवि कल्याणदास, जाडा मेहड़ू के पुत्र और बूंदी राज्य के निवासी थे।[1] इनका रचनाकाल वि० सं० १६८५ के लगभग ठहरता है। असाधारण गुणसम्पन्न प्रतिभावान कवि होने के साथ-साथ ये वीरता के उपासक भी थे। अतः इनकी अधिकांश रचनाएं वीर पुरुषों तथा वीर जातियों की प्रशंसा में लिखी हुई मिलती हैं। भाषा पूर्ण मजी हुई और भाव उच्चकोटि के हैं।[2] सुन्दर गीतों और असाधारण काव्य-प्रतिभा से प्रभावित हो कर जोधपुर के महाराजा गजसिंह ने इन्हें लाख-पसाव पुरस्कार प्रदान किया था।[3]

कवि कल्याणदास मेहड़ू विरचित राव रतन री वेलि डिंगल साहित्य की उत्कृष्टतम लघु-काव्यकृति है। इसमें स्वाभिमानी वीरों की जन्मभूमि बूंदी के पराक्रमी राजा रतनसिंह की अद्वितीय शूरवीरता का वर्णन किया गया है। राव रतनसिंह बादशाह अकबर और जहांगीर के समसामयिक थे।[4] महाकवि सूर्यमल मिश्रण के सुप्रसिद्ध वंशभास्कर ग्रन्थ में राव रतनसिंह का शासन-काल वि० सं० १६६४ से १६८८ तक बतलाया गया है।

३ षट्पदियों और २१ छन्दों में सृजित इस लघु काव्यकृति में कल्याणदास ने, राव रतनसिंह के पूर्वजों का शौर्यपूर्ण चित्रांकन करते हुए रतनसिंह द्वारा प्रदर्शित वीरता का अत्यन्त प्रभावपूर्ण वर्णन किया है। इस खण्डकाव्य में

---

1 चारण साहित्य का इतिहास – डॉ० मोहनलाल जिज्ञासु, पृ० १५१
2 राजस्थानी सबद कोस (प्रथम खण्ड) – श्री सीताराम लाळस, पृ० १४८
3 वीर विनोद (द्वितीय भाग) – श्री श्यामल दास, पृ० ८२०
4 शोध पत्रिका दिसम्बर १६६० में श्री सौभाग्य सिंह शेखावत का कल्याणदास मेहड़ू री कही राव रतन री वेलि विषयक निबन्ध

ऐतिहासिक घटनाओं के समायोजन से कृति की ऐतिहासिक उपयोगिता में अभिवृद्धि हुई है। साथ ही सटीक शब्दों तथा विविध उपमाओं के सुन्दर प्रयोग ने इस रचना को उच्चस्तरीय काव्य-रचनाओं के समकक्ष खड़ा किया है। लघु–काव्यकृति राव रतन री वेलि में कल्याणदास ने सुन्दर काव्यकृति की समस्त विशेषताओं को बटोरकर गागर में सागर की उक्ति को चरितार्थ कर दिखाया है।

वेलि के आरम्भ में कवि ने शक्ति और गणपति की वन्दना की है। फिर भगवान राम के विविध स्वरूपों का कीर्तिगान किया है। तदनन्तर उसने चरित्र-नायक के पूर्वजों की शौर्यमय वंश-परम्परा का उल्लेख करते हुए कवि ने मूल-विषय की ओर कदम बढ़ाए हैं। कवि कल्याणदास ने राव रतनसिंह को मान में दुर्योधन, दान में कर्ण, राजाओं में देवराज, देवों में कुबेर तथा भीष्म एवं अर्जुन जैसा पराक्रमी बतलाया है। राव रतन री वेलि एक डिंगल साहित्य की लघु किन्तु सुन्दर काव्यकृति है जिसमें कवि ने सजीव प्रतीकों तथा उद्भावनाओं द्वारा वर्णित दृश्य को अत्यन्त सजीव और रोचक बना दिया है।[1] उदाहरण के लिए कुछ काव्य पंक्तियां प्रस्तुत हैं —

वाछंट ओझटा कटक घट वढीया, दुजड़े ऊलट फुरट हुवी ।
मेह रयण घाइ झड़ वट मांडीयो, हेवै काळ सुकाळ हुवो ॥
रड़वड़ीया रुंड मूंड राइजादां, धड़ वेकंड़ गुड़ीया धार ।
मांणिक डंड प्रचंडां माथै, मेह रयण वूठो झड़ मार ॥

चरण ढपेति वूठो रण चाचरि, इन्द्र रतन री मारी [illegible] ।
मीर सरीफ तणा दळ माथै, तां जग बात न जाणै [illegible] ॥
कालेहणि हसति फौज बादल करि, नर गोली [illegible] ।
दूभर वार अभिनमो हूवौ, द्रवियो नार पार [illegible] ॥
वीजल मै वीज गरज मै वाजित्र, मघा नेज [illegible] ।
फरि फरि अफरि पछटते फौजां, गोरी सैन [illegible] ।
त्रुटे सिर कंध असंधा ताई, छिनै कबंध [illegible] ।
अरि धड़ बंध ऊपरै ओवड़ि, रिणि जल [illegible] ॥

---

1 शोध पत्रिका वर्ष २६, अंक २ में लेखक का राजस्थानी [illegible] ऐतिहासिक काव्यकृतियां विषयक निबन्ध, पृ० [illegible]

धारू जल धार वलकि सिरि धड़-धड़, वळ-वळ किरि वादळ में वीज।
ऊजळ छंट रयण ओवड़ियो, भूतल खळ रहिया रत भीज।।[1]

चतुर्भुज[2] —

ये वारहठ शाखा के चारण और किशनगढ़ राज्य के निवासी थे।[2] ऐसा कहा जाता है कि कवि चतुर्भुज सदैव भगवद्भक्ति में लीन रहते थे। लम्बी अवधि तक सन्तान न होने से ये वड़े खिन्न से रहने लगे तथा इनकी भक्ति-भावना उत्तरोत्तर बढ़ने लगी। जनश्रुति के अनुसार ईश्वर ने चतुर्भुज की भक्ति पर प्रसन्न होकर इन्हें कन्या-प्राप्ति का वर दिया। अपनी इसी कन्या का विवाह चतुर्भुज ने ढोकलिया (मेवाड़) के ठाकुर कमजी दधवाड़ियां के साथ किया था। कालान्तर में इसी कन्या की कोख से कविराजा श्यामलदास का जन्म हुआ। साहित्य एवं इतिहास के क्षेत्र में कविराजा श्यामलदास की लोकप्रियता सर्वविदित है।

कवि चतुर्भुज लिखित स्फुट गीत मिलते हैं। ये अधिकांशतः भक्ति से ही सम्बन्वित हैं। कुछ गीतों में कवि ने मेवाड़ के तत्कालीन महाराजा की विशेषताओं का प्रशंसनीय काव्य शैली में चित्रण किया है। मेवाड़ के महाराणा अमरसिह (द्वितीय) ने चतुर्भुज को राजकवि की उपाधि प्रदान की थी। अपने आश्रयदाता की गौरवशाली कीर्ति तथा दान-प्रवृत्ति का उल्लेख करते हुए कवि ने लिखा है —

अभंग साख सस सूर जुग च्यार रालण अचड़, छीजवण दळ दखणाण छातां।
यळ तणो हुंतो अभसेस राणे अमर, पोळ रो दियी अमशेर पातां।।
इंद्र अवतार दातार गुरू अरेदण, सुदन संसार गुण करण सीलो।
चत्रगढ़ तणो ढीलो कमळ चडंतां ताकुआं दियी दरवार टीडो।।

संसारिक विषय-वासनाओं के रेगिस्तान को अज्ञानवश पुष्प-वाटिका समझकर मानव भले ही भ्रमित हो जाये लेकिन अन्ततः ईश्वर का नाम ही उसे मुक्ति पथगामी वनाता है। परमात्मा घट-घट में व्याप्त है। अनुकम्पा

---

[1] साहित्य संस्थान के पुस्तकालय के अप्रकाशित ग्रन्थ विभाग में संवत् १७१९ के वड़े मेन्युस्क्रिप्ट में स्थित प्रतिलिपि से

[2] श्री हनुवन्त सिह देवड़ा, आकाशवाणी जोधपुर द्वारा प्राप्त विवरणानुसार

ही उसका स्वभाव है। ईश्वर शुभ है। वही परमात्मा सत्य है। इस प्राणी को सदैव परमात्मा के नाम का स्मरण करते रहना चाहिए। इसके भक्ति-गीतों में, भक्त कवि ने ईश्वर की अनुकम्पाओं का स्तुतिगान करते हुए भवसागर से पार लगाने का अनुरोध किया है। उदाहरण के लिए एक गीत देखिए —

तारियो अजामिल सजन ते तारियो, गीध ऊधारियो वेद गावे।
रखावण विरद गिरवर नखां धारियो, पार नहं सेस साहेब पावे॥

ऊवारे प्रभूपत सापते अहेल्या, तवे जग सम्ब प्रमरीस सारे।
सेन रे हेत नाई हुवो सांवरा, सदा भगतां तणा काज सारे॥

बारहठ चत्रभुज करै यूं वीनती, दीन री अधारे कांन दीजै।
सरव दुख मेट म्हारो अनै सांवरा, मया कर आपरो भक्त कीजै॥

ऊधारे कीर काळू कुटम आपरो नहं कृपा आपरा गुणां केरो।
रमापति राज रा विरद राखो रिघू, दया मो दीन री धोर देरो॥

कवि द्वारा निर्मित भक्ति-रस के गीत अत्यंत मर्मस्पर्शी हैं। पौराणिक ग्रंथों के दृष्टांतों से इनकी महत्ता काफी बढ़ी है। भाषा के सुन्दर अभिव्यक्तिकरण से भावों की सहजता एवं बोधगम्यता श्लाघ्य रूप में व्यक्त हुई है।

गिरधर आसिया —

ये आसिया शाखा के चारण और मेवाड़ राज्यान्तर्गत सेमड़िया गांव के निवासी थे। इनका रचनाकाल १६६३ ई० के आस-पास ठहरता है। रचनाकाल के अतिरिक्त कवि के जीवनवृत्त से सम्बन्धित अन्य विवरण उपलब्ध नहीं होता। गिरधर आसिया रचित सगतसिंघ रासो उपलब्ध हुआ है जिसमें दोहा, भुजंगी तथा कवित्त आदि लगभग चार सौ छन्दों में महाराणा प्रतापसिंह के छोटे भाई शक्तिसिंह का जीवन-चरित्र प्रस्तुत किया गया है। रचना प्रौढ़ और इतिहास की दृष्टि से उपयोगी है।[1] शक्तिसिंह अपने नाम के अनुरूप शक्ति का अवतार थे। अपने चरित्र-नायक के शौर्यत्व का काव्यांकन करते हुए कवि ने लिखा है —

ऊदल राणै एक दिन, नम पूछियो न कोइ।
अणि सिरै कर आहणै, हंसारे [illegible] कोइ॥

मैंगल-मैंगल मारियो, मीर मारियो मीर।
सगतो उदियासिंघ तणा [illegible] जिसो [illegible]॥

---

१ राजस्थानी भाषा और साहित्य- डॉ० मोतीलाल मेनारिया- पृ० १११

चत्र रत्तौ मुख रत्ताड़ौ, नैस जिहि कुळवग्ग।
सगतौ जमदढ्ढां सिरै, आफालियौ करग्ग।

कियौ हुकुम न कांणिकी, ए वट एह अवट्ट।
ऊदळ राण कमखियौ, पह दी सीख प्रगट्ट।

पिता हुकुम लिखियौ परम, अंग अहंकार अथाह।
सगतौ उदियासिंघ तण, सुवसीयौ पतसाह।[१]

सगतसिंघ रासो के अतिरिक्त कवि के वीर और शृंगार-रस के गीत भी मिलते हैं।

परमानन्द बीठू —

ये बीठू शाखा के चारणों थे। इस शाखा के चारणों का निवास अधिकतर बीकानेर राज्य में है। इनका रचनाकाल वि० सं० १६५० से १६७५ के मध्य माना जाता है।[२] कवि परमानन्द बीठू धार्मिक विचारधारा से अत्यधिक प्रभावित थे। अतः उनके काव्य में सर्वत्र भक्ति-रस का प्राधान्य परिलक्षित होता है। कवि की फुटकर रचनाएं मिलती हैं जिनमें घट-घट में व्याप्त सर्वशक्तिमान परमेश्वर की महिमा का सुन्दर भाषा-शैली में विवेचन किया गया है। कवि द्वारा लिखे एक भक्ति गीत की पंक्तियां देखिए जिनमे परमात्मा की अनिवर्चनीय विशेषताओं के वर्णन में मानवीय अपूर्णता एवं असमर्थता की ओर संकेत किया गया है —

अंग दियै लाख अंगि अगि लख उतमंग, उतमंग मुख द्यै लाख अनंत।
मुखि मुखि रसणि दिये लख माहव, मुंणि तौ सकां न सुगुण महंत॥

सू तण कोटि तिणि तिणि कोटि शिर, सिरी सिरी कोटि वदन समराथ।
वदनि वदनि द्यै कोटि जीह वलि, जपि तो गुण न सका जगनाथ॥

घट् ध्र कोटि कोटि घड़ि घड़ि ध्रू, कोटि ध्रुवां ध्रू जिगन करे।
जिगनि जिगनि पै कोटि तवन जो, प्रिम तो सुगुण न पार करे॥

---

१ डॉ० राजकृष्ण दूगड़ के पास उपलब्ध सगतसिंघ रासो की प्रतिलिपि से.

२ (क) प्राचीन राजस्थानी गीत, भाग – १२, पृ० ७६-७७.
(ख) राजस्थानी साहित्य में रामकाव्य (जोधपुर विश्वविद्यालय द्वारा स्वीकृत शोध-प्रबन्ध) – गुलाब कुंवर.

> वप ध्रू वदन जीह चित्रवाणे, पार [illegible] [illegible] [illegible] ।
> परमाणद्रो छोडण्वो केसव, [illegible] [illegible] [illegible] ।[1]

सुजाण सिंह —

ये बारहठ शाखा के चारण और जयपुर राज्य के निवासी थे। इनके काव्य-कौशल से प्रभावित हो कर जयपुर-नरेश [illegible] [illegible] ने सं० १६८८ में पच्चीस हजार की सम्पत्ति प्रदान कर, इनको सम्मानित किया था। कवि सुजाण सिंह के फुटकर गीत मिलते हैं जिनमें महाराजा [illegible] सिंह के शौर्य का प्रभावशाली भाषा-शैली में वर्णन किया गया है। [illegible] के लिए कवि द्वारा रचित एक गीत की कुछ पंक्तियाँ प्रस्तुत की जा रही हैं —

> जोडै राज पाट ओछावत, हर जोड़ै [illegible] [illegible] [illegible] ।
> गाज जोड़ जोड़ता खेत, सेवां राजां [illegible] [illegible] ॥
> दळ बळ मींडि मींडि प्राकृत नद, [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] ।
> मान हरा ची मींडि महाबळ, हरि कीधो [illegible] [illegible] ॥[2]

नाहरसिंह

ये मेवाड़ राज्य में स्थित आमेट ग्राम के निवासी और [illegible] [illegible] के चारण थे। इनके फुटकर गीत प्राप्त होते हैं। [illegible] [illegible] [illegible] शताब्दी का उत्तरार्द्ध माना जाता है।

आमेट के रावत माधोसिंह चुण्डावत की [illegible] [illegible] [illegible] वर्णन करते हुए कवि ने लिखा है —

> भूखी डाकणी जेम भभकंती, [illegible] न [illegible] [illegible] ।
> टुक गिळै काळिज धाराळी, [illegible] न [illegible] [illegible] ।
> पातल हरा निमो पुरुषातन, [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] ।
> उरड़ै फ़ौज धजा विच आधी, [illegible] [illegible] [illegible] [illegible] ।

---

१ श्री वसन्त कुमार दत्ता, जोधपुर के पास [illegible] [illegible] [illegible] भक्ति गीत की प्रतिलिपि से

२. श्री हनुवन्त सिंह देवड़ा, [illegible] जोधपुर के पास [illegible] [illegible] रचित गीत की प्रतिलिपि से

मांडियां मार अनड मानावत, कळिहण वार कराळी ।
मैंगळ कवां चगमगां मव कर, धांपावी धाराळी ॥[१]

खगार—

ये महड़ शाखा के चारण और मारवाड़ राज्यान्तर्गत् सोजत परगने के ग्राम राजोला के निवासी थे। इनकी फुटकर रचनाएं मिलती हैं। इनका काव्य-सृजन काल भी सत्रहवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध ही ठहरता है।

अपने चरित्र-नायकों के अद्वितीय शौर्य का अलंकृत वर्णन करने वाले कवियों में खगार का महत्त्वपूर्ण स्थान माना जाता है। जोधपुर के महाराजा जसवंत सिंह के अतुल बल-वैभव का उल्लेख करते हुए कवि ने लिखा है—

दांतळ घाव दाहतो दुजड़ां, मारू आळवतो मुख ।
रवदां थाहर वीच रोकियो, राजा कवल वराह रुख ॥

होफरतौ धसतो हाकळतो, उचंडतो करतौ रण आळ ।
रह यह कर जोधपुरो रहियो, तीजा पहर लगे रण ताळ ॥[२]

वीठू मुन्दरदास—

कवि सुन्दरदास वीठू शाख के चारण और जोधपुर के महाराजा गजसिंह के पुत्र अमरसिंह राठौड़ के आश्रित और कृपापात्र थे। इनका रचनाकाल संवत् १६६४ के आसपास माना जाता है। स्वामिभक्त सुन्दरदास द्वारा अपने स्वामी अमरसिंह राठौड़ की प्राण रक्षा करने पर, इन्हें झोरड़ा नामक ग्राम पुरस्कारस्वरूप प्रदान किया गया था। इस कथन के साक्ष्य में निम्न दोहा तथा छप्पय मिलता है—

आय चोर अमरेस री, झाड़ी तम्बू कनात ।
सिर तोड्यो समसेर सूं, हद सुंदर रो हाथ ॥

छप्पय

पट्ट पर सु उत्तराध, कोस दस गांव कहीजे ।
इम कह्यो 'अमरेस', दवागिरां लिख दीजै ॥

---

१ डॉ राजकृष्ण दूगड़ के निजी संग्रह में प्राप्य नाहरसिंह के गीतों की हस्तलिखित प्रति के आधार पर

२ चारण साहित्य का इतिहास—डॉ० मोहनलाल जिज्ञासु, पृ० २७५

झास गांव झोरड़ी, भले परगने मदांणो।
तांबा पत्र तांम हुवो, सांगण हिंदवांणै।

केकांण रीझ मोतीकड़ां, जग परसिध जस वाखांणै।
'अमरेस' दियो सांसण अचळ, सुकवि सुन्दरदास नैं॥

बादशाह शाहजहां के दरबार में जिस समय अमरसिंह राठौड़ ने सलावत खां को कटार के एक वार से मार गिराया, उस समय सुन्दरदास भी उनके साथ थे। अमरसिंह राठौड़ के इस वीरोचित कर्म को लक्ष्य कर, कवि ने अनेक कवित्त बनाए। एक छंद देखिए—

सिध करणाटक रूस रोम सोम बलख बीच, ऐसे विसरांणी कांनी पसरांणी है।
दूजा 'गजेस' जीत जाहिर विदेस देस, चहु कांनी छांनी नहीं हरख हिंदवांणी है।

पातसाही कहां क्या उथाप थाप तेरे हाथ, सात सर पार फतह मरदांणी है।
कहै कवि सुन्दरदास, राव अमरेस आज, ऐसे अदल्ली हूंत दिल्ली दहलांणी है॥[1]

अमर सिंह राठौड़ के बल-वैभव से सम्बन्धित रचनाओं के अतिरिक्त कवि के फुटकर गीत भी मिलते हैं जिनमें समसामयिक शूरवीरों के अनुपम शौर्य का प्रशस्ति गान किया गया है।

केसरी सिंह—

ये बारहठ अखावत शाखा के चारण (१६५१ ई०) और मारवाड़ राज्य के पाली परगने के रूपावास नामक ग्राम के निवासी थे। इनके पिता शंभुदान साधारण-श्रेणी के कवि थे। अपनी विद्वता एवं गुण ग्राहकता के कारण शीघ्र ही ये महाराजा जसवंत सिंह (प्रथम) के कृपापात्र बन गये। साहित्य सेवा के पुरस्कार स्वरूप इन्हें गुरड़ाई नामक गांव देकर सम्मानित किया गया किन्तु जसवंत सिंह की मृत्यु के पश्चात् मुसलमानों ने इनके गांव को [illegible] लिया था। ये महाराजा अजीतसिंह के भी कृपापात्र रहे। इनके गोरखदान तथा करणीदान नामक दो पुत्र हुए। इनका निधन सन् १७०३ ई० के आसपास हुआ था। इनके द्वारा निर्मित स्फुट दोहे तथा गीत उपलब्ध हैं। महाराजा अजीतसिंह के छप्पन के पहाड़ों से निकल कर आने पर, हर्ष-विभोर केसरीसिंह ने उन्हें यह गीत सुनाया—

---

१ राजस्थानी सबद कोस (प्रथम खण्ड)- भूमिका- श्री सीताराम लाळस पृ०१४८

असपत रो साल दीली रो ओठम, पूरा वेहूं पञ्चां सूं प्रीत ।
गिणिया दिनां मांय पत्रियां गुर, जोधाणे आसो अगजीत ।।
हाथी वरणां घरां हींडळसी, सुरहरा रा इसा सभाव ।
दूणा पटा वधारा देसी, अप्प जिसा करसी उमराव ।।
प्रजा नचीत रहो सुख पाती, सुख पावो सह-कवेसर ।
पांणेची घर किसूं पीछांणां, नवी पाटसी जिसो नर ।।
चक्कवत होसी अभनमो चूंडो, घरणा दाखऊं किसूं घणो ।
मैं दीठो इसड़ो महाराजा, तेज पुंज जसराज तणो ।।[१]

हरदान—

ये सांदू शाखा के चारण और मारवाड़ राज्य में स्थित वाली परगने के मिरगेसर नामक ग्राम के निवासी थे। इनके द्वारा निर्मित फुटकर छन्द उपलब्ध होते हैं।[२] इन्होंने सत्रहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में काव्य-सृजन किया था। चारण कवियों ने अपनी कुल देवियों का स्मरण बड़े ही आदर और श्रद्धा के साथ किया है। अपनी कुलदेवी माता आवड़ की वन्दना करते हुए कवि हरदान ने लिखा है—

यह रक्खियो रक्खियो भाव दक्खियो भूमंडळ ।
वाखलियो जमहरां काठ तीन्हो अप्पह वळ ।।
वाखलियो लप डाल लोढ़णो कियो ब्रह्मंड समाणो ।
अरक रोक ऊगतो, दाख पोरूख आपणो ।।
जीभली निरम्मळ जस कमळ, सदा स उज्जळ भाळहळ ।
आवड़ा प्रवाड़ा तैं किया, वाई वावन सत्त वळ ।।[३]

बखसीराम बारहठ —

ये जोधपुर राज्य के मथानिया ग्राम के निवासी थे। इनका रचनाकाल सत्रहवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध ठहरता है। इनकी भक्ति-विषयक फुटकर रचनाएं मिलती हैं। कवि ने राम और कृष्ण को सम्बोधित कर, भक्ति-गीतों

---

१ पुस्तक-प्रकाश, जोधपुर में उपलब्ध हस्तलिखित प्रति के आधार पर.
२ चारण साहित्य का इतिहास – डॉ० मोहनलाल जिज्ञासु पृ० २२८.
३ चारण साहित्य का इतिहास – डॉ० मोहनलाल जिज्ञासु पृ० २८६.

का निर्माण किया है। माया-मोह के आगम माया-जाल में [illegible] पापकर्म में लिप्त हो जाता है। अज्ञान के अन्धकार में भटक रहे प्राणी [illegible] की क्षण-भंगुरता और झूठे-बन्धनों से मुक्त होने की प्रेरणा देते [illegible] ईश्वर-महिमा का बड़ा ही सुन्दर वर्णन किया है—

थावी केतली नर अमर थाणी, भाखे गुन [illegible] ।
वचस्यो नहीं आविया वाणी, गावो रे नावो [illegible] ॥
वांटो वीत आवणें वारें, लाछ नही [illegible] ।
थिर औ दिन रहसी नह थारें, तू नर ईश्वर क्यूं न [illegible] ॥
यूं तरतर पड़ता दिन आसी, जीहा कर [illegible] ।
पाकड़ जम घातेला फांसी, पापी इण दिन नें [illegible] ॥
वपु माया नें जाण विराणी, पांव न धर [illegible] ।
रघुवर सांचो दास रतांणी, बोल [illegible] ॥[1]

दलपत—

ये अखावत बारहठ शाखा में (१६८८ ई०) उत्पन्न हुए थे और [illegible] राज्य के इन्दोकली गांव के निवासी थे। पराक्रमी, विद्वान [illegible] साथ-साथ ये निर्भीक और स्पष्टभाषी भी थे।

बखतसिंह द्वारा महाराजा अजीतसिंह की हत्या से [illegible] 'पितामार प्रकास' नामक काव्य ग्रंथ का निर्माण किया। [illegible] वर्णन, बखतसिंह को बहुत अखरा। क्रोधित होकर उन्होंने कवि [illegible] निष्कासित कर दिया। बीकानेर-नरेश ने इन्हें अपने राज्य में [illegible] प्रदान किया। बीकानेर के महाराजा दलपत कवि से [illegible] लिखी हुई अन्य रचनाओं में 'वर्ण रक्षा विचार' तथा [illegible] सन् १७६५ ई० के आसपास बीजाजी के साथ, [illegible] पाई।

महाराजा अजीतसिंह की हत्या पर कवि ने [illegible] अनेक निन्दात्मक दोहे लिखे—

बखता बखत बाप रा, [illegible] ।
हिंदवाणी रो सेहरो, [illegible] ॥

---

१ श्री सौभाग्यसिंह शेखावत के निजी संग्रह से.

वापो मत कह वखनसी, कांपे है केकाण।
एकर वापो फिर कयो तुरंग तजैलो प्राण ॥

वसू नहींथिर नह थिर वखत, रह न सके थिर राज।
वखता थिर थारे वपु, धव्वो कलंक धराज ॥

छत्रपति छंदां छवैं, सीस चढावे छाप।
सो दलपतिया सुकवि रे, चामुंड रो परताप ॥

नह राजा खत्री नहीं, घलण जनैतां घाव।
देह धार कळजुग दियो, दुनिया में दरसाव ॥

नृप वगता साच्यो नहीं, जूंना नरका जीव।
आछी दी अजमाल रा, नवा नरक री नींव ॥[१]

महाराजा अभयसिंह की मृत्यु के पश्चात् कविया करणीदान ने महाराजा रामसिंह की भी स्वामिभक्ति के साथ भरपूर सेवा की। जब वखतसिंह ने जोधपुर पर आक्रमण किया तब मारोट से करणीदान और जगन्नाथ पुरोहित दोनों ग्वालियर गये और महाराजा जयसिंह के मित्र एवं पगडी बदल भाई मल्हार राव होल्कर को रामसिंह की सहायता के लिए सेना भेजने को राजी कर लिया। मल्हार राव ने अपनी सेना रामसिंह की सहायता के लिए भेजी थी इसकी पुष्टि रामसिंह द्वारा भवानी सिंह शेखावत ठिकाना दांता को लिखे गये एक पत्र से होती है।[२]

परन्तु, रामसिंह परास्त हो गये और जोधपुर पर वखतसिंह का अधिकार हो गया। वखतसिंह एवं करणीदान की शत्रुता पहले से ही चली आ रही थी।[३] लोक-जीवन में वखतसिंह के पितृ-हत्या जैसे जघन्य अपराध की भर्त्सना में निम्नलिखित दोहा अत्यन्त लोकप्रिय है

वापा मत कह वगतसी, कांपत है केकांण।
एय वार वापो कहै, पमंग तजेला प्रांण ॥

---

१ श्री देवकर्ण वारहठ इन्दोकली के सौजन्य से.

२ वरदा, वर्ष ४, अंक ४ में श्री सौभाग्य सिंह शेखावत का ठिकाना दांता के कुछ ऐतिहासिक पत्र विषयक निवन्ध, पृ० ९, १०.

३ कविया करणीदान और सूरजप्रकास– डॉ० राजकृष्ण दूगड़, पृ० ३०.

अर्थात् हे बखतसिंह ! इस घोड़े को बप्प ! [illegible] नाम-सम्बोधन से घोड़ा कँपकँपा रहा है। यदि [illegible] मुख से बप्प-सम्बोधन उच्चरित हुआ तो यह [illegible] देगा। कवि के इस कथन में व्यंग्य छुपा हुआ है। श्री [illegible] ने इस दोहे का रचनाकार कविया करणीदान [illegible] मेघाणी जी का यह कथन सही नहीं है। उपर्युक्त [illegible] करणीदान द्वारा लिखा गया न होकर, कवि [illegible] पचीसी' के २५ दोहों में से एक है।[2] कविया करणीदान [illegible] परस्पर शत्रुता तथा कवि की स्पष्टवादिता के कारण ही [illegible] करणीदान-रचित माना जाता रहा है।

इसी प्रकार कविराजा श्यामलदास ने वीर विनोद में [illegible] दोहे का उल्लेख किया है —

बखता बखत वाहिरा, क्यूं मार्‌यो [illegible] ।
हिंदवाणी को सेवरो, तुरकाणी [illegible] ॥[3]

कतिपय विद्वान इस दोहे का रचनाकार कविया करणीदान [illegible] हैं परन्तु यह दोहा भी दलपत बारहठ प्रणीत ही है।

सत्रहवीं शताब्दी की आलोच्य कालावधि में [illegible] विवरण उपलब्ध होते हैं। इन कवियों ने किसी [illegible] नहीं किया, फिर भी फुटकर रचनाओं के कारण [illegible] सम्मान किया जाता है। स्थानाभाव के कारण [illegible] और कृतित्व का विस्तृत विवरण न देकर इनका [illegible] किया जा रहा है। गीत, दोहे तथा कवित्त-[illegible] में दल्ला आसिया (सं० १६४५), [illegible] प्रताप सिंह (सं० १६३२-१६५३), [illegible] राय सिंह (सं० १६२८-१६६८), [illegible] किशनदास, राजसिंह (सं० १६६०), [illegible] महाराणा अमरसिंह (सं० १६५३-७३), [illegible] मानसिंह (सं० १६५६-७१), [illegible]

---

१ चारणो अने चारणी साहित्य - श्री [illegible]
२ श्री सौभाग्य सिंह शेखावत के निजी संग्रह में [illegible] चूक पचीसी में.
३ वीर विनोद (भाग - २) - श्री श्यामल दास, [illegible]

आढ़ा (सं० १६७०), रूपसिंह लाळस (सं० १६७०), परसराम देव (सं० १६७७), भोपत आसिया (सं० १६८०), चतुरा मोतीसर (सं० १६८५), मनोहर भोजग (सं० १६६०) और भाट हरिदास (सं० १७००) प्रभृति का महत्त्वपूर्ण स्थान है।

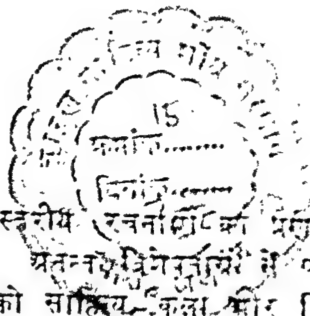
उपर्युक्त कवियों के अतिरिक्त सत्रहवीं शताब्दी के इस कालखण्ड में, अनेक दोहे, गीत और कवित्त आदि किसी न किसी कवि–नाम से जुड़े मिलते हैं। आधारभूत प्रमाणाभाव के कारण अपूर्ण विवरण वाले ऐसे कवियों और उनके नाम से प्रचलित संदिग्ध विवरणों को आलोच्य कालावधि में सम्मिलित नहीं किया है।

जीवन परिचय, काव्य रचनाओं, तत्कालीन परिस्थितियों तथा समसामयिक घटनाओं के सूक्ष्म-अध्ययन के बगैर, किसी कवि का भ्रान्तिदायक विवरण प्रस्तुत कर देने से पुस्तक के आकार में वृद्धि अवश्य हो सकती है परन्तु ऐसा प्रयास बहुधा साहित्य प्रेमियों के लिए प्रश्नचिन्ह बन जाता है। इतना ही नहीं अप्रमाणिक विवरणों के कारण साहित्य में भ्रांतिदायक, असंगत तथ्यों की पुनरावृत्ति का क्रम आरम्भ होने लगता है।

मुख्य समस्या कवि-संख्या बढ़ाने की नहीं प्रत्युत अद्यावधि ज्ञात कवियों के व्यक्तित्व और कृतित्त्व के सांगोपांग अध्ययन की है। प्राचीन लीक से हटकर अपनी अन्वेषण–प्रविधि को हमें अधिक से अधिक वैज्ञानिक बनाना है ताकि राजस्थानी साहित्य के इतिहास लेखन में जो असंगतियां दोहराई जाती रही हैं, कम–से–कम भविष्य में उनकी पुनरावृत्ति न हो।

अठारहवीं शताब्दी के कवि और उनकी कृतियां —

जैसा कि संकेत दिया जा चुका है वि० सं० १६५०-१८०० के मध्य-कालीन कालखण्ड में प्रकार और परिमाण, इन दोनों ही दृष्टियों से उच्चकोटि के काव्य का सृजन किया गया। आलोच्य काल में घटित महत्वपूर्ण ऐतिहासिक घटनाओं में नागौर के शासक राव अमरसिंह के शौर्य एवं विस्मयपूर्ण बलिदान की घटना, शाहजहां के विद्रोही शाहजादों-मुराद, शाहशुजा तथा औरंगजेब द्वारा शाही-पक्ष के विरुद्ध लड़े गये युद्धों की घटनाएं जिन्होंने इतिहास को एक महत्त्वपूर्ण दिशा प्रदान की तथा जोधपुर के महाराजा अभयसिंह द्वारा गुजरात के सुबेदार सरबुलन्दखां को युद्ध में पराजित कर अपनी कीर्ति पताका को गुजरात तक फहराने की घटना का विशेष स्थान है। अधिकांश समसामयिक कवियों को इन शौर्यपूर्ण घटनाओं ने प्रेरित किया जिनसे अनेक उच्चकोटि की काव्य-रचनाओं का जन्म हुआ। मध्यकालीन काव्य में समस्त काव्य – जनित विशेषताओं का समायोजन तथा भक्ति,



शृंगार और वीर रसों में उच्चस्तरीय रचनाओं का प्रणयन, रचनाकारों की बहुज्ञता का परिचायक है। अतः [illegible] में प्रचुर साहित्य-सृजन के कारण ही, मध्यकाल को साहित्य-कला और चित्र विकास का स्वर्णकाल कहा जाता है।

शाहजहां का शासन काल अपेक्षाकृत शान्ति तथा साहित्य एवं विविध कलाओं के बहुमुखी विकास का काल था। प्रान्तीय शासक अपने वंश-परम्परागत मूल्यों को विस्मृत कर, मुगल शासन-व्यवस्था के प्रशंसक बन गये थे। मुगल शासकों के साथ अपनी राजकुमारियों का विवाह कर, क्षत्रिय-शासक गौरवान्वित होने लगे। सुरा-सुन्दरी तथा व्यक्तिगत स्वार्थों की मादकता तले क्षत्रियों का शौर्य और स्वाभिमान लुप्तप्राय हो चुका था।

परस्पर वैमनस्य और आपसी फूट के कारण यहां के शासक अपने ही स्वजनों के साथ बल-परीक्षण में लगे थे। स्वाभिमानी शासकों के हृदय में मातृभूमि के प्रति अनुराग और शौर्यत्व की चिन्गारियां शेष थीं परन्तु अधिकांश शासक मुगल-बादशाह के समक्ष नत-मस्तक थे। भारतवर्ष में मुगल-शासन की सुदृढ़ता का मुख्य कारण, प्रान्तीय शासकों के [illegible] का पतन ही था।

वि० सं० १७०१ श्रावण शुक्ला द्वितीया के दिन शाहजादा दाराशिकोह की हवेली में लगे दरबार में बख्शी सलावत खां ने नागौर के शासक राव अमरसिंह राठौड़ को, अपशब्दों द्वारा अपमानित किया। स्वाभिमानी अमरसिंह, भरे दरबार में अपना अपमान सहन न कर सके। अपनी कटार निकाल कर उन्होंने सलावत खां को तत्काल मार गिराया। तदन्तर दाराशिकोह के विश्वासपात्र राजपूत सरदारों ने षड्यंत्र द्वारा अमरसिंह राठौड़ का वध कर डाला। इस घटना की पुष्टि सभी इतिहास ग्रन्थों से होती है। अमरसिंह राठौड़ के इस प्रशस्तिमय उत्सर्ग के सम्मान में प्रायः सभी राजस्थानी कवियों ने काव्य-प्रणयन किया है। केसरदास गाड़ण तथा कवि नरहरिदास बारहठ रचित राव अमरसिंहजी रा दूहा, महेशदास राव प्रणीत राव अमरसिंघजी रा सलोका और [illegible] के कवित्तों में इस घटना का अत्यन्त प्रभावशाली चित्रण मिलता है। इतिहास एवं काव्यत्व दोनो दृष्टियों से ये स्वतन्त्र रचनाएं हैं। इन रचनाओं के अतिरिक्त भी समसामयिक कवियों द्वारा लिखित [illegible] निसाणी, गीत, कवित्त, छन्द और अनगिनत संख्या में दोहे उपलब्ध होते हैं जिनमें अमरसिंह राठौड़ का गौरवांकन है।

वि० सं० १७१४ में बादशाह शाहजहां अस्वस्थ हो गये। [illegible]

अस्वस्थता के कारण, बादशाह ने झरोखा-दर्शन देना भी बन्द कर दिया। शाहजहां की बीमारी का समाचार चारों ओर फैल गया। शाहजहां की तब तक शेष जीवित सन्तानों में चार पुत्र दाराशिकोह, शाहशुजा, औरंगजेब और मुराद तथा तीन पुत्रियां जहांआरा, रोशनआरा और गोहनआरा थी।

सबसे बड़ा शाहजादा दाराशिकोह शिक्षित, सुसभ्य और उदार विचारों का होने के साथ-साथ पितृभक्त भी था। उसे पंजाब का सूबेदार नियुक्त किया गया था परन्तु अधिकांशतः वह अपने पिता के साथ ही रहता था। शाहजहां ने अपने सभी सरदारों के समक्ष दाराशिकोह को उत्तराधिकारी घोषित कर दिया था।

बंगाल में शाहशुजा, दक्षिण में औरंगजेब और गुजरात में मुराद सूबेदार नियुक्त थे। ये तीनों सिंहासन प्राप्त करने को प्रयत्नशील थे। अतः दाराशिकोह और शाहजहां के मध्य सुदृढ़ सम्बन्ध इनके लिए चिन्ता का विषय बने हुए थे। इसी समस्या से निपटने के लिए वे आपस में पत्र-व्यवहार भी कर रहे थे क्योंकि मुस्लिम-कानून में लचीलेपन के कारण, उत्तराधिकार के निर्णय बादशाह के आदेशानुसार न होकर बहुधा तलवार के बल पर होते आए हैं। मुराद और औरंगजेब ने परस्पर साम्राज्य-विभाजन सम्बन्धी समझौता भी कर लिया। तीनों शाहजादों ने विशाल सेना संगठित कर, अपने पिता शाहजहां से मिलने का बहाना बना कर राजधानी की ओर प्रस्थान कर दिया। शाहजहां ने अपना हस्ताक्षर-युक्त पत्र भेजकर शाहजादों से विशाल सेना के साथ न आने का आदेश दिया परन्तु विद्रोही-शाहजादे अपने निश्चय को फलीभूत करने के लिए दृढ़-प्रतिज्ञ थे। अपने पिता द्वारा प्रेषित आज्ञा-पत्र के प्रत्युत्तर में मुराद और शाहशुजा ने अपने आप को स्वतन्त्र बादशाह घोषित कर दिया। औरंगजेब दूरदर्शी और चतुर था। अतः उसने स्वयं को बादशाह घोषित नहीं किया। अपनी सेना के साथ वह मुराद के साथ जा मिला। शाहजहां की ओर से राजा जयसिंह तथा दाराशिकोह के पुत्र सुलेमान को वि० सं० १७१४ में शुजा के विद्रोह को कुचलने के लिए, पूरब में भेजा गया। बनारस के समीप शाहशुजा की पराजय हुई। अपनी जान बचाकर वह बंगाल की ओर चला गया।

मुराद और औरंगजेब के षड़यन्त्र को विफल करने के उद्देश्य से, राजा जसवन्त सिंह और कासिम खां, उज्जैन की ओर रवाना हुए। उज्जैन से लगभग १४ मील दूर धरमत नामक स्थान पर दोनों सेनाओं में भीषण युद्ध हुआ। कासिम खां ने जसवन्त सिंह का साथ नहीं दिया और वह समर-स्थल से कूच कर गया।

शाही पक्ष की ओर से जसवन्त सिंह, अर्जुन गौड़ [illegible] आदि अनेक योद्धाओं ने भाग लिया परन्तु विद्रोही-शाहजादों के प्रबल [illegible] के फलस्वरूप न सिर्फ अनेक क्षत्रियों को अपने प्राणों से हाथ धोना [illegible] महाराजा जसवन्त सिंह ने भी समरांगण से पलायन कर लिया।

धरमत विजय से उत्साहित हो मुराद और औरंगजेब [illegible] आगे बढ़े। 'आगरा से लगभग ८ मील दूर सामूगढ़ नामक स्थान पर [illegible] ने उन्हें ललकारा। इस युद्ध में दारा पराजित हुआ। आगरा [illegible] ने अपने पिता शाहजहां को बन्दी बना लिया। मुराद को भी [illegible] अपने दीवान की हत्या का अभियोग लगाकर औरंगजेब ने उसे [illegible] शाहशुजा ने पुनः शक्ति परीक्षण का प्रयास किया परन्तु उसमें भी [illegible] रहा। अराकान की ओर जाते समय अराकानियों द्वारा उसकी [illegible] दाराशिकोह की तलाश जारी थी। पकड़े जाने पर उसे [illegible] दारा शिकोह के पुत्र सुलेमान को जहर देकर मार दिया गया। [illegible] का पथ कंटक विहीन था। कारावास में ७-८ वर्ष तक रहने के [illegible] की भी मृत्यु हो गई।

मुराद, औरंगजेब और शाहशुजा द्वारा किए गये विद्रोहों [illegible] के साथ हुए इन युद्धों का तत्कालीन कवियों ने अत्यन्त प्रभावोत्पादक [illegible] है। कवि महेशदास राव रचित विन्हैरासौ कृति में इन घटनाओं [illegible] विवरण मिलता है। कविया करणीदान ने सूरजप्रकास में, [illegible] राजरूपक और नाथा सांदू ने गुण दूहा केसरीसिंघ [illegible] घटनाओं पर काफी प्रकाश डाला है।

आलोच्यकाल की तीसरी महत्त्वपूर्ण घटना [illegible] यह युद्ध वि.सं. १७८७ में, जोधपुर के महाराजा अभयसिंह [illegible] सरबुलन्द खां की सेनाओं के मध्य हुआ था। [illegible] तथा युद्ध विजय से महाराजा अभयसिंह के गौरव में [illegible] समर क्षेत्र में अनेक कवि उपस्थित थे। अतः उनके [illegible] तथा इतिहाससम्मत कहे जा सकते हैं। [illegible] करणीदान बारहठ, वीरभाण रतनू, [illegible] तत्कालीन कवियों ने अहमदाबाद युद्ध पर [illegible]

इन महत्त्वपूर्ण घटनाओं के अतिरिक्त भी [illegible] घटित हुई जिनके कारण इतिहास के [illegible] शताब्दी में अपने काव्य-प्रसूनों की चिरस्थायी [illegible] संस्कृति को महका देने वाले कवियों के [illegible] यहां प्रस्तुत किया जा रहा है—

अजवा —

ये आढ़ा शाखा के चारण और सिरोही राज्य में स्थित जांखर ग्राम के निवासी थे। अपनी पत्नी के देहान्त से विक्षुब्ध कवि ने अनेक छन्द लिखे। इनकी फुटकर कविताएं मिलती है[1]। असमय पत्नी-वियोग से दुखी हृदय के उद्‌गार अत्यन्त मर्मस्पर्शी हैं—

कंत पहल्ला कामणी, माधव मत मारेह।
रावण सीता ले गयो, सो दिन चीतारेह ॥
सीता हुवो हरण, देख घर सूना, सुन लखमण कहियो श्रीराम।
बिन धण नाह दिसे विहूंणां, धण विन नांह न दीसे धाम ॥
इसड़ा वचन सुणावे अवरां, भारी पड़े आप जद भीड़।
अंतरजामी जांण आपरी, पैलां तणी न जाणे पीड़ ॥
मिनखां तणी लुगायां मारे, कहतां पण समुभावे कूण।
पिंड में आप किसूं सुख पायो धाड़े दिन दस गया धूण ॥
पैलां कने पागड़ी पटकी, दोरा हुवा हुवां दलगीर।
घर घर फिरे सिया निठ घेरी, वांनर रीछ लिया जद भीर ॥
असंग धार कहे कद अजवो, धार मती एतरो मन धेष।
हुवौ जको भळे हो जासी, लिखियो तको विधाता लेख ॥[2]

अजवा के काव्य में विरह और वियोग की तीव्र अनुभूति परिलक्षित होती है। उनके द्वारा प्रस्तुत विरह वर्णन सरल तथा मार्मिक होने के साथ-साथ हृदय में टीस उत्पन्न करने वाला है।

वना —

ये अठारहवीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में बारहठ शाखा के चारण कवि तथा मारवाड़ राज्यान्तर्गत् कोटड़ी नामक ग्राम के निवासी थे। इनकी फुटकर रचनाएं मिलती हैं। निन्दात्मक काव्य लिखने वाले कवियों में इनका प्रमुख स्थान माना जाता है। मरहटों के आक्रमण के समय चांदावती और उसकी दासी का कायर पति के प्रति किये गये वार्तालाप का, कवि ने निम्न गीत में बड़ा सुन्दर कटाक्षपूर्ण चित्रण किया है। रायजादी

---

१ चारण साहित्य का इतिहास — डॉ० मोहनलाल जिज्ञासु, पृ० २३३.
२ वही, पृ० २८७.

द्वारा युद्ध से भाग कर आने वाले पति के लिए भोजन की तैयारियां करते हुए देखकर दासी को बड़ा आश्चर्य हुआ। भोजन पूरा पका भी नहीं था कि कायर पति युद्ध-क्षेत्र से भाग कर आ गया —

चांदावत कहै चाढो चरवां, दोड़ो वेगज दासी ।
वाजत गोळा दिवणी विढिया, आज तो रावळ आसी ॥
जोड़े करां वडारण जंपे, मुलक [illegible] चोखी मोसो ।
रण में कहो कंथ आवण रो, मोनैं किसो भरोसो ॥
वसी अनै खाटू नह विढ़ियो, भिन भिन जाणे भेदो ।
भारथ नाह सदा ही भाजै, उनरे वयण उमेदो ॥
कांसो करो सितावी कामण, भामण पंथ दिन भाड़ो ।
पाती पाग पमंग दे पैलां, आसी कंथ उबाड़ो ॥
भरता तणी परख कर भोजन, रायजादी रंगवादो ।
इसड़ी करी उतावळ इन्दै, घघसींजै ही घासो ॥[1]

इसी प्रकार निम्नलिखित गीत में सास-बहू संवाद के रूप में कायर व्यक्ति की निन्दा की गई है —

सकती वहू कहै सासूजी, अतरां कांई उदासी ।
कंथा तणो भरोसो मोनैं, वे कुनळां घर आसी ॥
अड़तां लार भागतां आगै, वातां पणी बनासी ।
वागां खाग नणद रा वीरा, आगे भागे आसी ॥
ससतर श्याम दै आया सारा, कपड़ा बीन कुमासा ।
ऐ तो वात करे छी आगै, अतै उघाड़ा पासा ॥
महीना नौ राख्यो उर मांही, आगम वाळां आसी ।
कहती जिसो तिहारो कंथो, सांचो ए वहू सासी ॥[2]

रामदान —

ये मारवाड़ राज्य में स्थित शेरगढ़ परगने के [illegible] के निवासी और लाळस शाखा में उत्पन्न हुए थे। इनके लिखे [illegible]

---

१ श्री नारायण सिंह भाटी नानण, [illegible] जोधपुर के निजी संग्रह से उपलब्ध प्रति के आधार पर.
२ वही.

भी अपने समय के ख्यातिप्राप्त कवि थे। रामदान ने अपनी प्रारम्भिक शिक्षा अपने पिता के संरक्षण में प्राप्त की। इसके पश्चात् ये उदयपुर के महाराणा भीमसिंह के आश्रय में रहे। जोधपुर-नरेश मानसिंह ने पत्र लिखकर इन्हें अपने दरबार में बुला लिया। महाराजा मानसिंह इनके काव्य-चातुर्य से बहुत प्रभावित हुए और उन्होंने तोलेसर नामक गांव देकर कवि का यथोचित सम्मान किया। तत्कालीन बीकानेर-नरेश के आग्रह पर इन्होंने 'करनी जी रा रूपक' नामक ग्रन्थ बनाकर अपनी विद्वत्ता का परिचय दिया।

रामदान ने उदयपुर के महाराणा भीमसिंह से सम्बन्धित 'भीमप्रकाश' नामक छन्दोबद्ध डिंगल-काव्य का भी निर्माण किया। कवि के अनेक फुटकर गीत भी मिलते हैं।

डूणीराव चांदसिंह के पराक्रम से प्रभावित होकर लिखे गीत की कुछ पंक्तियां देखिए —

करै वाखाण देवाण आलम कलम, काढ़ केवाण असुरांण काढ़ै।
पुर जोधाण बीकाण उदियापुर, चढ़ हिंदवाण नै पाण चाढ़ै॥
एक हथ मरद हिम्मत सिरै रावतां, भिड असुर जावतां प्रभति भाखी।
असधारी पुरुष जयनगर आवतां, राव गोगावतां टेक राखी॥[1]

कवि ने डिंगल के अलंकार वयण सगाई के नियमों का निर्वाह करते हुए वीर रस के काव्य का प्रणयन किया। काव्य की भाषा सरल, सुन्दर और प्रवाहपूर्ण होने के साथ-साथ हृदय में वीर रस का संचार करने वाली है।

मानसिंह—

ये आसिया शाखा के चारण और मारवाड़ राज्य में स्थित पाली परगने के बसी नामक ग्राम के निवासी थे। आरम्भ में कुछ दिन मेवाड़ रहकर ये मारवाड़ में आकर बस गये। इनके काव्य चातुर्य से प्रभावित होकर महाराजा सूरसिंह ने इन्हे बसी (पाली), नेसड़ो (पाली), चाली (जोधपुर) तथा रुन्द्रमाल (जालोर) नामक चार ग्राम देकर पुरस्कृत किया था।

मानसिंह ने रावत केसरी सिंह चूण्डावत (प्रथम) सलूम्बर के तलवार धारण और पराक्रम का उल्लेख करते हुए लिखा है—

---

१ श्री सौभाग्यसिंह शेखावत के सौजन्य से.

कहर मेळ लसकर डमर जेतहर कळघर, अवर नहं [illegible] ।
केहरी ग्रहै करमाळ कांधाळरै, कोध ऊथळ [illegible] ॥
वांसपुर भांजतां सोच पड चहूं वळ, सकळ खळ माण [illegible] ।
दूरै डूंगर परोथर कियो देव गरे, थांह वर भना नूं [illegible] ॥[1]

कवि मान में विलक्षण कवि की अपेक्षणीय [illegible] ।
भाषा पर कवि का पूर्ण अधिकार दिखाई देता है। ये [illegible]
थे। अतः इन्होंने अपने काव्य में शूरवीरता का विवरण [illegible] ।
वयण सगाई का प्रयोग सुन्दर एवं आकर्षक है।

माना —

ये आसिया शाखा के चारण, मेवाड़ राज्य के निवासी [illegible]
वालों के पूर्वज कहलाते हैं। इनके फुटकर गीत मिलते हैं।

क्षत्रिय-नरेशों में मेवाड़ के महाराणा जयसिंह का [illegible]
महाराणा धर्मप्रिय व्यक्ति थे और हिन्दू धर्म की रक्षा के लिए [illegible]
मुगल बादशाह औरंगजेब से युद्ध किया था। कवि माना ने [illegible]
में, मेवाड़-नरेश की धर्मवीरता का वर्णन करते हुए लिखा है -

आयो अवरंग असी चत आणे, रोद तरब [illegible] ।
रूकां पोण खत्रीध्रम राखै, जग पत्त में [illegible] ॥
कलम हिन्दुवां एक करेया, सेन लिया [illegible] ।
खत्री दुआं वेच दीदो खत, खत [illegible] ॥
केसव तो राहां दो कीदी, दुनिया में [illegible] ।
खग तोले कसियो खूमाणे, हिन्दू [illegible] ॥
कर सुन्नत काजी गुर करतो, पलियो [illegible] ।
राजड़ सुतन न हूंयो राणो, मसुरां [illegible] ॥[2]

कवि मान उन स्वाभिमानी [illegible]
जीवन की अपेक्षा वीरोचित मृत्यु को [illegible]

---

१ श्री हनुवंत सिंह देवड़ा [illegible] जोधपुर के [illegible]
प्रति से।
२ श्री सौभाग्यसिंह शेखावत के निजी संग्रह में [illegible]

कि उनके काव्य में मातृभूमि के बन्धनों को तोड़ने का उद्घोष है।

साईदास —

ये भूला शाखा के चारण और वागड़ प्रान्त में स्थित नाराणा ग्राम के रहने वाले थे। इनकी फुटकर रचनाएं मिलती है।

अपने भक्ति-विषयक गीतों में कवि ने ईश्वर-भक्ति को मानव जीवन का वास्तविक लक्ष्य माना है। ईश्वर की महिमा को विस्मृत कर मानव यदि स्वयं को ज्ञानवान् समझता है तो यह उसकी भ्रान्तिमात्र ही है। माया-मोह तथा विषय-वासनाओं की सांसारिक सुख-सुविधाएं पतंग की क्षणिक छाया के सदृश है जो स्थाई नहीं रहती। सच्चा सहारा तो माधव-मुरारी कृष्ण का ही हो सकता है। माया-मोह के आवरण के कारण मनुष्य सत्य को असत्य और असत्य को सत्य समझकर भटकने लगता है। ऐसे संकट के समय ईश्वर का सम्वल ही उसका मार्गदर्शक वन सकता है। सांसारिक वासनाओं के इन्द्रजाल में भटकते हुए मानव को हरि स्मरण रूपी प्रकाश-स्तम्भ दिखाते हुए कवि ने लिखा है —

आसा तर किसनतणो तजि ओळो, सर राहे सुख तणी संसार।
छांह कितीयक वीर छीपवो, गुड़ी उफीजी तणी गंवार ॥
माया तणी म पड़ महणारभ, बुडसे हर विळगा विण बांह।
वार किती मूरख वीसामो, छवतीं निहंग तणी परछांह ॥
माया छाया तणो मोहियो, ओबुध पड़ै भोगे अवस।
पड़ियो वस तूं तणे पड़ाई, वहै पड़ाई पवन वस ॥
हर सरखो विसारज हेतू, तूं जाणे वुध तुझ तणी।
भमती पड़ती तणे भरोसै, धाम टाळ वाहम्म धणी ॥[1]

भक्त हृदय में संचित उद्गारों को अभिव्यक्त करने में साईंदास का काव्य पूर्णतः सफल रहा है। अत्यन्त सरल और सरस शान्त रस प्रधान भाषा में कवि ने ईश्वर महिमा का विवरण प्रस्तुत किया है।

---

१ डॉ० शक्तिदान कविया के निजी संग्रह में उपलब्ध हस्तलिखित प्रति के आधार पर।

गोरखदान —

ये किसनगढ़ राज्य में स्थित गोदियाणा ग्राम के निवासी तथा वारहठ शाखा के चारण थे। इनके समय महाराजा राजसिंह [illegible] थे। इनके फुटकर गीत मिलते हैं।

कवि गोरखदान द्वारा वर्णित किसनगढ़ के महाराजा [illegible] अपने नाम के अनुरूप पराक्रमी भी है। कवि-प्रणीत गीत की कुछ पंक्तियां देखिए —

वप छळ सवळ लियां खत्र वट वट, विध जुधि विड़दा [illegible]
आछटो तेग वहण घण असुरां, दतिइळ नू [illegible] ॥
पित चे मोहोर कांम रस पाड़ै, हद जीवत [illegible] ।
थरपे भलां पिडतां थारो, नाम वहादर [illegible] ॥[1]

चावण्डदास —

ये महड़ शाखा के चारण और संभवतः मेवाड़ के निवासी थे। इनके फुटकर गीत मिलते हैं। शाहपुरा के राजा उम्मेदसिंह सीसोदिया के अद्वितीय शौर्य का वर्णन करते हुए कवि ने लिखा है —

ईखे वेढ लंका ज्यां अपारां कंका पोक [illegible],
काळी वीर कळक्के श्रोण का प्याला [illegible] ।
हूरां रंभ हजारां गैणाग ढका [illegible],
सोभ णंकां नाथ धाया नाध [illegible] ॥
लाखां वाण गोळा खें नखत्रां जूं तूटवा [illegible],
सेसरा तूटवा लागा भार हूं [illegible] ।
लागा सरां सेला फील सजोड़े [illegible],
यूं चौड़े जूटवा लागा माध ने [illegible] ॥[2]

चावण्डदान के गीतों में शौर्य एवं [illegible]

---

१ चारण साहित्य का इतिहास – डॉ० मोहनलाल [illegible], पृ० [illegible]
२ डॉ० राजकृष्ण दूगड़ के निजी संग्रह में उपलब्ध [illegible] के आधार पर।

होते हैं। डिंगल भाषा में रचित गीत अत्यन्त सरल, सजीव तथा प्रभावोत्पादक हैं।

शंकरदान —

इनका जन्म मारवाड़ राज्य के भदोरा नामक ग्राम में हुआ था। इनके पिता का नाम प्रतापदान सांदू था।[1] इनके फुटकर गीत मिलते हैं।

कवि ने भगवती महामाया की आराधना करते हुए लिखा है —

अंबाजी सरणे राज रे आया पथ राखो दुर्गे महामाया ।।टेर।।
भूत प्रेत न कीनी भवानी आपेई ऊँट वणाया।
असी कोस उदियापुर जंतर पळ में आय पुगाया ।।अंबाजी।।
भमक भमक पग भांभर बाज्या अधर अरण दरसाया।
लाल वरण भाल विच बिंदली दळपत रूप देखाया ।।अंबाजी।।
जग मग हांस जवारन ज्योति भळ कुंडळ भर लाया।
शंकर रमज समभ सकती कूं छाकोई छंद छपाया ।।अंबाजी।।[2]

ब्रह्मदास—

ये वीठू शाखा के चारण और मारवाड़ राज्यान्तर्गत् पोकरण में स्थित मांडवा ग्राम के निवासी और अठारहवीं शताब्दी के भक्त कवि थे। इनके पिता का नाम जग्गा था। अपने परिवार के बुजुर्गों के सामीप्य से राजस्थानी काव्य इतिहास तथा पौराणिक कथाओं को सुनकर इनकी ज्ञान-पिपासा बढ़ने लगी। इनके जन्म का नाम विसलदान (विष्णुदान) था। अपने गुरु हरनाथ जी के विचारों से प्रभावित होकर इन्होंने दादू पंथ को अपनाकर, अपना नाम ब्रह्मदास रख लिया। गुरु हरनाथ जी के प्रति कृतज्ञता प्रकट करते हुए भक्त-कवि ने लिखा है —

नाम महातम वरण कर, हमकूं किये निहाल।
सुणियो गुरु हरनाथ सूं, दादू दीनदयाल ।।

ब्रह्मदास ने 'भगतमाळ' नामक ग्रंथ की रचना की। यह ग्रंथ चारण-कवि श्री उदयराज उज्ज्वल के सम्पादन में राजस्थान पुरातत्त्वान्वेषण मंदिर, जोधपुर

---

१ चारण साहित्य का इतिहास – डा० मोहनलाल जिज्ञासु, पृ० २४४
२ वही, पृ० २८६

से १९५९ ई० में प्रकाशित हो चुका है।

भगतमाल डिंगल साहित्य की सुन्दर कृति है जिसके [illegible] कवि की अनन्य भक्ति भावना का परिचय मिलता है। ग्रंथ [illegible] विभक्त है। भक्त-कवि ने पौराणिक उदाहरणों के आधार पर [illegible] है कि ईश्वर अपने भक्तों की सहायता के लिये [illegible] भाषा अत्यन्त सरल, हृदयस्पर्शी एवं प्रवाहमय है। महाभारत के दुर्योधन [illegible] चित्र देखिए—

दुरजोधन ठग्गूं, कीधो दग्गू पांडव पग्गूं, [illegible]।
लाखाग्रह लग्गूं, जाळा जग्गूं, धोम [illegible]॥
काढ़े करमग्गूं, साहि करग्गूं, [illegible]।
धिन हो दुख वारण, काज सुधारण, [illegible]
जिय भगतां तारण भगवन तू॥[1]

डॉ० मोहन लाल जिज्ञासु ने अपने शोध प्रबन्ध चारण साहित्य का इतिहास में सहसमल नामक कवि का उल्लेख करते हुए [illegible] चारण और जयपुर राज्य का निवासी बतलाया है।[2] कवि [illegible] में डॉ० जिज्ञासु ने एक गीत का उदाहरण प्रस्तुत किया है। [illegible] कवि नहीं, राठौड़ कुलोत्पन्न योद्धा था। उद्धरित गीत भी [illegible] ही प्रशस्ति में लिखा गया है।

दुर्गादास आसकरणोत—

आसकरण के पुत्र दुर्गादास क्षत्रिय जाति के थे। [illegible] साथ-साथ ये अच्छे कवि भी थे। दुर्गादास का जीवन [illegible] १७७५ विक्रम के मध्य ठहरता है।[3] कवि के [illegible] उदाहरण के लिए निम्न गीत प्रस्तुत किया जा रहा है [illegible] में 'मन मिले डींगळा महे पींगळा महे' कथन द्वारा [illegible] उल्लेख किया है। इससे सिद्ध होता है कि १८ वीं शताब्दी के [illegible]

---

१ राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, जोधपुर से श्री [illegible] में प्रकाशित कृति–भगतमाळ से।
२ चारण साहित्य का इतिहास – डॉ० मोहन लाल जिज्ञासु [illegible]
३ राजस्थानी निबन्ध संग्रह – श्री सौभाग्य सिंह शेखावत [illegible]
४ प्राचीन राजस्थानी गीत, भाग २, सम्पादक श्री [illegible] में जोधपुर की हाडी रानी पर लिखा दुर्गादास का [illegible] हो चुका है।

राजस्थानी काव्य के लिये डिंगल शब्द का प्रयोग प्रचलित था—

सुणो सकोई पाखरां साखरां, भेदगर हूं जिकोइ हुवो खट भाखरां।
लंबा ब्रह्म किया वेद गुण लाखरां, ऊवरे खत्री पातां तणां आखरां ।।१।।
जाण पण घणो पंडित कनै जाणजे, वंचे हरि देवरां कथा वाखाणजे।
तार व्हे विगत नर उरस दिस तांणजे, आखि कवियण वयण अपूठा आणजे ।।२।।
करै कूड़ा मगज कचर पकरी कहै, मन मिलें डींगळां महे पींगळां महे।
लोक मुरधर तणां अरथ चौड़े लहे, खावां तांतियां चाडियां गुण रहे ।।३।।
आसकरण सुतन दुरगै वचन आखिया, रूक वळ अेण हिन्दू धरम राखियो।
भिदे पोथी वगल ब्रह्म रा भाखिया, सदा मरदां तणां कविसुर साखियो ।।४।।[१]

शौर्यत्व एवं काव्यत्व की विशेषताओं ने कवि के व्यक्तित्त्व को अत्यन्त प्रभावशाली वना दिया है। तलवार के साथ साथ कवि दुर्गादास आसकरणोत कलम के महत्त्व से भी भलीभांति परिचित थे। भावों के अभिव्यक्तिकरण में, उनकी भाषा समर्थ है। अन्य डिंगल कवियों की भांति कवि के वर्णन भी चित्रात्मक तथा हृदयगाही हैं।

गोविन्द—

मेवाड़ राज्य के निवासी गोविन्द रोहड़िया शाखा के चारण थे। कवि द्वारा लिखी फुटकर रचनाओं का सम्बन्ध मेवाड़ के महाराणा जगतसिंह से होने के कारण इन्हें उनका समकालीन ही माना जाना चाहिए। महाराणा जगतसिंह को सम्बोधित कर कवि ने वड़े ही सुन्दर वीर-गीत लिखे हैं। शब्द-चयन की सूझबूझ द्वारा कवि ने काव्य-सौष्ठव को आकर्षक वना दिया है। वर्णन अत्यन्त सजीव तथा प्रभावोत्पादक है। साथ ही वीर-रस की उक्तियों के कारण कवि के गीतों की एक-एक पंक्ति हृदय को छूने वाली है। महाराणा जगतसिंह के शौर्यत्व को दर्शाते हुए कवि ने अपने एक वीर गीत में कितना चित्रात्मक वर्णन किया है—

अवर देस देसां तणां लार कर एकठा, रैंसिया मूगळां दीध राये।
हेक सिर नावियो नहीं 'सांगाहरै' 'जगै' पतसाह रै द्वार जाये ।।१।।
झाड़ पाहाड़ मेवाड़ रा झाटके, जूंझ रूपी हुवो खाग झाले।
मुगळ्गां न गो दिल्लीस थांणा मिलण, हिंदवांणां तणी छात हाले ।।२।।

---

१ श्री नारायण सिंह भाटी 'नानण' आकाशवाणी जोधपुर के पास उपलब्ध कवि दुर्गादास आसकरणोत – प्रणीत गीत की प्रतिलिपि से।

राण रजपूत वट तणो वळ राखियो, साह नूं नांखियो [illegible] ।
कमरबंध छोड़कर जोड़ डंडवत करण, 'करण' रै नांखियो नहीं [illegible] ॥१॥

'जगतसी' 'ग्रमरसी' 'उदेसी' जेहवो, छातपत केम [illegible]
राण सीसोदियो टेक झाली रहै, एक पतसाह नूं [illegible] ॥२॥

वणय सगाई के प्रयोग से काव्य-पंक्तियां प्रभावशाली [illegible] हुई हैं। कवि गोविन्द ने यद्यपि कोई स्वतन्त्र ग्रन्थ नहीं [illegible] स्फुट काव्यगत-विशेषताओं के कारण वे डिंगल के [illegible] सकते हैं।

मूता रुग्घा[2]—

रुग्घा कवि जाति के मूता ओसवाल और जोधपुर [illegible] ग्राम के ठाकुर हरिदास भाटी के कामेती (काम करने वाले) थे। [illegible] कार्य में पारंगत होने के साथ-साथ डिंगल भाषा में गीत-कवित्त [illegible] भी निष्णात थे। एक बार जसवन्तसिंह ने मूता रुग्घा के [illegible] की प्रशंसा करते हुए पूछा कि हमारे ऊपर भी कोई गीत [illegible] नहीं? कवि रुग्घा ने कहा कि जिस दिन मैं आपकी सवारी [illegible] देखूंगा। उस दिन मैं आपके ऊपर कविता बनाऊंगा। एक बार [illegible] जाते समय जसवन्त सिंह ने रुग्घा को अपनी सवारी दिखाई। [illegible] जसवन्त सिंह की प्रशस्ति में उस समय जो गीत बनाया, [illegible]—

दधि पाजां टले कना छिलिया दल ताजा [illegible]
राजा आज सुहारां रुड़िया जुध दाजा [illegible]

थर हर शेप कुरम कंध धुर के गरहर [illegible]
फरहर नेज नरवरां फरके जोध [illegible]

तरवर डहे उकमें ताजी परवत [illegible]
मदझर वहै किणी सिर मार [illegible]

वादे महल छत्तीस राजदंन [illegible]
दहल पड़े अवरांदे सोता पारे [illegible]

---

१ डॉ० पुरुषोत्तम लाल मेनारिया के [illegible]

२ ओसवाल पत्रिका, जुलाई १६१[illegible] [illegible] वेत्ता मुंशी देवीप्रसाद का निबन्ध [illegible]

जोधपुराधीश महाराजा जसवन्त सिंह ने रुग्घा की इन काव्य-पंक्तियों पर रीझ कर उनको समुचित पुरस्कार देकर सम्भानित किया।

उदयपुर में उस समय महाराणा जगत सिंह राज्यासीन थे। महाराणा के धूम धाम से सम्पन्न विवाह में अनेक चारण और अन्य जाति के कवियों ने अपनी-अपनी रचनाएं सुनाई थी। महाराणा द्वारा सभी कवियों के पास पगड़ियां और धोतियां भिजवाई गई। मूता रुग्घा को जब महाराणा की भेंट नहीं मिली तो उन्होंने महाराणा के पास एक गीत लिखकर भेजा। कहते हैं गीत से महाराणा जगतसिंह बहुत प्रभावित हुए। उन्होने कवि के पास उचित पुरस्कार भिजवा दिया।

कवि रुग्घा के काल में रूपावत तथा पातावत राठौड़ चोरियां और डाका डालकर धनोपार्जन करते थे। गरीब किसान-मजदूरों को लूटने में भी वे पीछे नहीं रहते। रुग्घा को रुपावत-पातावत राठौड़ों के इन दुष्कृत्यों पर बड़ा क्षोभ हुआ। मुंह में राम बगल में छुरी अर्थात् लूटमार कर, साधु सन्तों के समान दिखाई देने वाले ऐसे लोगों की निन्दा में कवि ने निम्न दोहा लिखा—

काचा पाका टिडसा तोड़े, तोड़ै बीट मतीरन्दा।
रुपा माता मिलकर चाल्या, जाणै टोळ फकीरन्दा॥

रुग्घा के इस दोहे से कुपित होकर रूपावत - पातावतों ने इनकी हत्या करवा दी। मरते-मरते अपने आश्रयदाता हरिदास भाटी का स्मरण करते-करते रुग्घा कवि के मुख से 'हरि ज्यों आवजो हरदास' शब्द निकले थे। हरिदास ने अपने कामदार की हत्या की खबर से क्रोधित होकर फलोदी में स्थित बूगड़ी गांव के २२ पातावतों को मौत के घाट उतार कर रुग्घा की नृशंस हत्या का बदला लिया।

नरहरिदास बारहठ —

डिंगल तथा ब्रजभाषा में प्रभावशाली रचनाओं के सर्जक – कवि नरहरिदास, चारण कवि लक्खा बारहठ के ज्येष्ठ पुत्र थे।[१] लक्खा की काव्य - प्रतिभा से प्रभावित होकर जोधपुर – नरेश सूरसिंह ने उन्हें सोजत परगने का रेहनड़ी नामक ग्राम सम्मानार्थ प्रदान किया था।

अपने पिता के समान नरहरिदास भी प्रभावशाली काव्य - प्रणेता

१ शोध पत्रिका, वर्ष २६ अंक – २ में लेखक का निबन्ध – 'राजस्थानी चारण साहित्य की ऐतिहासिक काव्य-कृतियां' – पृ० ५२.

कवि थे। महाकवि सूर्यमल मिश्रण ने अपने ऐतिहासिक [illegible] भास्कर' में, पूर्वकालीन कवि-परम्परा में नरहरिदास के नाम का [illegible] उल्लेख किया है।[1] जोधपुर के तत्कालीन महाराजा [illegible] लाख-पसाव देकर सम्मानित करने की घटना से कवि की [illegible] का सहज ही अनुमान लगाया जा सकता है।[2] महाकवि तुलसीदास [illegible] 'रामचरित-मानस' की भांति नरहरिदास द्वारा निर्मित 'अवतार चरित्र' [illegible] राजस्थानी जन जीवन में अत्यन्त लोकप्रिय एवं सम्मान्य रचना [illegible]

'अवतार चरित्र' के अतिरिक्त कवि नरहरिदास की [illegible] में 'राव अमरसिंहजी रा दूहा' अद्यावधि अप्रकाशित एवं [illegible] काव्य-रचना है जिसमें ५०७ सोरठे हैं। ऐतिहासिक घटनाओं पर [illegible] इस कृति में जोधपुर के महाराजा गजसिंह के ज्येष्ठ पुत्र [illegible] के अद्वितीय शौर्य-पराक्रम का आकर्षक एवं कमनीय [illegible] वर्णन किया गया है। अमरसिंह राठौड़ की आगरा में [illegible] १७०१ में वीरोचित मृत्यु हुई थी।[3] कवि नरहरिदास ने इस [illegible] का निर्माण अमरसिंह राठौड़ के जीवन-काल में ही किया था। [illegible] अमरसिंह जी रा दूहा काव्य-रचना के अन्तिम दोहे में कवि ने [illegible] एवं स्वाभिमानी व्यक्तित्व के धनी अमरसिंह राठौड़ के प्रति अपने [illegible] स्थित आशीर्वचनों की पुष्प-वर्षा करते हुए लिखा है –

रवि जेते राकेस, धर अंबर जां लग [illegible]।
नवै खंड नरेस, कुल दीपक तां लग [illegible]॥

अपने समय के ऐतिहासिक-पुरुषों के गौरवमय कार्य-कलापों [illegible] गीतों के द्वारा नरहरिदास ने अमर बना दिया है। [illegible] २९ वीर-गीत अब तक प्रकाश में लाये जा चुके हैं। [illegible] गीत में, आसोप के सुभट-सूरमा ठाकुर रतनसिंह [illegible] क्षत्रियोचित विशेषताओं का विवरण दिखाते हुए [illegible] कुल में जन्म ले लेने मात्र से कोई क्षत्रिय नहीं हो जाता। [illegible]

---

१ चारण नरहरिदास, कुंभकरण पूरण सुकवि।
ईसरदास रु आस, वदरिदास हुकमेन पुनि॥–[illegible]

२ बारहठ नरहरि बगसि एक लाख उजागर – [illegible]
श्री सीताराम लाळस, पृ० २३.

३ (अ) मारवाड़ का मूल इतिहास – [illegible]
(ब) मारवाड़ का इतिहास (द्वितीय भाग) – [illegible] – पृ० [illegible]

का अधिकारी वही है जिसमें स्वाभिमान, उदारता और त्याग हो तथा जो अपने सिर पर कफन बांधकर प्रत्येक संकट को चुनौती देने की सामर्थ्य रखता हो। शूरवीर रतनसिंह क्षत्रियों के गुणों का बखान करते हुए कहता है—

तहि केहा खत्री पयंपै रतनौ, चाह चढियां त्राविड़ै चढै।
मन झांपियां समापै मौजां, वीरारसि चांपियां विढै ॥१॥

सुयण सगाह राजधर संभ्रम, तां पुरिखां न मनैं तुडि तांण।
अरि विहियां हुवै आचारी, ओट दियां सूत्रै आरांण ॥२॥

दळ आगळ खेमाण दूसिरौ, वदै त्रपां खत्रवट वरियांम।
मन लाजियां थका दन मंडै, सिर वाजियां करै संग्राम ॥३॥

कमंध कहै देयंतौ कळहंतौ, इळ ता भड़ां किसी आकाहि।
गिणियां जाइ रीझै आपै ग्रथ, मिणिया जां मांटीपण मांहि ॥४॥

अणचितिया वारीस अतुळ वळ, महि दूजै कूंपौ कुळ मौड़।
अवरां सिरि पड़ते जुधि असमैं, रूके भुज ओडै राठौड़ ॥५॥[1]

जोधपुर के महाराजा जसवन्त सिंह प्रथम ने बादशाह शाहजहां की ओर से धरमत (उज्जैन) में औरंगजेब की सेना से भीषण युद्ध किया था। शत्रु सेना का पलड़ा भारी होते देख सरदारों के आग्रह पर जोधपुर के महाराजा जसवन्त सिंह को युद्ध-क्षेत्र से वापस लौटना पड़ा। धरमत में लड़े जाने वाले इस प्रलयंकारी युद्ध का नेतृत्व पीछे से रतलाम के शूरवीर शासक रतनसिंह ने सम्भाला। मारवाड़ के शासक का धरमत युद्ध-क्षेत्र से लौट आने पर बड़ा तिरस्कार किया गया। महाराजा जसवन्त सिंह की महारानी ने भी अपने पति के इस कृत्य को कायरता समझकर किले के द्वार बन्द करवा दिये थे। जसवन्त सिंह के इस निन्दित-कर्म की बारहठ नरहरिदास ने निम्न-लिखित गीत में भर्त्सना की है। स्वाभिमानी कवि का यह गीत निडरता का परिचायक होने के साथ-साथ कायरों के अन्तर में वीरत्व के भाव जगाने में भी पूर्णतः समर्थ है।

---

१ (अ) शोध संस्थान, चौपासनी जोधपुर में उपलब्ध 'राव अमरसिंह जी रा दूहा' की हस्तलिखित प्रति से.
(ब) अनूप संस्कृत पुस्तकालय बीकानेर में भी इस कृति की हस्तलिखित प्रति उपलब्ध है – दूहा संख्या – ५०७.

महा मंडियौ जाग उज्जैण खागां मथै, रुदन विक्रमाजीत रही रोती ।
हेळवी 'अमर' री हीय करती हरख, 'जसा' अवछर रही वाट जोती ॥
किया काचा 'अमर' 'सूरहर' कळीधर, डरत मन न पीधो [illegible] ।
वड़ा री भोळवी हूर आवी वरण, मेलती गई नीसाण [illegible] ॥
पाटवी हेळवी वेगमै पैलकै, तैं समै अँन्दकै [illegible] ।
पागती 'दली' नै 'रतन' परणीजतै, वाट जोती रही 'गजन' [illegible] ।
ज तौ वीवाह री वाट जोती जगत, रुक बळ आसियौ सिंघो [illegible] ।
मराड़ी जांन घर आवियौ मांडवै, तेल चढ़ती रही मछर [illegible] ॥[1]

डिंगल कवियों और गीत लेखकों ने अपने चरित-नायकों के शौर्य-वर्णन में रूपकों का आश्रय लिया है। आदिकाल तथा मध्यकाल के राजस्थानी साहित्यकारों में तो इस विशेषता का एक परम्परा के रूप में अनुसरण हुआ है। कवि नरहरिदास ने भी अपने वीर गीतों में रूपक-विधा का प्रयोग किया है। उदाहरण के लिये एक गीत प्रस्तुत है जिसमें जयपुर के महाराजा को परीक्षित, वादशाह औरंगजेब को जनमेजय तथा छत्रपति शिवाजी को तक्षक नाग के रूप में प्रस्तुत कर, राजा जनमेजय की पौराणिक नाग-यज्ञ कथा का कवि ने सुन्दर रूपकीकरण प्रस्तुत किया है—

सरप दाह जनमैजय पतिसाह झालण सिवौ, अयोपत जिन्है हुवि पड़ै [illegible] ।
सरणि साधार खत्रभार धरियां सगह, आसतीक जेम पिंगै [illegible] ॥

परीछत साहिजिहांन सुत कोपियौ, तछक होमण गहण [illegible] ।
तपोधनि जहीं हिंदवाण चाढण प्रभति, जर रखपाळ जैसिंघ [illegible] ॥

करण अहिभेद अहवन हरौ कोपियौ, टळै न दळै जहांगीर [illegible] ।
वाहां पै गारयक जिम हुवौ वहसि, अनै पंजर [illegible] ॥

अखिल रजरीत रा सिंघ लागा अरसि, भुंयणि मेछांण रा [illegible] ।
निभै नर-नाथ ग्रही हाथ निरवाहियौ, अहि सिवौ [illegible] ॥

उभै राहां सिरै वधै कूरम सरड़ा, ननै जगदीस [illegible] ।
खोंद अरि अमावौ धको आडा खड़ै, खोद नूं नाग [illegible] ॥

---

१ राजस्थानी सबद कोस (भाग-१) श्री सीताराम लाळस [illegible]

वखतराम —

आसिया शाखा के चारण कवि वखतराम मेवाड़ के पर्सूदा ग्राम के निवासी थे। मेवाड़ के महाराणा भीमसिंह को सम्बोधित कर इन्होंने काव्य-सर्जन किया। अतः कवि को भीमसिंह का समकालीन माना जाना चाहिए। चारण कवियों ने अपने चरित्र-नायकों के शौर्य-पराक्रम का चित्रांकन ही नहीं किया है अपितु समरांगण में योद्धाओं के काम आने वाले अस्त्र-शस्त्रों तथा घोड़े हाथियों का भी खुलकर वर्णन किया है। महाराणा भीमसिंह के हाथी बहादुरजंग की मदमस्त चपलता का कमनीय चित्रण करते हुए कवि वखतराम ने लिखा है —

मलै सामठां हजारां लोक भागवों वसत्ती मना।
सुणै खून आयो जज दसत्ती समाथ।
लोप टाको दीधी झाट आयेला मसत्ती लागै।
सांकळां हसत्ती त्रहूं तोड़ी हेक साथ।
मां हुंता ठाठियां टोळां प्रवीणा-सवोळा मळै।
अखै दोळा छले घले हवोळा अपार।
रूप मेर साथी आंगां एर-सी उभैल-रोस।
जंघां वाघरेस हाथी खुले जेण वार।[1]

कोटा के महाराव उम्मेदसिंह और उनके अनुज पृथ्वीसिंह द्वारा अंग्रेजों के विरुद्ध लड़े गये युद्ध पर इनकी निसानिया अत्यन्त लोकप्रिय हैं। उदाहरण के लिए कुछ निसानियां प्रस्तुत की जा रही है —

वगसो वुध दराज मों, गजराज महावळ।
हाडा प्रथ्वीसिंघ का, जसकाज नहच्चळ॥
तसकी पीठ अफेर जंग, परतीत सवैयळ।
सो फिरतै नित तुलछका, दल मैं व्है कम्मळ॥

चल पीथल चहुआंण का, हत्थ सूर निहारे।
सहर वसै रण भूत, वीर जोंगण किलकारे॥
जहां तहां फेरत इन्द हत्थ वैताल डकारे।

१ चारण साहित्य का इतिहास – डॉ० मोहन लाल जिज्ञासु, पृ० २५६.

भरिया रत्य समन्द्र लाग जोगण [illegible] ॥[1]

पीर —

ये आसिया शाखा के चारण और मारवाड़ राज्यान्तर्गत [illegible] ग्राम के रहने वाले थे। इनके पिता का नाम दल्ला था। [illegible] सांचोर परगने के कालेटी गांव में कलहट वारहठों द्वारा [illegible] थी। पीर आसिया प्रणीत फुटकर गीत उपलब्ध होते हैं जिनमें [illegible] क्षत्रिय-शासकों के स्वाभिमान और वीरत्व का काव्यमय चित्रण [illegible] उदाहरण के लिए कवि द्वारा निर्मित एक गीत की पंक्तियां प्रस्तुत [illegible] रही है जिनमें मेवाड़ के महाराणा राजसिंह के शौर्य तथा स्वाभिमान का चित्रण है। गीत का सम्बन्ध मेवाड़ के महाराणा राजसिंह की [illegible] से है। इस घटना ने वादशाह औरंगजेब के प्रभुत्व एवं स्वाभिमान पर प्रहार का काम किया था। वादशाह औरंगजेब की चिन्ता-मग्न [illegible] चित्र खींचते हुए कवि ने लिखा है —

विध चूका वेद न जाणे वेदन, ओखद लगे न पीर [illegible] ।
रात दिवस सालै उर राजो, साजो तेग नहीं [illegible] ॥
खेंगा चढ़ चौगान न खेले, वेले पड़ियो राज [illegible] ।
आगमणी सीसोद न आवे, रवद हिये में लागो [illegible] ॥
धुणे सीस न धुणे धजवड़, मारे रीस सही मन [illegible] ।
जगाहरे असवाद जगावीं, जवन तणो पट [illegible] ॥
मालपुरे सिर खोणप मारे, राणा [illegible] ।
भोग संजोग रहे न भीनो, औरंग [illegible] ॥

तेजसिंह —

इनका जन्म १६७६ ई० में मारवाड़ राज्य के [illegible] अजवसिंह वारहठ के यहां हुआ था। ये भक्त-कवि [illegible] तेजसिंह भी हरि भक्ति में डूबे रहते थे। संसार [illegible] अपना अधिकांश समय ईश्वर स्तुतिगान में ही [illegible]

---

१ श्री सौभाग्यसिंह शेखावत के पास उपलब्ध [illegible] प्रति से.

२ चारण साहित्य का इतिहास – डॉ० मोहनलाल जिज्ञासु, पृ० [illegible]

के साथ-साथ ये हठी और स्वाभिमानी प्रकृति के व्यक्ति थे। इनका निधन सन् १७४३ ई० में अपने गांव में ही हुआ। इनकी मृत्यु के सम्बन्ध में कहा जाता है कि वखतसिंह ने जब अपने पिता की हत्या कर राज्यभार सम्भाला तो उन्हें कोढ़ हो गया। सामन्त आदि लोगों ने कोढ़शमन हेतु किसी वारहठ के दर्शन की वात कही। कहते हैं तेजसिंह वारहठ ने अपने पिता के हत्यारे वखतसिंह की शक्ल देखने से पूर्व ही अपने प्राण त्याग दिये। इनके लिखे हुए दो ग्रन्थ मिलते हैं – (१) मुक्ति प्रकास तथा (२) भगवद्गीता का भापानुवाद। कवि की शान्त रस प्रधान रचनाएं दार्शनिक भावनाओं से अभिभूत है। काव्य की भापा प्रौढत्व-प्रधान डिंगल है। भक्ति काव्य परम्परा में भक्त कवि तेजसिंह का महत्त्वपूर्ण स्थान माना जा सकता है।

देवा दधवाड़िया —

इनका जन्म दधवाड़िया शाखा में हुआ था। कवि के जन्म स्थान इत्यादि के वारे में कोई विवरण उपलब्ध नहीं होता। इनकी फुटकर रचनाएं मिलती हैं।

शूरवीरता के आराधक कवियों ने शूरवीरों के पराक्रम का वर्णन ही नहीं किया वरन् उन्होंने वीर योद्धाओं के अस्त्र-शस्त्र एवं अश्व-हाथियों के करिश्मों का भी अलंकृत वर्णन किया है। देवा दधवाड़िया ने रतलाम के महाराजा वलवन्तसिंह के अश्व की चपलता का वड़ा सुन्दर वर्णन किया है। उदाहरण देखिए —

कदमां छेक दपट दम कळका, तळफस कर नंद जळका तास।
पलट फरत दुरपण दुत पळका वीजळका भळका वरहास॥
चटपट समट वरत नट चाकत, ऊलट पलट भट हाकत ईख।
वहवे दुपट ऊपट नभ वटका, साकुर सद गुटका सारीख॥[1]

काना —

ये करमसी रतनू के पुत्र और मारवाड़ राज्य के विणलिया ग्राम के रहने वाले थे। अपने भाईयों से कृपि-विपयक विवाद हो जाने पर कवि ने महाराणा अजीतसिंह को निसाणी छंद में तीन पृष्ठों का प्रार्थना-पत्र लिख कर भेजा। प्रार्थना पर ध्यान न दिये जाने पर इन्होंने अपने विरोधी गणपत की गोली मार कर हत्या कर दी। इस अभियोग के कारण इनका गांव

---

१ डॉ० शक्तिदान कविया के निजी संग्रह में उपलब्ध प्रति से उद्धृत.

जब्त कर लिया गया। खेजड़ले के ठाकुर ने ये इन्हें गांव पुनः [illegible]।

काना के फुटकर गीत मिलते हैं। इनकी एक रचना [illegible] चांपावत सींघल रा कवित्त'[1] विशेष रूप से प्रसिद्ध है। इसमें [illegible] के शौर्य का बड़ा सुन्दर वर्णन किया गया है। युद्धारंभ के वर्णन की एक झलक देखिए —

गाज वाज गोळियां, वाज सुरवंब नगारां ।
वाज पुणछ धानप सोक वाजिया [illegible] ॥
घकई वाज पाताळ पांव वाजिया [illegible] ।
ऊपर वहलायतां खाग वाजी [illegible] ॥
वावता घाव लावई विगत, खांरसदां दहूं [illegible] ।
घरवेघ दुभ्रड छोडइ घकड़ इण विघो चांपा [illegible] ॥

कवि काना द्वारा प्रस्तुत युद्ध का वर्णन अत्यन्त प्रभावशाली है। [illegible] विषय और परिस्थितियों के सर्वथा अनुकूल है।

हरदान —

ये भादा शाखा के चारण थे। इनके फुटकर गीत [illegible]।

शाहपुरा के राजा उम्मेदसिंह के शौर्यपूर्ण युद्ध में [illegible] के चलने का चित्र खींचते हुए कवि ने लिखा है —

आतसां जागिया झाळा झंवां [illegible]
दंडाळा कराळा दान [illegible] पोह ।
नीमजे वाणासां आयो [illegible]
सार वोहरतो खेत भारथ रो [illegible] ॥
चोळ में वणावं सूरां [illegible]
एकटा वारंगां झुण्डा होवंतां [illegible] ।
छूटां घोम आतसां [illegible]
वूठां लोहा असोधारा [illegible] ॥[2]

---

१ घळवट प्रकाशन विराई के संग्रह में उपलब्ध '[illegible] रा कवित्त' की हस्तलिखित प्रति के आधार पर।
२ श्री सौभाग्यसिंह शेखावत के निजी संग्रह में उपलब्ध प्रति से

कवि ने युद्ध का अत्यन्त सजीव चित्र प्रस्तुत किया है। प्रवाहपूर्ण भाषा एवं परिस्थित के अनुकूल शब्दों के प्रयोग से कवि युद्ध का भयावह वातावरण मूर्त्त करने में सफल रहा है।

कान्हा —

ये बारहठ शाखा के चारण और प्रसिद्ध भक्त ईश्वरदास के पुत्र थे। इनके लिखे हुए फुटकर गीत मिलते हैं जिनमें समसामयिक योद्धाओं के वर्णन हैं।

कान्हा द्वारा निर्मित निम्नलिखित गीत में लक्ष्मीपति की अनन्यता के अलंकृत वर्णन की छटा देखिए —

सुर कोड़ि अवर तेत्रीसइ सरवर, वळि छिलरे छत्रीसह वंस।
हरी नाऊं मानसरोवर हुंता, हुए म दूरि अम्हीणा हंस।।
पाणी हीण अवर सरे परहरि, परिहरि सुर नर भूपाळ।
श्रीरंग तणौ नाम पावासर, मेल्हैं मत मूभ मुणाळ।।
आपणै भळै तणा, ऐ आरिख, अनि सर सुर न कीजे आस।
हरि मानसरि वसे मुवाई हंस, वसियै जेणि टळे ग्रभवास।।
कान्हियो कहै अवर चीतिसी तोई, धोखों करि सिरहि सिर धूणि।
प्राण परम हंस पुणावि प्रमेसुर, चुगि हरि सुजस रसायण चूणि।।[१]

वद्रीदास —

ये खिड़िया शाखा के चारण थे। इनके द्वारा निर्मित स्फुट काव्य मिलता है। इनका रचनाकाल विक्रम संवत् १७४५ के आस पास ठहरता है। वद्रीदास के रावत पहाड़ सिंह चूंडावत (सलूम्बर) का उदाहरण देखिए —

रोक रोक तुरी भाण आराण विलोक रीझे,
विभ्र मोक त्रलोक त्रंवोक धाके वाज।
वेध वेध सोक झोक तोक वाण सेल खाग,
सीसोद गनीम तणा थोक हुं चोक सकाज।।
वारंगां उमंगां रंगां विमाणगां सोक वाज,

---

१ श्री सीताराम लाळस के निजी संग्रह में उपलब्ध प्रतिलिपि से.

रारंगा अमंगां भड़ा दमंगां रो [illegible] ।
पनंगां विहगां डंगां नारंगा अधीन [illegible]
सारंगा खतंगा अंगा मातंगा दू [illegible] ॥[1]

पोखरराम —

इनका जन्म दधवाड़िया शाखा में हुआ था और ये मारवाड़ के रहने वाले थे। इनके फुटकर गीत मिलते हैं। इनका रचनाकाल [illegible] १७४५ के आसपास माना जाता है।

कवि ने ठाकुर केशरी सिंह राठौड़ (रायपुर) का यशोगान [illegible] लिखा है कि उनके संरक्षण में अनेक शूरवीर और कविजन [illegible] —

रचा ग्रन्थां ऊगतां, तरंता आना पाप [illegible].
वाचा वार पेना चांपरीये जंगां [illegible] ।
आचां कन्नू परधे सुपातां तुगां भड़ां [illegible].
अरधे न काचा मारू सांचां करे [illegible] ॥[2]

साईदान —

ये मेवाड़ राज्य के झाड़ोली गांव के निवासी और [illegible] चारण थे। इनके पिता का नाम मेंहाजल था। मिश्रबन्धु विनोद में इनका रचनाकाल संवत् ११९१ बतलाया गया है,[3] जो उचित नहीं [illegible] मोतीलाल मेनारिया ने इनका रचनाकाल संवत् १७०८ माना है।[4]

साईदान का वृष्टि विज्ञान पर लिखा हुआ ग्रंथ [illegible] अवस्था में उपलब्ध हुआ है। इसमें २०० पद्य [illegible] है। [illegible] कवि ने गणेश-वन्दना से किया है। इसके पश्चात् [illegible] माता की स्तुति कर कवि मुख्य विषय की ओर [illegible] मुख्य-विषय शिव और पार्वती का वार्तालाप है। [illegible] है और शिव उनके प्रश्नों का समाधान करते हैं।

कवि का काव्य-सृजन बहुत ही सरल और [illegible] हुआ है। ग्रन्थ के कुछ उदाहरण देखिए —

---

१ श्री सौभाग्यसिंह शेखावत के निजी संग्रह में [illegible]
२ डॉ० पुरुषोत्तमलाल मेनारिया के निजी संग्रह में [illegible]
३ मिश्रबन्धु विनोद, प्रथम भाग, पृ० ९२.
४ राजस्थानी भाषा और साहित्य – डॉ० मोतीलाल मेनारिया, पृ० [illegible]

दूहा

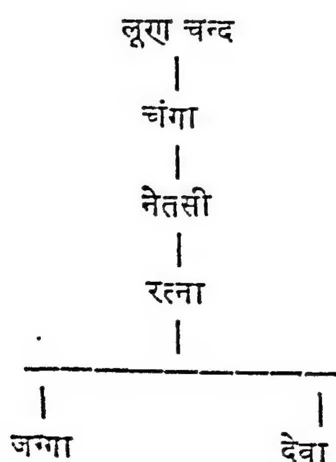
पारवती कीनो प्रसन, हे देवन के देव ।
सुरभप दुरभप परत है, सो भव कहिये देव ।।
महादेव उत्तर दियो, सुनहु उमा चितलाय ।
सुरभप दुरभप को तुमैं, देऊं भेद बताय ।।

कवित।

ऊगे धूमरकेत गगन तारा वहु तुट्टै ।
मंडे धनुप विन मेघ विना जल वादल जल वुट्टै ।।
धरा कंप जळ उमंग गैव अम्वर फिर गाजै ।
विन घन पवन अकास भानु ससि कुंडल राजै ।।
यहु गर्ग रिपि के वचन सुनि पंडित हूवै सो उर धरौ ।
उल्कापात जो एक हुव सरव धान संग्रह करौ ।।[1]

जग्गा खिड़िया —

जग्गा खिड़िया का वास्तविक नाम जगमाल खिड़िया था जिसका संक्षिप्त रूप जग्गो भी मिलता है। ये खिड़िया शाखा के चारण रतना जी के पुत्र थे। मारवाड़ राज्य में स्थित विलाड़ा के निकट रामासनी ग्राम के निवासी राव द्वारा प्राप्त वंश-वृक्ष के अनुसार डा० तेसीतोरी ने लूण चन्द को जग्गा का आदि पुरुप माना है। वंश वृक्ष इस प्रकार है —



डॉ० मोतीलाल मेनारिया के कथनानुसार जग्गा खिड़िया के वंशज आजकल सामल खेड़ा गांव में रहते हैं जो सीतामऊ राज्य में है। इसके विपरीत मारवाड़ राज्य के चारण इन्हें जैतारण परगने के गांव कवलिया का निवासी मानते हैं।[2]

१ राजस्थानी भापा और साहित्य – डॉ० मोतीलाल मेनारिया, पृ० २०९.
२ वचनिका राठौड़ रतनसिंह जी री – खिड़िया जग्गा री कहियोड़ी-सं० टेसीटोरी

जग्गा के जीवन से सम्बन्धित इससे अधिक सामग्री [illegible] होती। इन्होंने अपनी वचनिका में भी अपने जीवन-[illegible] आदि के बारे में कोई विवरण नहीं दिया है। निम्नलिखित [illegible] केवल उनके नाम का पता चलता है --

जोड़ि भणी खिड़ियौ जगो [illegible] ।
सूरा पूरा सांभळी, भड़ मोटा भूपाल ॥[illegible]॥

संवत् १७१५ में जग्गा खिड़िया ने वचनिका राठौड़ [illegible] महेसदासौतरी नामक ग्रंथ का निर्माण किया। गद्य-पद्य में [illegible] ग्रंथ का प्रकाशन डॉ० तेसीतोरी के सम्पादन में बंगाल की [illegible] सोसायटी की ओर से हो चुका है। इसमें वीर और शृंगार रस का [illegible] समन्वय परिलक्षित होता है। इसमें जोधपुर के महाराजा [illegible] औरंगजेब तथा मुराद की संयुक्त सेना से हुए उज्जैन-युद्ध का [illegible] है। इस युद्ध में अद्वितीय पराक्रम से लड़ते हुए रतलाम के राठौड़ [illegible] रतनसिंह वीरगति को प्राप्त हुए थे। शूरवीर रतनसिंह की [illegible] से प्रभावित होकर कवि ने ग्रंथ का नाम वचनिका राठौड़ [illegible] महेसदासोतरी रखा। युद्ध की तिथि का उल्लेख करते हुए कवि ने [illegible] -

पख वैशाखह् तिथी नवमि, पनरोत्तरे [illegible] ।
वारि सुकर लड़िया [illegible], हिंदू तुरक [illegible] ॥

अर्थात् वि० सं० १७१५ में वैशाख कृष्ण पक्ष की नवमी तिथि [illegible] हिन्दू और मुसलमानों में घमासान युद्ध हुआ। यह युद्ध [illegible] नाम से प्रसिद्ध है। फारसी इतिहासकारों ने भी युद्ध का [illegible] रजब, १०६८ हिजरी ठहराया है। कविराजा श्यामलदास [illegible] ऐतिहासिक ग्रंथ 'वीर विनोद' में इस युद्ध की तिथि [illegible] संवत् १७१५ तदनुसार २२ रजब सन् १०६८ [illegible] यदुनाथ सरकार ने युद्ध का दिन १५ [illegible] सं० १७१५ की वैशाख कृष्ण ८ गुरुवार [illegible]

सूक्ष्म विश्लेषणात्मक ऐतिहासिक [illegible] जाता है कि धरमत युद्ध हिजरी तारीख [illegible]

---

१ वीरविनोद – कविराजा श्यामलदास पृ० [illegible]
२ हिस्ट्री ऑफ औरंगजेब–डॉ० यदुनाथ सरकार, [illegible] ३४८ ५०

अप्रेल १६५८ ई० की संध्या को आरम्भ होकर दूसरे दिन शुक्रवार १६ अप्रेल १६५८ ई० को दिन-भर चला । अतः कहा जा सकता है कि खिड़िया जग्गा द्वारा दी गई तिथी और वार पूर्णतया सही है ।[१]

कुछ विद्वानों ने खिड़िया जग्गा को जोधपुर के महाराजा जसंवतसिंह का आश्रित माना है परन्तु यह कथन संदेहास्पद है । जसवंतसिंह की सेना में जग्गा नामक एक सेनापति अवश्य था। कवि जग्गा ने वचनिका में उस योद्धा का उल्लेख करते हुए लिखा है-

दळ डोहे दरिआउ, हैवे वहि दृढ़माल री ।
जोडे रिणमालां जगो, रहिऔ मारु राउ ।।

कवि जग्गा ने अपने काव्य में सर्वत्र रतनसिंह का यशोगान किया है । यदि वह जसवंतसिंह का दरवारी कवि होता तो उस युग की परम्परा के अनुसार अपने आश्रदाता की कीर्तिगाथा अवश्य लिखता परन्तु ऐसी एक भी रचना उपलब्ध नहीं होती । अतः जग्गा खिड़िया को जसवन्तसिंह का राज्याश्रित कवि नही माना जा सकता । खिड़िया जग्गा ने वचनिका का निर्माण रतनसिंह के पुत्र रामसिंह के दरबार में ही किया था। कवि की काव्य-प्रतिभा से प्रभावित होकर रामसिंह ने आलोगिया, एकलगढ़, डेरी एवं दलावड़ो गांव देकर उसे सम्मानित किया था। कालान्तर में दलावड़ो के स्थान पर सेंभलखेड़ा गांव दिया गया, जहां कवि के वंशज आज भी रहते हैं ।[२]

जग्गा की मृत्यु रतलाम में ही हुई और रतलाम में ही राजवंश की श्मशान भूमि शिवबाग में उसका दाह संस्कार किया गया । इन विवरणों से स्पष्ट होता है कि जग्गा का रतलाम के शासको के साथ गहरा सम्बन्ध था ।

ग्रंथ के आरम्भ में कवि ने अपने पूर्ववर्ती ग्रंथकारों की परम्परा का निर्वाह करते हुए गणेश, विष्णु, शिव, शक्ति और सरस्वती की वन्दना की है । फिर कवि रतनसिंह के वीर पूर्वजों की शूरवीरता का उल्लेख करते हुए अपने चरित्र नायक रतनसिंह के पिता महेशदास द्वारा बलख विजय आदि युद्धों में प्रदर्शित बेजोड़ पराक्रमों की चर्चा करता है । तत्पश्चात् वह मूल कथा की ओर अग्रसर हुआ है ।

---

१ वचनिका राठोड़ रतनसिंघ महेसदासौतरी-सम्पादक-डॉ० रघुवीरसिंह एवं श्री काशीराम शर्मा, पृ० ७८-८१

२ चारण साहित्य का इतिहास-डॉ० मोहनलाल जिज्ञासु, पृ० २२६

दिल्ली के बादशाह शाहजहां की अस्वस्थता का समाचार सुनते ही शाहजादे अपने-अपने क्षेत्रों की शासन-सत्ता को सुदृढ़ करने लगे। [illegible] आदेशों की अवहेलना कर, वे मनमानी करने लगे। शाहजहां को इन समाचारों से बड़ा दुःख हुआ। उसने तीव्र गति से पनप रहे इन विद्रोहों का दमन करने के लिये, अपने दो विश्वस्त हिन्दू सहयोगियों – राजा जयसिंह और जोधपुर के महाराजा जसवन्तसिंह को आमंत्रित किया। [illegible] बादशाह के मुख से 'पतिसाही थां ऊपरां' शब्द सुनकर दोनों [illegible] ने विद्रोह-दमन का दृढ संकल्प किया। १८ दिसम्बर १६५७ को [illegible] औरंगजेब और मुराद की संयुक्त सेना से युद्ध करने के लिए [illegible] मालवा की ओर रवाना हुए तथा जयपुर नरेश जयसिंह [illegible] शुजा का विद्रोह कुचलने के लिये पूर्व की ओर चल पड़े।

जसवन्तसिंह के साथ छत्तीस वंशों के चुने हुए [illegible] तोपों, बन्दूकों एवं अन्य अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित विशाल सेना थी। [illegible] की विशाल सेना से पृथ्वी कांपने लगी और अनेक राजा [illegible]

हलीलां हिले संप फोजां हसन्ती।
प्रथी संगि लग्गा केई देसपत्ती ॥

अपने गंतव्य की ओर उत्साह से बढ़ती हुई सेना ऐसी दिखाई दे [illegible] मानो स्वर्ण पर्वत-सुमेरू से जल लेकर वेगवती नदी भूमि पर उतर रही हो —

वहंती इसो पंथि ओपै वहीरं।
नदी हेम थी ले चली जांणि नीरं॥

काले ऊंटों की सघन और लम्बी पंक्तियां [illegible] मालाओं का दृश्य उपस्थित कर रही थी —

कतारं कटट्ठे [illegible]
वहे बादळा जाणि [illegible]

उज्जैन पहुंच कर जसवन्तसिंह ने रतनसिंह [illegible] रतलाम का शूरवीर शासक तथा जसवन्तसिंह [illegible] १६५८ ई. अप्रेल माह के आरम्भ में रतनसिंह [illegible] मिला। युद्ध के लिए सन्देश मिलते ही [illegible] सिंह की सेना से आ मिला। रतनसिंह की [illegible] कवि कहता है कि रतनसिंह रावण तथा सूर्य [illegible] पालन में अर्जुन तथा कर्ण के समान है। [illegible]

रतनसिंह दृढ़ और गम्भीर ज्ञान वाला है। समर्थ, शूर एवं सद्कार्य करने वाला है। उसमें गजों का दान तथा भंजन करने की क्षमता है। मातृ-पक्ष तथा पितृ-पक्ष दोनों को तारने वाला रतनसिंह तेरह शाखाओं का शृंगार है—

रढ रांण भांण रतंन । करतव्वि भारथ कंन ।।
नर नाह जे मुखि नीर । ग्रहवन्त ग्यानि गहीर ।।
ससमत्थ सूर सकज्ज । गज दियण भांजण गज्ज ।।
पित मात तारण पक्ख । सिणगार तेरह सक्ख ।।

यवन सेना नायक औरंगजेब और मुराद दोनों भाई जो यम के समान युद्ध करने वाले थे, एकत्र हुए। एक-दूसरे से मंत्रणा कर विशाल सेना के साथ युद्ध के लिए निकल पड़े। मुगल शाहजादों की सेना जब उज्जैन पहुंची तो घोड़ों और हाथियों के पांवों से उड़ी धूल से सम्पूर्ण आकाश धुन्धला गया तथा पृथ्वी कंपायमान होने लगी —

गूंडलियौ रज गैण है कंप धर डेरा हुवा ।
साहजादा दर कूच सूं आया खड़ै उजैण ।।

औरंगजेब और मुराद ने जसवंतसिंह से कहा कि हमें दिल्ली जाने दो! हमारा रास्ता मत रोको। लेकिन जसवंतसिंह नहीं माने। जसवंतसिंह ने रतनसिंह के परामर्श से व्यूह-रचना कर सेना को तीन भागों-हरावल, चन्दौल तथा बोल में विभाजित किया तथा सैनिको को सम्बोधित करते हुए बोले कि दोनों भाईयों ने खड्ग लेकर हमें युद्ध के लिए ललकारा है। अतः हम भी आज रामायण जैसा युद्ध करेंगे ताकि हमारे शौर्य की गाथाएं हमें चन्द्रमा सदृश अजर-अमर बना दें—

बे भाई ग्रहि खग्ग वहस्से। इम अंबर लग्गा ऊसस्से ।।
रण रामायण जिसौ रचावां। लड़े मरां चंद नाम लिखावां ।।

रतनसिंह ने जसवंतसिंह ने निवेदन किया कि आप युद्ध का सम्पूर्ण दायित्व मुझ पर सौंप कर जोधपुर चले जाइये और अपने वंश की रक्षा कीजिए। आपका युद्ध से विरत होना नीति-विरुद्ध नहीं कहलाएगा क्योंकि दुर्योधन भी युद्ध-क्षेत्र से हट गया था और श्रीकृष्ण भी काल यवन के सम्मुख पलायन कर गये थे। यदि मेरे प्राणोत्सर्ग से राज्य की रक्षा हो गई तो राठौड़ों को कोई बुरा नहीं कहेगा। औरंगजेब को कहलवा दीजिए कि वह हमारे महाभारत के लिये कमर कस ले। जसवंतसिंह युद्ध-क्षेत्र से

तो नहीं हटे परन्तु उन्होंने रतनसिंह को स्वर्ग जाने के लिये लड़कर मरने की आज्ञा दे दी। रतनसिंह ने खड्ग तोल कर जूहार किया और हंसते हुए कहा कि अब हम अगले जन्म में मिलेंगे। फिर उसने सैनिकों से कहा कि जिन्हें जीवन से मोह हो वे वापस लौट जायें और जिन्हें स्वर्ग जाना हो वे मेरे साथ आ जाएं। रतनसिंह ने जप,तप, दान-पुण्य तथा इष्ट देवों का पूजन आदि करवाकर सैनिकों में मिठाई तथा प्रसाद इत्यादि वंटवाया। कविवर, सामन्तों को उत्साहित करने लगे और भाट तथा जागड़िये विरुदावलियां गाने लगे।

अन्ततः दोनो सेनाओं में प्रलयंकारी युद्ध आरम्भ हुआ जो तीन प्रहर तक चला। राजपूत योद्धा प्राण हथेली पर लेकर बड़ी शूरवीरता से लड़े। घोड़ों के धड़ों पर तलवारों के तीक्ष्ण प्रहारों की कड़कड़ाहट होने लगी। यवन सैनिक भयभीत होकर भागते हुए गिरने लगे। उछलते हुए मुण्ड चारों दिशाओं में बिखर रहे थे और इधर-उधर भागते हुए रुद्र उन्हें चुन-चुन कर झटपट उठाने लगे। खड़ग-प्रहार से शत्रुओं की आंते शरीर से विलग होने लगी। जंघाओं और पांवों के टुकड़े-टुकड़े होकर भूमि पर बिखरने लगे। घोड़े उछल-उछलकर युद्ध-क्षेत्र में इस प्रकार धराशायी हो रहे थे मानो पर्वत-शिखर पर चढ़ कर हिरन कूद रहे हों। नट की गिरह की भांति मुगल सैनिक बेबस होकर गिरने लगे। रतनसिंह मुगल-सैनिकों को युद्ध-क्षेत्र में उसी प्रकार कुचलने लगा जैसे कुंभकर्ण ने कपिदल को कुचल डाला था। हाक, किलकार तथा घोड़े-हाथियों के पांवों की आवाज से हाहाकार मच गया और चारों दिशाओं में रक्त की फुहारें उड़ने लगीं। रतनसिंह के इस अपूर्व युद्ध कौशल से प्रसन्न होकर सूर्य देवता कहने लगे कि रतनसिंह धन्य है जो म्लेच्छ सेना को तलवार के चक्कर में नचा रहा है।

कड़क्कड़ वाजि धड़ां किरमाळ। वड़व्वड़ भाजि पड़ंत वंगाळ ॥
दड़व्वड़ मुण्ड रड़व्वड़ दीस। अड़व्वड़ लेत चड़च्चड़ ईस ॥
अंत्रां खग झाट निराट अळग्ग। पड़े त्रि वि जंघ पड़े छाड़ि पग्ग ॥
पड़े रिण उच्छळि अेम प्रवंग। कुडाँ चढि जाणि विनाणि कुरंग ॥
खावैं रिण मद्धि गडूथळ खान। जिहीं नट खेल कुलट्ट कुवान ॥
रौद्रा रिण भूमि करंत रतंन। कपि दळ जाणि कि कुंभ करंन ॥
हूवे रिण हक्क किळक्क हमस्स। उड़े रत छौळिय दिस्न असस्स ॥
आखै धन धन रतंन अरक्क। चढावै मेछ धड़ा खग चक्क ॥

हड्डियों के समूह शंकर के हार बन गये और योगिनियां हाथ में खप्पर लिये जय जयकार करने लगीं। मांस भक्षी जीव, गिद्ध, शाकनी डाकिनी

और प्रेत आदि रण भूमि से मनचाहा कलेवर करने लगे। अप्सराएं झांझर तथा घुंघरुओं की झंकार करती हुई शूरवीरों का वर रूप में वरण करने लगी –

हड़ाहड़ रिक्ख हुवै हर हार। जयज्जय जोगणी किद्ध जियार।।
पळच्चर साकरिण डाकणि प्रेत। खुधावंत भक्ख लियै रण खेत।।
रमज्झम झांझर घूघर रोळ। झले वर सूर वरै रंभझोळ।।

औरंगजेब की सेना विशाल तथा विविध प्रकार के शस्त्रास्त्रों से आबद्ध थी। अतः मुगलों की विजय निश्चित जान राठौड़ रिणमल ने जसवन्तसिंह को युद्ध क्षेत्र से निकलवा कर पहले ही सुरक्षित स्थान पर भिजवा दिया। अब युद्ध का सम्पूर्ण दायित्व रतनसिंह की भुजाओं पर ही था। वीरता से लड़ते हुए तीन सौ बाणों तथा छब्बीस भालों के अस्सी घावों से घायल रतनसिंह अन्त में युद्ध क्षेत्र में गिर पड़ा —

वणै त्रिण सौ सर सेल्ह छवीस। सोहै किर वंस गिरव्वर सीस।।
असी खग घाव लगा जव अंग। जोधा हर ताम पड़ै जुड़ि जंग।।

रतनसिंह के वीरगति प्राप्त करते ही युद्ध समाप्त हो गया तथा औरंगजेब की सेना का जयघोष गूंजने लगा। युद्ध के इस अपूर्व दृश्य को देखने के लिये सूर्य देवता ने अपना रथ रोक लिया —

रतन पड़े रण नीवड़े ओरंग अड़े अरस्सि।
सूर खड़े चढ़ि रत्थ सभि नौवत तूरि निहस्सि।।१५६।।

रतनसिंह के बिखरे हुए अंगों को एकत्र कर बाणों और भालों की चिता बनाकर उसका दाह-संस्कार कर दिया गया। रतनसिंह के इस अपूर्व बलिदान को अमर बनाने के लिये उसके पुत्र रामसिंह ने रतन सिंह की अन्त्येष्टि-संस्कार वाले स्थान पर स्मृति स्वरूप एक चौंतरे का निर्माण करवाया। रतन सिंह की मृत्यु से लगभग ढाई सौ वर्ष पश्चात् उसके वंशजों ने उस चौंतरे के स्थान पर सफेद संगमरमर की छतरी बनवा दी जो आज भी उस ऐतिहासिक पुरुष की गौरव-गाथा का अमर सन्देश देती है।

वीरवर योद्धा रतन सिंह के अपूर्व शौर्य से प्रसन्न होकर ब्रह्मा, विष्णु, महेश आदि देवता उसे लेने को आये। रतन सिंह ने देवताओं से वीरगति प्राप्त अन्य साथियों के लिये भी स्वर्ग-लोक में व्यवस्था का अनुरोध कर, बारह दिन तक प्रतीक्षा करने का आग्रह किया जिससे कि उसकी रानियां भी सतीव्रत धर्म का पालन कर उसकी सहगामिनी हो सके। विष्णु ने रतन सिंह

के इस अनुरोध को सहर्ष स्वीकार करते हुए विश्वकर्मा को रत्नपुरी नामक सुन्दर नगरी के निर्माण का आदेश दिया। देवी चमत्कार से उसी समय रत्नपुरी बन गई। विष्णु भगवान ने रतनसिंह को अपने पास बिठाया। देवताओं ने चंवर डुलाए, अप्सराएं नृत्य करने लगी तथा छत्तीस रागिनियों और सात स्वरों में संगीत बजने लगा।

युद्ध से पूर्व रतलाम से विदा हुआ रतनसिंह जीवित नहीं लौटा। उसके स्थान पर रतन सिंह के आत्मोत्सर्ग का सन्देश लेकर, सन्देशवाहक रानियों के पास पहुंचा। रतनसिंह की रानियों ने रतलाम की उत्तर-पश्चिम दिशा में लगभग २५ मील की दूरी पर स्थित नीनोर (कोटड़ी) नामक स्थान पर, अपने पति की मृत्यु का सामाचार सुना। उन्होंने उसी स्थान पर सती होने का निश्चय किया। नीनोर के तालाब की पाल पर १५ मई सन् १६५८ ई० के दिन रतनसिंह की चार रानियों तथा तीन उप-रानियों ने जौहरव्रत का पालन किया। पातिव्रत-धर्म की रक्षार्थ रतलाम की वीरांगनाओं को जौहर की धधकती हुई ज्वालाओं मे भस्मीभूत होते देख कवि कहता है —

तिण वार त्रिया रतनेस तणी, विधि साहस सोळ सिंगार बणी।
पत्र हाथ मलूकज पंकजयं, गुरिग छत्रिग्नं गात विन्हें गजयं॥

वीर पति के शौर्यपूर्ण मरण पर, स्वर्ग में उससे साक्षात्कार की अभिलाषा लिये, हंसते-हंसते अपने प्राणों को जौहर की पवित्र ज्वाला में होम कर देने वाली, वीरांगनाओं का स्मारक आज भी नोनोर (कोटड़ी) में देखा जा सकता है।

इस प्रकार राजा रतनसिंह ने उपयुक्त अवसर पर नरपुर का उद्धार करके स्वर्गलोक में वास किया। उस यशस्वी योद्धा का यश युगों तक अमर रहेगा-

औसर नरपुर उद्धरे वैकुंठ कीधा वास।
राजा रैणाइर तणो जगि अविचळ जसवास॥१७१॥

वचनिका का प्रधान रस, वीररस ही है। रतनसिंह ने अपने स्वामी के प्राणों की रक्षा कर, लड़ते-लड़ते मृत्यु का वरण किया। जिस प्रकार रतनसिंह ने धर्मवीर के रूप में अपने प्राणों की बाजी लगायी उसी प्रकार उसकी वीर रानियों ने भी सती होकर वंश परम्परा को बनाए रखा। युद्ध वर्णन में कहीं-कहीं वीभत्स रस का प्रकाशन भी हुआ है। वीर रस के बाद कवि ने शृंगार रस को चुना है। शूरवीर पति की मृत्यु

का समाचार सुनकर वीर रानियां सती होने के लिए सोलह श्रृंगार करती हैं। कवि ने रानियों द्वारा किये जाने वाले श्रृंगार का आकर्षक वर्णन किया है। वचनिका में अधिकांश वर्णन ऐतिहासिक और प्रसंगानुकूल हैं परन्तु कहीं-कहीं हाथी, घोड़ों तथा सैनिकों के लम्बे वर्णनों से कथा-प्रवाह में व्यवधान उपस्थित होने लगता है। शायद कवि की युद्धप्रियता तथा अपने चरित्र-नायक के शौर्य एवं वलिदान के वातावरण को सजीव वनाने की प्रवृत्ति के कारण ही ऐसा हुआ है।

ग्रन्थ की भापा डिंगल है। प्रसंग तथा परिस्थितियों के अनुरूप कवि ने सुन्दर भापा और शैली का प्रयोग किया है जिससे वर्णित दृश्य वड़े सजीव और चित्रात्मक वन गये हैं। वचनिका में अनेक छंदों तथा गद्य-वंधों का प्रयोग किया गया है! त्रोटक, भुजंगी, गाथा, मौक्तिक दाम, दूहा, वड़ा दूहा, कवित्त, चंद्रायणो, हणुफाळ, गाहा, चौसर और दुमैल आदि के प्रयोग से कवि पांडित्य का अच्छा प्रदर्शन हुआ है। कवि की उच्च काव्य-प्रतिभा के फलस्वरूप कथा-प्रवाह की दृष्टि से, शब्द-चयन की दृष्टि से, रस-वर्णन की दृष्टि से और ऐतिहासिक विवरणों के समायोजन की दृष्टि से यह ग्रन्थ उच्चकोटि की रचना वन गया है। अनुप्रास तथा वयण सगाई जैसे शब्दालंकारों का प्रयोग कवि ने वहुतायत से किया है। वयण सगाई का सफल प्रयोग कवि की विद्वता का परिचायक है। देखिए —

मसतकि वांवे मौड, धारे भुज हिन्दू धरम
मेछ घड़ादिसि मल्हपिओ, रतनागिर राठौड़

अनुप्रास और वयण सगाई के पश्चात् कवि ने उत्प्रेक्षा अलंकार का प्रयोग किया है —

भयाणंक भैभीत सौमंत भारं।
क्रमे जाणि आंधी निसा अन्धकारं॥

निष्कर्प रूप में कहा जा सकता है कि 'वचनिका राठौड़ रतनसिंघजी री महेसदासोत री' डिंगल साहित्य की अनुपम कृति है।

चारण कवि जग्गा वीर और श्रृंगार रस के अद्वितीय कवि होने के साथ-साथ उच्चकोटि के भक्त भी थे। कवि जग्गा खिड़िया द्वारा भक्ति

विषयक शान्त रस में निर्मित छप्पय गूढ़-गम्भीर, भावपूर्ण एवं चमत्कार प्रधान होने के साथ-साथ आत्मानुभूति की श्रेष्ठ अभिव्यक्ति का भी अनुपम उदाहरण प्रस्तुत करते हैं। उदाहरण के लिए भक्ति रस का एक छप्पय देखिए —

पत राखे द्रोपदी, प्रभू विरदां प्रतपाळे।
ब्रह्म पत राहवी वेद च्यारे ही गावाळे।
पत राखे पंडवां, अंब कर मांझि उपाये।
गजपत पत राहवे, अनंत खगपत चढ आये।
करणां निधांन जगियौ कहूं, वहनामी वह वूझि इण।
कलजुग इसा मांहे किसन, राखे पत राधारमण।।[1]

जग्गा खिड़िया ने वचनिका के अतिरिक्त रतनसिंह के व्यक्तित्व से सम्बन्धित कुछ फुटकर गीत भी लिखे हैं। कतिपय कवित्त पंक्तियां देखिए —

(१) गुण गजेन्द्र मेमंत चले कळिजुग सरोवरि।
असत ग्राह ते विचि तेणि वद्धौ पग वोखरि।
लालचि जलि लीलतौ एक वकि जीव उमग्गे।
करि वखांण वहस्सियौ ताम को प्राण न लग्गे।
कवि भगति चाड माहेस का नर सुरिंद आवै न को।
आचार सूंडि वूडत अगो हरि रतंन उव्वारि हो।।१।।

(२) प्रवल गाजि धण वांण घमसांण पेला
मंडि भाण रथ ताण असमाण भालै।
नित्रीठो रीठ देवे - रतनाखियो
काळ भाळां विचे वेग काळे।।१।।
रयंण हिंदवांण सुरतांण वळ राखिवा,
हाक करि सेल - उप्पाड़ि हाथे।
अभिनमै गंग रिण जंग असि उव्वारियो,
मदझरां हैमरां नरां माथे।।२।।

---

1 राजस्थानी सवद कोस (प्रथम खण्ड) भूमिका – श्री सीताराम लाळस, पृ० १५।

महेशदास राव —

कवि महेशदास, राव जाति की लाखनौत शाखा के कवि राव बाघा के द्वितीय पुत्र थे। इनका जन्म पुष्कर के समीपस्थ खोहरी नामक ग्राम में हुआ था।[1] इससे अधिक कवि-जीवन सम्बन्धी अन्य प्रामाणिक विवरण उपलब्ध नहीं होता। ये बड़े विस्मय की बात है कि जिस कवि ने अपने आश्रयदाता अर्जुन गौड़ और उनके पुत्र राजसिंह की वंशावली में गौड़ों के वंश-वृतान्त को इतिहास सम्मत तिथि क्रमानुसार घटित घटनाओं द्वारा लिखकर अमर बना दिया उसने अपने जीवन-वृत्त के सम्बन्ध में कुछ भी नहीं लिखा। अपने ग्रन्थ के इतिहास प्रसंगों में भी कवि महेशदास ने प्रमाणित संवत्, तिथियां और वार आदि का विवरण दिया है लेकिन ग्रंथ की प्रणयन-तिथि और संवत् इत्यादि के सम्बन्ध में कोई लिखित संकेत नहीं मिलते। अतः कवि-प्रणीत रचनाओं के आधार पर ही उसका रचनाकाल निर्धारित किया जा सकता है। कवि महेशदास रचित रचनाएं इस प्रकार है –

(१) राव अमरसिंघ नागौर का साका,
(२) बिन्है रासो,
(३) राणा राजसिंघ का गुणरूपक,
(४) डिंगल गीत,
(५) राजा जयसिंघ के छप्पय,
(६) गौड़ों की वंशावली और
(७) रघुनाथ चरित नवरसवेलि.

राव अमरसिंघ का साका नागौर के शूरवीर शासक अमरसिंह राठौड़ द्वारा दाराशिकोह की हवेली के शाही दरबार में बख्शी सलावत खां को मारकर अर्जुन गौड़ आदि योद्धाओं द्वारा मारे जाने की ऐतिहासिक घटना पर आधारित है। यह घटना संवत् १७०१ में घटित हुई थी।[2] इस घटना के दूसरे वर्ष अमरसिंह के पुत्र के शाही सेवा में उपस्थित होने तथा बल्ख, बदख्शा और कन्धार आदि युद्धों में भाग लेने के विवरण भी ऐतिहासिक ग्रंथों में मिलते हैं। बल्ख युद्ध संवत् १७०३ में हुआ था।[3] राव अमरसिंघ का साका कृति में राव रायसिंह के जन्म तथा बाल्यकाल के अतिरिक्त कोई विवरण उपलब्ध नहीं होता। इसी आधार पर इस

१ बिन्हैरासो—भूमिका—सम्पादक श्री सौभाग्यसिंह शेखावत, पृ० ८
२ मारवाड़ का इतिहास–श्री विश्वेश्वर नाथ रेऊ–द्वितीय भाग, पृ० ६५४.
३ मआसिरुल उमरा-अनुवाद-श्री ब्रजरत्नदास बी. ए–प्रथम भाग, पृ० ७५

कृति का रचनाकाल विक्रम संवत् १७०१ से १७०३ के मध्य ठहराया जा सकता है। यदि इस रचना का सृजन सं १७०३ के बाद किया जाता तो तत्कालीन काव्य परिपाटी के अनुसार राव रायसिंह के ऐतिहासिक युद्धों का विवरण अवश्य होता।

बिन्हैरासो और राजसिंह का गुणरूपक रचनाओं का रचनाकाल संवत् १७१६ से पूर्व ठहरता है। इस काल के बाद की गौड़ो की वंशावली में राजा अनिरुद्धसिंह गौड़ के राज्यासन पर उनके पुत्र नृसिंहदास गौड़ का सिंहासनारूढ होना लिखा है।[1] अनिरुद्धसिंह का परलोकवास वि० सं० १७१६ में हुआ था।[2]

राजा जयसिंह के छप्पयों में शिवा सिसोदिया को पराजित करने का उल्लेख किया गया है। संवत् १७२३ में जयपुर के मिर्जा राजा जयसिंह ने, राजा शिवा को शाही दरबार में उपस्थित होने के लिए सहमत किया था। अतः राजा जयसिंघ के छप्पय कृति का प्रणयन काल विक्रम संवत् १७२३ के आसपास ही होना चाहिए।[3]

राजा रामसिंह कछवाहा का शासन काल विक्रम संवत् १७४४ से १७५५ के लगभग था।[4] अतः डिंगल गीतों के अन्तर्गत् राजा रामसिंह के गीत का रचनाकाल वि० सं० १७४४से १७५५ के मध्य ही ठहरता है। अन्य डिंगल गीतों का निर्माण काल सं १७१५ से १७१६ के मध्य अनुमानित होता है।

रघुनाथ चरित नवरसवेलि कवि महेशदास राव की अन्तिम रचना है जिसमें कवि की भक्ति-भावना का प्रकाशन हुआ है। नवरसों के माध्यम से कवि ने १२७ छन्दों में मर्यादापुरुषोत्तम करुणानिधान भक्तवत्सल भगवान श्रीराम का वर्णन किया है। वेलि कवि की अन्तिम रचना है जो अपूर्णावस्था में उपलब्ध हुई है।

उपर्युक्त उल्लिखित घटना संकेतों के आधार पर कवि महेशदास राव का रचनाकाल विक्रम संवत् १७०१ से १७५५ के बीच स्थिर किया जा सकता है।

---

१ बिन्हैरासो, परिशिष्ट घ, पृ० २१७.
२ मुगलदरबार-अनुवाद ब्रजरत्नदास, भाग—१, पृ०६४.
३ मुगल दरबार – अनु० श्री ब्रजरत्नदास, भाग- १, पृ० १६२-१६३.
४ मुगल दरबार – अनु० श्री ब्रजरत्न दास, भाग – १, पृ० ३४२-४४.

कुछ आलोचकों का तर्क है कि गौड़ नरेशों का राज्याश्रित कवि होकर महेशदास ने राव अमरसिंघ का साका, मेवाड़ के राणा राजसिंह और कोटा-बूंदी के सामन्तों का प्रशस्तिगान कैसे किया ? जहां तक आश्रयदाता के अतिरिक्त अन्य शूरवीरों पर काव्य-सृजन का प्रश्न है, युगीन परिस्थितियों को दृष्टिगत् रखते हुए ऐसा प्रयास असंभव नहीं है । मध्यकाल के अनेक कवियों ने अपने आश्रयदाता के वीरोचित-कार्यों पर काव्यप्रणयन करने के साथ-साथ समसामयिक योद्धाओं के अद्भुत कार्य-कलापों पर भी काव्य सृजन किया। अतः महेशदास द्वारा ऐसा करना कोई अनहोनी घटना नहीं है । ये विशेपता कवि की निष्पक्षता, निर्भयता तथा समसामयिक शूरवीरों के प्रति सम्मान की वृत्ति की ओर संकेत करती है। कवि प्रणीत रचनाओं के काल निर्धारण के वाद, रचनाओं का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत किया जा रहा है —

'राव अमरसिंघ का साका' नामक ऐतिहासिक काव्य-कृति में कवि ने ३४ छन्दों में, नागौर के शासक अमरसिंह राठौड़ के पूर्व-पुरुपो का वर्णन, अमरसिंह राठौड़ द्वारा सलावत खां के वध और शाहज़हां के शाहजादे दाराशिकोह की हवेली के शाही दरवार में अर्जुन गौड़ और अन्य योद्धाओं द्वारा नागोराधीश अमरसिंह के मारे जाने की घटनाओं का विवरण प्रस्तुत किया है। काव्य की भापा सुन्दर और प्रभावशाली होने के साथ-साथ वर्णित घटना के चित्र को चित्रित करने मे सक्षम है। कतिपय छन्दों के उदाहरण दृष्टव्य हैं —

असो राव अमरेस पाटि राजा गजपत्ती ।
भड़ वंका वोळगै भुजां पूजै असपत्ती ।।
नगर तखत नागौर वखत मोटै विरदाळी ।
नव कोटां नरइंद साख तेरहां सिघाळी ।।
अवतार रूप मानव इसे करण फतै सोही करें ।
पाताळ अनै आकास पुड़ भारथ जिम ऊंडळ भरै ।।६।।

अजण निराजी भळै आय मुख राव वकारे ।
अगनि कुंड मे किवौं स्वाहा करि के घिव डारे ।।
अमर अनम्मी कंध दिसा कपाट चलायै ।
जुड़िया दहुं देखिया जदे वारी सिर नाये ।।
उण समैं पहुंचि वीठळहरे वाहि तेग कंवे जड़ी ।
धड़ हूंत विछूटे सिर जहां जांणि खिलायत की दड़ी ।।३२।।

धड़ हूं सीस विछूटतां, राव गही जमदड्ड ।
तोकि चलाई अजण पै, कान वरावरि कड्ड ।।
राव पड़े रण भीम प्राण सुरपुर प्रयाणै ।
अछर चालि आकपे वाद मांचियो विमांणै ।।
माळ माळ वरमाळ वरण वरमाळ परक्खै ।
अकंड सों पूर सूरां हुई कंवारि हरक्खै ।।
छुड़ाय चाळ वरमाळ छडि खाथीय पड़ि खड़ खड़ै ।
विमांणं अैसे राव वैठियौ अछर विमांणां आभड़ै ।।३४।।

'बिन्हैरासो' ऐतिहासिक घटनाओं पर आधारित युद्ध-काव्य है जिसमें बादशाह शाहजहां के विद्रोही पुत्रों – शाहजादा शूजा, मुराद और औरंगजेब द्वारा सिंहासन प्राप्ति के लिए वनारस, उज्जयिनी और धौलपुर नामक स्थानों पर लड़े गये भयंकर युद्धों का ऐतिहासिक एवं काव्यमय चित्रण किया गया है। पहला युद्ध शूजा और शाही सेना के सेनानायक मिर्जा राजा जयसिंह कछवाहा के मध्य विक्रम संवत् १७१४ में वनारस के समीप हुआ था। इस भीषण संग्राम में शाही पक्ष की विजय और विद्रोही शूजा की पराजय हुई थी। कवि ने वनारस युद्ध का वर्णन, उज्जयिनी तथा धौलपुर युद्धों के वर्णनों के वाद किया है। आरम्भ से लेकर अन्त तक बिन्हैरासो में युद्ध घटनाओं का प्राधान्य है। काव्य ग्रंथ का प्रधान रस वीर रस है तथा सहायक रसों के रूप में वीभत्स, भयानक और रौद्र रसों की निष्पत्ति हुई है। योद्धाओं के घात-प्रतिघात तथा शस्त्र प्रहारों का जीवन्त चित्रण बिन्हैरासो में मिलता है। काव्य कृति को कवि ने तीन खण्डों में विभाजित किया है —

(१) उज्जयिनी – युद्ध (धर्मतपुरा या धरमत युद्ध),
(२) धौलपुर – युद्ध (शामुगढ़ युद्ध)
(३) वाराणसी - युद्ध (वहादुरपुर युद्ध)

उज्जयिनी – युद्ध खण्ड —

विन्हैरासो कथा का शुभारम्भ कवि ने विद्या की अधिष्ठात्री भगवती वाग्देवी सरस्वती, सर्वदोष निवारक गणपति और मानव-समाज में श्रेष्ठनीति-निधि गुरु की कथा से किया है। इसके वाद अकवर और जहांगीर के उत्तराधिकारी महान् प्रतापी वादशाह शाहजहां के यश-गौरव का प्रभावशाली चित्रण किया गया है। चारों दिशाओं में शाहजहां के प्रशस्ति वाद्यों की सुमधुर स्वरलहरियां लोगों के मन को मोहती रहती है। ऐसे अतुल धन-वैभव के धनी वादशाह

ने अपने चार शाहजादो में से दाराशिकोह को उत्तर दिशा, शाहशूजा को पूर्वदिशा, औरंगजेव को दक्षिण दिशा तथा मुरादवक्ष को पश्चिम दिशा के प्रान्त सौंपे हुए हैं। शाहजहां के रवि-प्रकाश सम बढ़ रहे यश-वर्णन के बाद कवि वर्ण्य-विषय की ओर अग्रसर होता है।

बादशाह शाहजहां की अस्वस्थता का समाचार उनकी मृत्यु के प्रवाद के रूप में फैल जाता है। शाहजहां की मृत्यु के इस समाचार को सुनते ही तीनों शाहजादे-मुराद, शूजा और औरंगजेब राजधानी पर आधिपत्य के उद्देश्य से विशाल सेनाओं के साथ राजधानी की ओर प्रस्थान करते हैं। बादशाह शाहजहां और शाहजादे दाराशिकोह को जव यह समाचार मिलता है कि शाहशूजा तोप, तलवार, वन्दूक आदि अस्त्रशस्त्रों से सज्जित, अस्सी हजार गजाश्व सेना के साथ राजधानी की ओर अग्रसर हो रहा है तो उन्होंने अपने विश्वासपात्र राजा-महाराजाओं को विद्रोह कुचलने के लिए तत्पर रहने के आदेश दिये। जोधपुर के महाराजा जसवन्त सिंह, अर्जुन गौड़, राव मुकुन्द सिंह हाडा, वीरभद्र गौड़ आदि अनेक वीर योद्धाओं को मुराद की सेना से दो-दो हाथ करने के लिये भेजा गया।

गुप्तचरों द्वारा जब औरंगजेव को पता चलता है कि मुराद ने अपने आप को बादशाह घोषित कर दिया है और वह शम्सवेग तथा मंसूरखांन आदि योद्धाओं के साथ पचास हजार सैनिकों की विशाल सेना लेकर अपने प्रान्त से उज्जैन की ओर चल पड़ा है तो औरंगजेव भी प्रसन्न होकर विशाल दल-बल सहित राजधानी की ओर रवाना हुआ। रास्ते में मुराद और औरंगजेव एक दूसरे से मिले। दोनो की संयुक्त सेनाएं उज्जैन की ओर रवाना हुई।

शाही सेना ने जसवन्त सिंह के नेतृत्व में खाचरोद नामक स्थान पर पहुंच कर अपना पड़ाव डाला। वैशाख मास कृष्ण पक्ष अष्टमी तिथि गुरुवार संवत् १७१५ का दिन था। दोनों पक्षों की सेनाएं अपना-अपना मोर्चा बनाकर युद्ध हेतु तत्पर थीं। औरंगजेव ने अपने दूत द्वारा जसवन्तसिंह से मार्ग न रोकने का आग्रह किया। जसवन्तसिंह द्वारा इस प्रस्ताव को न मानने पर मुराद ने सन्देशवाहक द्वारा कहलवाया कि अपने पिता से मिलने जा रहे हैं। पिता और पुत्र को मिलने से कोई नहीं रोक सकता। जसवन्तसिंह ने प्रत्युत्तर में कहा कि पिता से मिलना चाहते हो तो पांच हजार से अधिक सेना लेकर आगे नही जा सकते। शाहजादे इस उत्तर से आग बबूला हो उठे। अर्द्धरात्रि के लगभग व्यतीत हो चुकी थी। शाहजादों के संकेत पर युद्ध के नौपत-नगाड़े वजने लगे और प्रातः काल होते ही शाहजादों के आदेश पर शाही सेना पर गोलावारी आरम्भ हो गई।

अर्जुन गौड़ ने जसवन्तसिंह को बुलावा भेजकर अपने सैनिकों को समरांगण में कूद पड़ने के लिए तैयार किया। गौड़ों और हाड़ों के युद्ध-भूमि में प्रस्थान करने पर राजा जसवन्तसिंह ने भी अपने सैनिकों को रण-मंत्रणा हेतु एकत्रित किया। तदनन्तर राजा जसवन्त सिंह और अपने जीवन को क्षण-भंगुर समझने वाला शूरवीर रतनसिंह अपने-अपने घोड़ों पर सवार हुए। दोनों पक्षों की सेनाएं आमने – सामने जा डटी। हिन्दुओं ने शिव तथा राम और मुगल सैनिकों ने अल्लाह - अल्लाह का जयघोष कर युद्धारम्भ किया। सैनिकों, अश्वों और गजों के प्रयाण से दिन में ही अन्धकार सा छा गया। गजों से गज भिड़ गये। सैनिकों के क्षत-विक्षत शवों के ढेरों से समतल भूमि पहाड़ों में परिवर्तित हो गयी। वीर योद्धाओं के रक्त के फव्वारों से जल – प्लावन जैसी वीभत्सता छा गई। उज्जयिनी के इस रण-क्षेत्र में नारद, भैरव और वैताल ताण्डव – नृत्य करने लगे। भयंकर युद्ध वर्णनोपरान्त कवि ने युद्ध से पलायन करने वाले योद्धाओं का नामोल्लेख किया है। युद्ध क्षेत्र से पलायन करने वालों में जसवन्त सिंह, रायसिंह चन्द्रावत, गैरीसिंह कछवाहा आदि प्रमुख थे। उज्जयिनि युद्ध में शाही सेना को पराजित कर शाहजादों की सेनाएं गर्वोन्नत राजधानी की ओर अग्रसर हुई। उज्जयिनी युद्ध वर्णन में कवि द्वारा वर्णित युद्ध के शब्दचित्र देखिए —

रटै हिंदवा नांम सिव रांम रांम । दळां दख्खि वेहुवे वाजै दमांम ॥
अला अला ऊचार कीधौ अभंगा । खद्दां मरद्दां मुखे रव्व रंगा ॥
असां वांग बेऊ दळां तणा ऊड़ै । वंवे भांण धूवांण मझ्झेस बूडै ॥
पलीता जगे नाळि सुत्रनाळि पग्गै । लगे पाखरां ऊपरै ऊक लग्गै ॥
दगे मंग पक्षी स आकास दाहं । हुवे येमि आकास खंडे उनाहं ॥
अइ तोप छूटै वड़ी व्है अवाजं । गोइ धमक्कै मेघ गयणाग गाजं ॥
अनै गज खोटां स खोंली अंधारी । भणौ आदुवां लंगरां नीचि भारी ॥
वजै राग सिंधूव जोधा वहस्सै । तटां कायरां सायरां ते तरस्सै ॥
छितं गीध पंखी (स) गयणाग छाये । अनै अच्छरी वीटि वीमांण आये ॥
पड़ै गोळियां मार गोळां प्रहारं । तुटै वाण असमांण हूं जाणि तारं ॥
तीरां मार मांची सही दुतरफ्फां । फुटै कट्टि छाती न सीरां फरक्कां ॥
धमंधमं सेलां वहै व्है धमंका । चव धारवारां न पारां चमंका ॥
सेलां घाव हू स्त्रोण री धार छूटै । फव्वारा वांध मर्दै ऊठै ॥
खांपां छेक कीधी कितां जोध खग्गं । मिलै गूदरी जाणि बाजार मग्गं ॥
कहुं परै वीर खंडह विहंड । कहुं परै सुण्ड दण्डह प्रचण्ड ॥

कहुं परै दंत अंतह उलभिझ । मसिहार फिरै तिह वार मभिझ ॥
कहुं परै रुण्ड मुण्डह भ्रसुण्ड । कहुं परै तुंग कहुं परै झुण्ड ॥
कहुं परै लुथ्थि ऊपरि सुलुथ्थि । कहुं परै मंस कहुं परै बुथ्थि ॥
खळकंत श्रोण तवि नाळ खाळ । तहा तीर वीर भैंरु विताळ ॥

कहुं परै वांह गलवांह गथ्थ । कहुं परै चक्र कहुं परै रथ्थ ॥
कहुं परै नेज घज्जह निसांन । कहुं परै द्रव्य अनगनत जान ॥१६६॥

(२) धौलपुर-युद्ध—

शाही सेना की पराजय और शूरवीरों के युद्ध-क्षेत्र से पलायन के समाचार से शाहजहां वहुत दुःखी हुआ । उसे विश्वास हो गया कि दाराशिकोह पर संकट का पहाड़ टूट पड़ने वाला है । विपदा सिर पर आई जान शाहजहां अपने हितैषी शूरवीरों-राव शत्रुशाल, रुस्तम खां और राजा शिवराम आदि को निमंत्रित करता है । शाहजहां के आमंत्रण को क्षत्रिय-नरेश उत्साह सहित स्वीकार करते हैं । धौलपुर के समीप दोनों ओर की सेनाओं में भीषण संग्राम छिड़ जाता है । इसी युद्ध में अनगिनत शूरवीरों के साथ राजा रामसिंह राठौड़, शत्रुशाल और राजा शिवराम गौड़ भी अद्‌भुत शौर्य-प्रदर्शन करते हुए असिधारा में अन्तर्लीन हो जाते हैं । धौलपुर युद्ध-क्षेत्र में सम्पन्न युद्ध की वीभत्सता एवं संहार-लीला का चित्रण करते हुए कवि ने लिखा है —

अगगं अगगं गजराज गजैं । घननं घननं घन घंट वजैं ॥
रमझंमं घमघंमं घूघरयं । प्रति वाजत ते हय पख्खरियं ॥
घम घंमयं वाजिय धूजि धरा । रज उड्डिय वुड्डिय सहसकरां ॥
घसमस्सि धमस्सि जवान धसैं । किरवांनन तौड़ि कमांन कसै ॥
खिलि मिल्लिय भिल्लिय छक्करयं । मनु कुंद तुरंगन ववकरसं ॥

वळ वळ दिल्ली ऊवके, दळ जेहा दरियाव ।
'सत्रसल' मुनि आखाड़सिध, रेसे 'अवरंग' राव ॥५१॥
जिम दुसराहे कीजिए, येहा कीध उछाह ।
भड़ रवि मंडळ भेदवा, वरियौ मरण विमाह ॥५२॥

(३) पूर्व (वाराणसी) का युद्ध —

इस खण्ड में कवि ने उज्जयिनी युद्धमें वर्णित वादशाह अकवर जहांगीर, शाहजहां तथा उसके पुत्रों के वर्णन की पुनरावृत्ति की है । उसके

पश्चात् शाहशूजा द्वारा विद्रोह को कुचलने के लिये मिर्जाराजा जयसिंह, राव रायसिंह राठौड़, राजा अनिरुद्ध सिंह गौड़ और शाहजादा सुलेमानसिकोह को समरांगण में भेजने का विवरण है। दोनों पक्ष के शूरवीर जीवन और मरण के भय से निभ्रम होकर युद्ध हेतु कूद पड़े। गौड़ शाखा के शूरवीरों ने विद्रोही शाहजादों के नाक में दम कर दिया। राजा जयसिंह कछवाहा के अश्वारूढ हो कर रण भूमि में प्रवेश करते ही शाही सेना में विजय की आशा तथा विपक्षी सेना में पराजय की निराशा छा गई। गंगा तट के निकट दोनों सेनाओं में भयानक युद्ध आरम्भ हो गया। शस्त्राघातों से योद्धाओं के अंग विध गये, कवचों की लोह कड़िया टूटने लगी और भालों के प्रहार से शोणित धाराएं वहने लगी। देखते-देखते रण-भूमि फागुन के फाग दृश्य-सी प्रतीत होने लगी। लहू से वीरों के अंग-प्रत्यंगों पर रक्तिमा छा गयी। इस अद्वितीय युद्ध के वीभत्स दृश्य को देखकर सूर्य भी अपने स्थान पर स्तम्भित-सा हो गया। शत्रु सेना में त्राहि-त्राहि मच गई। अनिरुद्धसिंह अगणित शूरवीरों को मस्तक विहीन कर समरांगण में अडिगता से खड़ा था। विद्रोही शूजा के राजचिन्ह छीन लिये गये। कवि चूंकि गौड़-नरेशों का राज्याश्रित कवि था अतः उसने काव्य में गौड़-क्षत्रियों की शूरवीरता को अधिक उभारने का प्रयत्न किया है। गौड़-वीरों के पराक्रम के साथ-साथ कवि ने अन्य योद्धाओं के व्यक्तित्व को भी काफी हद तक सराहा है। कवि ने पूर्व-युद्ध के दृश्य को साकार करते हुए लिखा है —

घण धाय वजै रणफौज घड़ी। पड़ि वांण कवांणह रीठि पड़ी ॥
झखि आगि व्रजागि खाग झड़ी। कटि कंध वगत्तर तूटि कड़ी ॥
वहि धार अपार चौधार वहै। किलकार करै भड़ मार कहै ॥
हयराज चढ़ै तिण वार हठी। जुध भार पड़ै सिरदार जटी ॥
'भावसिंघ' अनै 'रिणछोड़' भणै। पहली रण दाखिय सूर पणै ॥७८॥

अभंगनाथ जैसिंघ, जीति ऊभौ आखाड़ै।
वाावाड़ै अणवीह, सींह जिम मछर उपाडै ॥
सैदांना वज्जिय भंजिय, रिम साह स 'सूजा'।
कळा चंज जिम चढी, पातिसाहे खग पूजा ॥

महि दीय फतै मामारखी, येमि कटक सह ऊलह्यौ।
पूख कथा जुद्ध जै प्रसन, कवि 'महेस' वरनन कह्यौ ॥८०॥

विन्हैरासो की ऐतिहासिकता —

विन्हैरासो में वर्णित शाहजहां के विद्रोही शाहजादों के शाही-सेना के विरुद्ध बगावत की घटनाओं का विवरण समसामयिक राजस्थानी ख्यातों, अरबी-फारसी के ग्रन्थों, ऐतिहासिक पत्र-पट्टों तथा ऐतिहासिक काव्यकृतियों में उपलब्ध होता है। इन राजस्थानी काव्य रचनाओं में खिड़िया जग्गा रचित वचनिका राठौड़ राव रतनसिंघ महेसदासौतरी, कुंभकर्ण सांदू कृत रतन रासौ, संगता सांदू कृत इन्द्रसिंघ रौ रूपक, जयचन्द्र यति कृत सईकी, कविया कर्णीदान कृत सूरजप्रकास और सूर्यमल मिश्रण प्रणीत वंशभास्कर आदि प्रमुख कृतियां हैं जिनके द्वारा इतिहास को दिशा - निर्देश मिलता है परन्तु इनमें से अधिकांश ग्रंथ इन ऐतिहासिक युद्धों के समापन के अनेक वर्ष पश्चात् लिखे गये अतः इन ग्रंथों की अपेक्षा तत्कालीन ग्रंथों में वर्णित घटनाएं अधिक प्रामाणिक हैं। बाद के कवियों में से कुछ ने तो वास्तविकता पर पर्दा डालने में कोई कसर नहीं रखी। उदाहरण के लिए सूरजप्रकाश के रचयिता कर्णीदान ने उज्जयिनी युद्ध-क्षेत्र से जसवन्त सिंह के पलायन की घटना को धूमिल करने का प्रयत्न किया है, उदाहरण देखिए —

दस हजार खदाळ पड़ै गज भिड़ज़ अपारां।
अंग असि अर आपरै, वहै रत लहि विहारां।।
गूड हाडा गहलोत त्रुटे सिव चख ततरासै।
रुक झटां राठौड़, सूर पड़िया सतरासै।।

वचियौ न एक लख दळ विचै, जवन धकै चढ जेण सूं।
'अवरंग' 'मुरादि' वंचिया उभै, आव न तूठी एण सूं।।[1]

ऐसी स्थिति में शायद अतिशयोक्ति जैसे दोषों से अछूती तथा ऐतिहासिक विवरण देने वाली कृतियों में जग्गा खिड़िया की वचनिका और महेशदास राव प्रणीत विन्हैरासो अधिक महत्वपूर्ण हैं। समसामयिक घटनाओं की प्रमाणपुष्ट जानकारी करवाने वाली इन कृतियों का तुलनात्मक विवरण अनेक भ्रान्तियां भी उत्पन्न करता है। उदाहरण के लिए खिड़िया जग्गा रचित वचनिका में राजा छत्रमणी यादव, राजा वैरीसिंह शेखावत, अमरसिंह कछवाहा तथा शहजादों की सेना के समसामयिक ख्यातिप्राप्त नामों का उल्लेख तक न होना, कवि के समरांगण में प्रत्यक्षदर्शी होने के दावे में सन्देह उत्पन्न करता है। जबकि महेशदास के रासो में दोनों पक्षों के

१. सूरजप्रकास- सं. श्री सीताराम लाळस भाग -२, पृ० २१. छन्द सं. २३.

सभी प्रसिद्ध योद्धाओं के नामों का उल्लेख मिलता है जिनकी पुष्टि समकालीन ख्यात ग्रंथों द्वारा होती है।

रासो और वचनिका में, जसवन्तसिंह तथा कासिम खां के युद्ध से पलायन के बाद युद्ध-संचालन राव रतनसिंह ने किया अथवा अर्जुन गौड़ ने, इस बात में काफी मतभेद दृष्टिगत होता है। यद्यपि दोनों ही ग्रंथ जसवन्तसिंह आदि के युद्ध त्याग के बाद भी युद्ध के निरन्तर चलते रहने में एकमत हैं। इस बात की पुष्टि तत्कालीन ख्यातों और अरबी-फारसी तवारिखों से भी होती है। राजस्थानी शोध संस्थान जोधपुर में महाराजा जसवन्तसिंह की सेना के साहनी कम्मा जगराज कुम्भकरणोत परिहार का एक समकालीन डिंगल गीत उपलब्ध है, जिसके शीर्षक से भी युद्ध के जारी रहने की पुष्टि होती है।[1]

राव रतनसिंह की मृत्यु हरावल की पंक्ति के पहले आक्रमण में ही जाने का उल्लेख आलमगीरनामा तथा कुछ अन्य फारसी स्रोतों के आधार पर डॉ यदुनाथ सरकार द्वारा लिखित 'हिस्ट्री ऑफ औरंगजेब' में मिलता है। विन्हैरासो द्वारा भी जसवन्तसिंह के युद्ध-पलायन से पूर्व रतनसिंह के प्रणोत्सर्ग की पुष्टि होती है। मारवाड़ की ख्यात में भी अनेक योद्धाओं के साथ राव रतनसिंह की मृत्यु का विवरण दिया गया है तदुपरान्त महाराजा जसवन्तसिंह के समरांगण से पलायन की घटना का विवरण दिया गया है। अतः जसवन्तसिंह के युद्ध पलायनोपरान्त राव रतनसिंह द्वारा युद्ध-संचालन करना तर्कसंगत नहीं लगता। इसी प्रकार उस समय की युद्ध-परम्परा के अनुसार सेनाओं में अलग-अलग घटक अपने-अपने कुल के नेता के नेतृत्व में ही लड़ते थे। अतः किसी एक व्यक्ति द्वारा सम्पूर्ण युद्ध का संचालन करना संभव प्रतीत नहीं होता।

विन्हैरासो में विपक्षी सेना-नायक औरंगजेब और शाही सेना के सेनापति अर्जुन गौड़ के पारस्परिक युद्ध का वर्णन अन्त में करके अर्जुन गौड़ को युद्ध का उप सेनानायक बना दिया है। उल्लिखित तथ्यों के कारण वचनिका के आधार पर उज्जयिनी युद्ध के उप-सेनानायक राव रतनसिंह की मृत्यु का प्रश्न फिर भी अनुत्तरित रह जाता है। इतिहास तथा साहित्य के शोधकर्ताओं को इस प्रश्न पर पुनर्विचार करना चाहिए।

---

१ गीत साहणी कमा जगराज कुंभकरणोत पड़ीयार री उजैण री वेढ बावत महाराजां नूं सात कोस पोंहचाय पाछो आय काम आयो।
— राजस्थानी शोध संस्थान जोधपुर में उपलब्ध हस्त-लिखित प्रति से।

वचनिका में राजा जसवन्तसिंह और राठौड़ सेना का विस्तृत वर्णन किया गया है जबकि अन्य योद्धाओं के वर्णन में कवि कम दिलचस्प दिखाई दिया है। परन्तु विन्हैरासो में पक्ष-विपक्ष के सभी प्रमुख योद्धाओं पर कवि ने समुचित प्रकाश डाला है। विन्हैरासो वीररस प्रधान रचना है परन्तु वीर रस के साथ कवि ने अन्य रसों का भी निरुपण किया है। कुछ उदाहरण द्रष्टव्य हैं —

भयानक रस —

सेनाओं के प्रयाण, अस्त्र-शस्त्रों के प्रयोग, घोड़े-हाथियों तथा सैनिकों के आक्रमण-प्रत्याक्रमण से युद्ध भूमि भयानक दृश्य में बदल जाती है —

झिलैं सूर सामन्त वाहै झटक्का। घड़ा ढंग कुढंग रा लै घटक्का॥
गजां तणां कुंभाथळां सैल लग्गै। वळे धार हूं धार उंकार वग्गै॥
कड़ी झड़ै जरद्दां तणी जोध कट्टै। झटक्का केई ढाल हूता उभट्टै॥
वाहै येमि गुरज्जां झरस्यां गुपत्ति। ढहै जोध असवार जाये धरत्ति॥
वहै येमि चूगा चपेटा सवाहं। गजां टूक पड़िया मवै गज्जगाहं॥

वीभत्स रस —

युद्ध-भूमि में शस्त्रास्त्रों के प्रहारों से बिखरे सैनिकों, घोड़ो, हाथियों आदि के अंग, शोणित धारा में नहाये क्षत-विक्षत शव और शूरवीरों के शवों पर मंडराते मांस-भक्षी पक्षियों के चित्रण द्वारा वीभत्स-रस की निष्पत्ति हुई है —

कहूं परै वीर खंडह विहंड। कहूं परै सुण्ड दण्डह प्रचंड॥
कहूं परै अन्त दन्तह उलझ्झि। मसिहार फिरै तिह वार मझ्झि॥
कहूं परै रुण्ड मुण्डह भ्रसुण्ड। कहूं परै तुंग कहूं परै झुण्ड॥
कहूं परै लुथ्थि ऊपरि सु लुथ्थि। कहूं परै मंसि कहूं परै वुथ्थि॥
खळकंत श्रोण तवि नाळ खाळ। तहां तीर वीर भैरुं विताळ॥
चवसट्ठि तहां भरि पीवै पत्र। सारद्द तंड नारद्द नृत॥
तहा लियै ईस सीसह सुभट्ट। किरमार धार धड़ हूं विछुट्ट॥

श्रृंगार-रस —

युद्ध-स्थल के बीच शूरवीरों के कवच, आभूषण, शस्त्र प्रहार तथा अप्सराओं के वर्णन आदि में कवि ने श्रृंगार रस का चयन किया है। राजस्थानी काव्य की वर्णन-परम्परा का यह एक महत्त्वपूर्ण अंग माना जाता है। काव्य की कुछ पंक्तियां देखिए कितनी सजीव और प्रभावोत्पादक है —

यत सूर कवचि पहरैं सु हेतु। उत रंभ कंचुकी तनी देत॥
यत सूर पांग वंधे सु वीर। उत रंभ चीर पहरै सु धीर॥
यत सूर टोप वंधै अतूल। उत रंभ दहै सिर सीस फूल॥
यत सूर ढाल वंधै अमांन। उत रंभ तरौनां पहरि कांन॥
यत दस्तान सूर वंधै अभंग। उत रंभ करत मेंहदीन रंग॥
कर सूर खाग मंजै कराळ। वहो रंभ नैन अंजै विसाल॥

शान्त रस —

शूरवीर, जीवन और मृत्यु को एक खेल-तमाशा ही समझते हैं। आत्मसम्मान को बेचकर जीने की अपेक्षा सम्मान पूर्वक मर जाना अधिक श्रेष्ठ है। युद्ध में प्राणों को न्यौछावर कर देने की अदम्य अभिलाषा को संजोए शूरवीर शत्रुशाल अन्य योद्धाओं को सम्बोधित कर बड़े ही दार्शनिक लहजे में कहता है—

कहै राव सत्रसाल सुणौ भड़ भीछ कहावं।
उरध मंडळ भेद तणा कोई नंहैं लाहवं॥
करि इस्ट द्रढ़ दमन भेदि सह कमळ उचाई।
स्याम काम धरि मनैं यह पग धरत सवाई॥

व्रहमंड फूटि चाले सु तैं जोतिहि जोति मिलाइयां।
यह धरै पांव असमेद का, दोय मुकति यक पाइयां॥

डिंगल-काव्य-परम्परान्तर्गत् कवि ने वयण सगाई (वर्ण-मैत्री) अलंकार का प्रायः सभी छन्दों में प्रयोग किया है। वयण सगाई के अतिरिक्त बिन्हैरासो में यमक, पुनरुक्तावदाभास, रूपक तथा अनुप्रास के अनेक स्थलों की अलंकार छटा भी दिखाई देती है।

रासो की भाषा व्रज मिश्रित डिंगल है। अनेक स्थानों पर अरबी, फारसी तथा तुर्की के शब्दों का भी प्रयोग किया गया है। विविध भाषाओं का प्रयोग कवि के प्रकाण्ड-पाण्डित्य और विविध भाषाओं में पारंगत

होने का सूचक है । बिन्हैरासो में यत्र तत्र गद्य खण्डों के उदाहरण भी उपलब्ध होते हैं । वचनिका और दवावैत गद्य-खण्डों पर आधुनिक हिन्दी के विकास काल की प्रारम्भिक अवस्था की झलक दिखाई देती है । इस प्रकार से बिन्हैरासौ को अठारहवीं शताब्दी का उत्कृष्ट वीर-काव्य माना जा सकता है जिसमें काव्यत्व की समस्त विशेषताओं का तो सुन्दर ढंग से प्रकाशन हुआ ही है साथ ही युद्ध घटनाओं का तिथि क्रमानुसार विवरण होने से ऐतिहासिक घटनाओं के काल-निर्धारण में भी काफी सहायता मिलती है ।

राणा राजसिंघ का गुण रूपक ५८ छन्दों की काव्यकृति है जिसमें मेवाड़ की प्राकृतिक सुषमा तथा महाराणा राजसिंह के स्वाभिमानी व्यक्तित्व का महिमामय वर्णन किया गया है । उदाहरण देखिए —

महि मंडळ मेवाड़ जिका दस-सहस सु गामं ।
वरण च्यार सुख वास धरंनि साद धामं ।।
विकट अनड़ वेछाड़ जूह जंगळ वन जेते ।
जळ पग-पग ऊजला तिहुं रति साख स तेते ।।

आलंब सुरह देवा द्विजां परम सरूप परस्सिय ।
राजसिंघ राण भूतेस रुख दोय यकलंग दरस्सिय ।।६।।

दोय राह पतिसाह दोय दोय तखत दिपाणों ।
छत्र दोय ससि सूर दोय कामत्ति कहाणों ।।
खग दोय खळ खंड दंड द्रोयणां अडंडां ।
हिन्दू तुरक हजुरि पाण द्रोयणां प्रचंडां ।।

अदभूत विहूं आखाड़-सिंघ कयँ जाय निरवळ कहूं ।
जाजुळी तेज जग ऊपरां दिल्ली उदियापुर दहूं ।।१२।।

गौड़ां की वंशावली ऐतिहासिक कृति है जिसमें गौड़ क्षत्रियों का वंशानुगत विवरण संकलित है । गौड़ नरेशों द्वारा प्रदर्शित अतुल बल पराक्रम का चित्रण गौड़ां की वंशावली में देखा जा सकता है । उदाहरण देखिए —

मत्रिया गड़ गोपाळमल ससी सूर समांणी ।
गढ जीवण रण गौड़ गड़ रखण भुज पांणी ।।

भरि सज्जित भंडार मुरज सह कोट सम्हारे ।
वाण नाळि वंदूक सौर सीसा भरि सारे ॥
सांमंत सूर जोधा समूह कळह गौड़ भड़ कोपियो ।
अजमेरि धणी पाणी-अणी यस आसेर स ओपियो ॥२१॥

रघुनाथ चरित नवरस वेली एक सौ सत्ताइस छन्दों की व्रजभाषा की काव्य रचना है जिसमें भगवान श्री राम का चरित्रांकन किया गया है।

अन्य रचनाओं में छप्पय तथा डिंगल गीत उपलब्ध हुए हैं जिनमें कवि ने समसामयिक योद्धाओं के अपूर्व शौर्य एवं बलिदान का सुन्दर चित्रण किया है । उदाहरण के लिये अर्जुन गौड़ की प्रशंसा में कवि-प्रणीत गीत यहां प्रस्तुत किया जा रहा है —

कदै गाळ वावै नहीं साख तेरह कमंध, भिड़ण रिणमाळ वस चौज भूलो ।
अमर नग थाळ अजमाळ रै अडाणै, दूसरा माल सो माल दूलो ॥१॥
हाथ सिरदार मसळै मिळै रायहर, समर हथियार रो रहे सहियो ।
गौड़ रै मार विच सटें गहणों गळै, राव हीरा तणो हार हरियो ॥२॥
कोट नव समंद पाण थाका करै, खेड़ खांटायतां मांण खूटा ।
छात तोप रा वानैत रा छावड़ा, छात कणपात नो हाथ छूटा ॥३॥
मांजियो पाधरै धाय सेंदा भड़ा, चढ़ै चो लाय हूं वांधि नेळो ।
पाळ यळ माळ ली मास मोटो पिसण, भुज गळै वांधियां वसै भेळो ॥४॥

नाथा सांदू —

अठारहवीं शताब्दी में उत्तम श्रेणी का काव्य सर्जन करने वाले कवियों में चारण कवि नाथा सांदू का विशेष स्थान है। कवि के जीवनवृत्त पर प्रकाश डालने वाली प्रमाणपुष्ट सामग्री उपलब्ध नहीं होती। अपनी कृति गुणदूहा केसरीसिंघ की पुष्पिका में नाथा ने स्वयं को अर्जैराजोत बतलाया है।

डिंगल भाषा में श्रेष्ठ गीत रचने के साथ-साथ कवि नाथा ने गुण दूहा केसरीसिंघ कृति का प्रणयन किया । ऐतिहासिक घटनाओं के प्रामाणिक विवरण होने के कारण साहित्य के साथ २ इतिहास की दृष्टि से भी यह अत्यन्त उपयोगी रचना है । ऐतिहासिक दृष्टि से उपयोगी परन्तु अब तक अज्ञात सी रही इस रचना में वि. सं. १७१५ में हुए सामूगढ़ युद्ध का वर्णन है । इस युद्ध में रायपुर के स्वामी केसरीसिंह ऊदावत ने शाही पक्ष की ओर से शाहजहां के विद्रोही शाहजादों से

भयंकर युद्ध करते हुए मृत्यु का वरण किया था । केशरी सिंह, ऊदावत शाखा का राठौड़ क्षत्रिय और मारवाड़ में स्थित रायपुर तथा सोजत का अधिपति था ।

डिंगल काव्य की प्राचीन परम्परागत परिपाटी से हटकर कवि नाथा ने गुण दूहा केशरीसिंह भगवानदासौत कृति में अपनी अद्भुत काव्य प्रतिभा का दिग्दर्शन करवाया है । मंगलाचरण अथवा प्रारम्भिक वन्दना से काव्यारंभ न करते हुए कवि नाथा ने वर्ण्य-विषय के साथ काव्य का आरम्भ किया है । इसी प्रकार युद्ध प्रसंगों में भी आद्योपान्त शिव के डमरु, वैतालों की अट्टहास गर्जना अथवा काली के रक्त खप्पर का वर्णन दिखाई नहीं देता । काव्य का नायक तलवार का धनी, सुभट शूरमा और प्राण हथेली पर लेकर चलने वाला है । युद्ध में स्वामी के आत्म-सम्मान की रक्षा हेतु केशरीसिंह के प्राणोत्सर्ग से उसका व्यक्तित्व और अधिक प्रभावशाली बन गया है । सम्पूर्ण कृति में भाषा लालित्य तथा ऐतिहासिक घटनाओं का सामंजस्य दिखाई देता है । अतिरेक भाव-सरिता के प्रवाह में बहकर कवि ने ऐतिहासिक घटनाओं को अपनी आंखों से ओझल नहीं होने दिया है । भाषा लालित्य तथा ऐतिहासिक विवरणों का समन्वित रूप काव्य की बोधगम्यता बढ़ाने वाला है । युद्ध प्रधान घटनाओं के कारण कृति वीर रस प्रधान है । वर्णन शैली तथा भाषा प्रयोग कवि की असाधारण प्रतिभा के परिचायक हैं । बड़े दोहों के समान डिंगल के गीत छन्द पर भी कवि का श्लाध्य प्रभाव देखा जा सकता है । नाथा सांदू की सुन्दर गीत रचना-शैली पर समकालीन कवि का मत प्रस्तुत किया जा रहा है —

नाथा गाथा ताहरा, भारी गुण भै भीत ।
ऊडै़ आखंता समां, गरुड़ वचा जिम गीत ।।

३४५ बड़े दोहों (सांकलिया दूहा) में निर्मित इस कृति में धौलपुर के समीप सामूगढ़ नामक स्थान पर हुए युद्ध का वर्णन है। गुणदूहा केसरीसिंघ भगवानदासोत रा कृति की वि. सं. १७५१ जेठ वदि ६ की रायपुर के हेम ब्राह्मण के हाथ की लिखी प्रतिलिपि उपलब्ध हुई है ।[1] सामूगढ़ युद्ध वि. सं. १७१५ में हुवा था और गुण दूहा केसरीसिंघ भगवानदासोत रा नामक कृति की प्रतिलिपि वि. सं. १७५१ की है । अतः

---

१ मरु भारती वर्ष - २६, अंक १ में श्री सौभाग्यसिंह शेखावत का गुण दूहा केसरीसिंह भगवानदासोत रा विषयक निबन्ध.

आलोच्यकृति का रचनाकाल वि. सं. १७१५ से १७५१ के मध्य ही निर्धारित होता है ।

कृति के आरंभ में सौ से अधिक दोहों में कवि ने अपने चरित नायक के पूर्वजों के गौरवशाली स्वर्णिम इतिहास का वर्णन किया है। तदन्तर सुभट शूरमां केशरीसिंह के सामूगढ़ समरांगण में प्रदर्शित अपूर्व शौर्य का चित्रण किया है।

शाहजादा दाराशिकोह अपने भाईयों के विद्रोह को कुचलने के लिए वीरवर केशरीसिंह को विचारविमर्श हेतु आमंत्रित करता है। दाराशिकोह के समक्ष अपने जोश और अमित उत्साह को प्रदर्शित करते हुए केशरीसिंह कहता है —

द्वारासुकरि दुझालि, कमधज तेड़ केहरी ।
पिड़ि लड़िस्या आ पूछियौ, चांके चढिस्यां चालि ॥
यां कहियौ ओंगाढ, सुकेहरी दारासुकर ।
खळ दळ माथै खेरस्यां, विधि वीजुजळी वाढ़ ॥

दाराशिकोह, केशरीसिंह को सिरोपाव देकर उसके मनसब में वृद्धि करता है । इस घटना-वर्णन के पश्चात् कवि ने केशरीसिंह द्वारा रक्तफाग खेलने के लिए शूरवीरों को निमंत्रित करने की घटना का विस्तृत वर्णन है । युद्ध-हेतु प्रयाण के समय केशरीसिंह, शाहजादा दाराशिकोह के पास जाता है । इस घटना का शाब्दिक-चित्र देखिए —

सुईव दिय सिरपाव, दूणां वाधारा दिया ।
आयौ डेरा ऊपरां, सक भूपाल सुजाव ॥
अड़िया सिर असमांन, भालिम चा चडिया भरण ।
आज केहरि ऊदातां, वाधारे वंसि वांन ॥
असि जमदढ़ केवाण, सावळि वाण संवाहिया ।
घण घाये वरसी घड़ा, जुध करसी जमरांण ॥
तेड़ा भड़ि तियारी, वीजड़ हय भाई बंधा ।
असि आगै अवधारि, तह पांडव कसि दुहुतंगां ॥
कमधज चडियौ केहरी, वेगौ विघन विचारि ॥
खैंगां सोहड़ां खूर, विना सिलह रचिया विघन ।
केहरी साहिजादा कनै, सजियां आयौ नूर ॥

समरांगण में प्रवेश कर दोनों सेनाओं में घमासान युद्ध प्रारम्भ हो जाता है। दोनों पक्षों के परस्पर घात-प्रतिघात से युद्ध की वीभत्सता और अधिक बढ़ जाती है। अद्भुत शौर्य के साथ युद्ध करता, शत्रुओं को छकाता केशरीसिंह अन्ततः भूखे शेर के समान मुराद के सम्मुख पहुंच जाता है। केशरीसिंह को अपने सामने देख हतप्रभ मुराद किनारे से बच निकलता है —

खेड़ेचौ करि खीज, वीरारस खच वावरै।
कमळि खिवै दळि दळि करग, वादळ वादळ वीज।।
चाचर खागां चूरि, भालां पंजर भरियौ।
केहरि गौ माळां कळहि, सिरि गज ढालां सूरि।।
खेलंतै खत्र खेल, वीरत ताता वाहिया।
केहरि चालेगौ किलंब, समहरि खागां सेल।।
विढ़ि चढ़ि बकवादि, सु केहरी भालां सरां।
घरण घाऐ वप घेरियौ, मुंह फेरियौ मुरादि।।
सुं सांचा सुरताणि, पातलहर कर परखिया।
हंस वचियौ लिखियौ हुवै, पग छूटा पहठाणि।।

अपूर्व शौर्य का प्रदर्शन करते हुए अनेक योद्धाओं के साथ केशरीसिंह और उसके सत्रह सम्बन्धी मृत्यु का वरण करते हैं —

केहरी आगै कांमि, सांम तणौ रहियौ समरि।
जैमल उजवाळे जसौ, द्वारा सुछळि दुगांमि।।
किरतौ विसन लंकाळ, सुत दलपति नरपाल सुत।
मेड़तिया पह छळि मुआ, भेळा सुत भूपाल।।
पमंग झड़प खगपूर, वाजंतां नह गयौ विमुहि।
करण रहियौ जुध केहरि, दळ ऊडां तांडूर।।
अछरां रूपि अगाहि, नर नाइक रीधौ नहीं।
केहरि हरि भेळौ कमंध, जोति समाणौ जाहि।।

केशरीसिंह के वीरोचित बलिदान के घटना-वर्णन के साथ ही कवि ने काव्य का समापन किया है।

ईसरदास बारहठ —

कवि ईसरदास, सूरजमल के पुत्र और बारहठ शाखा के चारण थे। पंडित विश्वेश्वर नाथ रेऊ ने 'मारवाड़ का इतिहास' और अंग्रेजी ग्रन्थ 'राठोड़ दुर्गादास' में अजित ग्रन्थ नामक एक ऐतिहासिक कृति का उल्लेख किया है। अजितग्रन्थ सम्बन्धी ये उल्लेख किसी अज्ञात कवि विरचित ऐतिहासिक ग्रन्थ अजित चरित्र के ही हैं जिनको भ्रांतिवश अजित ग्रन्थ के नाम से संबोधित कर दिया गया है। ये ग्रन्थ बारहठ कवि ईसरदास रचित ऐतिहासिक कृति अजितग्रन्थ से सर्वथा भिन्न है। ऐतिहासिक काव्य होने के साथ-साथ अजितग्रन्थ मध्यकालीन राजस्थानी के एक सुकवि द्वारा रचित डिंगल भाषा की एक प्रौढ़ रचना है।[1]

अजितग्रंथ को कवि ने दो खण्डों में विभक्त किया है। प्रथम खण्ड में दोहा, हणुफाल बेग्रक्खरी, मोतीदाम तथा भुजंगप्रयात आदि १२० छन्दों का प्रयोग किया गया है। द्वितीय खण्ड में कुल ८५ छन्द हैं जिनमें १ गाथा, ३ दोहे तथा शेष छप्पय छन्द हैं। दोनों ही खण्डों में महाराजा जसवन्तसिंह की मृत्यु के पश्चात् घटित होने वाली घटनाओं से लेकर पुष्कर युद्ध तक की घटनाओं का काव्यबद्ध विवरण संकलित है। जमरूद के थाने पर शाही सेना में नियुक्त जोधपुर के महाराजा जसवन्त सिंह का २८ नवम्बर १६७८ ई० को पेशावर में देहावसान हो गया। बादशाह औरंगजेब की हिन्दू-विरोधी नीतियां उस समय तक अपने चरम-उत्कर्ष पर पहुंच चुकी थी। जजिया कर की वसूली और राजस्थान में स्थित हिन्दू-मन्दिरों के विध्वंस का नृशंस-कार्य तीव्र गति से किया जाने लगा। दराबखां ने खण्डेला के मन्दिरों को तोड़ डाला तथा हिन्दू-विरोधी इस अभियान का विरोध करने वाले योद्धा मार डाले गये। राजसिंह मेड़तिया ने मेड़ता की ओर से मन्दिरों की रक्षा का अभियान चलाया। वीर राजसिंह ने किरोड़ी साहुल्ला खां को कैद कर मेड़ता को अपने अधिकार में ले लिया। प्रत्युत्तर में बादशाह ने अजमेर में नियुक्त सूबेदार तहव्वर खां को पुष्कर में स्थित मन्दिरों के विध्वंश का आदेश दिया। राठौड़ों को जब इस आदेश की सूचना मिली तो वे मेड़ता से रीयां होते हुए पुष्कर के रण-क्षेत्र में जा डटे। तहव्वर के साथ हुए इस घमासान युद्ध में अनेक वीर योद्धा काम आए। इसमें पराक्रम का प्रदर्शन करते हुए क्षत्रिय-योद्धा मेड़तिया राजसिंह भी समरांगण में मारा गया।

जहां तक पुष्कर युद्ध की ऐतिहासिकता का प्रश्न है समकालीन ऐतिहासिक

---

१ अजित ग्रन्थ – सम्पादक डॉ० रघुवीर सिंह और श्री ओंकार दान चारण पृ०

विवरणों से इस घटना की पुष्टि होती है। अजितग्रन्थ के अनुसार युद्ध की तिथि भाद्रपद सुदि ग्यारस विक्रम संवत् १७३६ अर्थात् ६ सितम्बर १६७६ ई० शनिवार है —

वरी घड़ा वींदणी, वरी अछर रिण रीसे ।
पिलंग जुध पोढियौ, सूंड गज वाज ओसीसै ।
छैतीसै भाद्रवै, संवत् सतरै इगियारस ।
सुकळ पकुव तिथ सिरै, मिलै सूरां सूरां अस ।।
एहवी राड़ कीधी इळा, भड़ां नाम नह जाय भव ।
कमधजां इसौ साकौ कियौ, कयी कीत 'ईसर' सकब ।८१।।[1]

राजरूपक ग्रन्थ में भी पुष्कर युद्ध की यही तिथि दी गई है परन्तु जोधपुर राज्य की ख्यात[2] तथा अजित विलास[3] आदि रचनाओं में भाद्रपद वदि ग्यारस १७३६ विक्रम अर्थात् २१ अगस्त १६७६ ई०, गुरुवार के दिन युद्ध होना बताया गया है। मआसिर-ए-आलमगीर से ज्ञात होता है कि २६ रजब अर्थात् २३-अगस्त-१६७६ ई० शनिवार को पुष्कर युद्ध लड़ा गया। निरन्तर तीन दिन तक लड़े गये इस भीषण युद्ध में अन्य योद्धाओं के साथ मेड़तिया राजसिंह भी मारा गया था। इन विवरणों के आधार पर कहा जा सकता है कि पुष्कर-युद्ध २१ अगस्त १६७६ को समाप्त हो गया था। मआसिर-ए-आलमगीर और जोधपुर राज्य की ख्यातों के विवरण क्योंकि प्रामाणिक जानकारी पर आधारित थे, अतः इनमें दी गई तिथियों को ही विश्वसनीय माना जाना चाहिए। अन्य रचनाओं में भ्रान्तिवश शुक्लपक्ष के स्थान पर कृष्ण पक्ष लिख दिया गया होगा। हो सकता है इन रचनाकारों को इस बात की जानकारी भी नहीं रही हो कि यह युद्ध तीन दिन तक लड़ा गया था। इस प्रकार युद्ध का समय १९-२१ अगस्त ठहरता है।[4] इस युद्ध का सर्वाधिक महत्व इस बात से है कि तीस वर्ष के संघर्ष काल में यह पहला युद्ध था जिसमें राठौड़ों ने शाही सेना से खुलकर टक्कर ली थी।

लघु काव्यकृति होते हुए भी अजितग्रंथ अपने समय की एक महत्वपूर्ण

---

१ अजितग्रंथ-हस्तलिखित प्रति, छन्द संख्या २०४.
२ जोधपुर राज्य की ख्यात -२, ५३.
३ अजितविलास, पत्र-७७-ख.
४ अजितग्रन्थ – सम्पादक – डॉ० रघुवीर सिंह और श्री ओंकारदान चारण, पृ० ५५.

ऐतिहासिक रचना है जिसमें मारवाड़-क्षेत्र से बाहर लड़े गये खण्डेला युद्ध और युद्ध में मारे जाने वाले शूरवीरों का विवरण भी दिया गया है। खण्डेला के इतिहास-लेखन में यह कृति महत्वपूर्ण सम्बल सिद्ध होगी। डिंगल भाषा की यह एक सुन्दर रचना है जिसमें कवि ने अपने भाषा शिल्प से युद्ध-वर्णन को चित्रात्मक-रूपों में परिवर्तित कर दिया है। युद्ध-वर्णन के शब्द-चित्र, उदाहरण के लिये प्रस्तुत किए जा रहे हैं—

पड़ै निवाब धर सीस, पड़ै गोळा पीठांणां ।
पड़ै तूट कैमरां, पड़ै वांणा घमसांणा ॥
पड़ै झाट असमरा, पड़ै वाथट अभेनर ।
पड़ै गयंद अणपार, लोथां पाताहर ॥
उपड़ै अरंद जंगी उरस, खत्री मझ सांमा खड़ै ॥
नीसस्या तिके कायर निलज, प्रथम भार दूदां पड़ै ॥[1]

वड़वड़ समचड़ विनड़, उररड़ दड़वड़ उर चड़चड़ ।
झड़ झड़ औझड़ बिजड़, दरड़ रोहर सिर दड़दड़ ॥
धड़ लड़थड़ उकरड़ अनड़ भड़ हसे हड़ोहड़ ।
झड़ निखंग झड़ माच, प्रेत आमंख अगेतड़ ॥
अर गज्ज धडा भांजै गहड़, वीर लड़ै वडवड़ विनड़ ।
कुंजरां कंध तूटै कहड़, गाज वाज आतस गड़ड़ ॥[2]

कवि ईसरदास अपने समय के महत्वपूर्ण कवि थे। संवाद-शैली के प्रयोग से काव्य के सौन्दर्य एवं रसग्राह्य गुणों में वृद्धि हुई है। अजितग्रन्थ के अतिरिक्त कवि द्वारा निर्मित फुटकर रचनाएं मिलती हैं। अपने गीतों में ईसरदास ने समसामयिक योद्धाओं के शौर्यमय कार्यकलापों का चित्रण किया है। उदाहरण के लिये जोधपुर के महाराजा अजीतसिंह पर कहा गया एक गीत प्रस्तुत किया जा रहा है जिसमें कवि ने अजीतसिंह की शूरवीरता का शाब्दिक-चित्रांकन किया है—

डरै लंक वागस समंद थरसळै दसौ दिस, भींछ जोधाण गढ आप भांगै ।
करग किरमाळ गह गजां फौजां करै, 'अजो' के ऊपरां कोप आंगै ॥१॥

त्रकुट गढ थरहरे नाग दघ डरै नद, भरै चत्रकूट डंट जोड़ भुज-दंड ।
गज ढाल किरमाळ गह गढपती. अेहड़ गीस किस सीन डकर ॥२॥

---

1 अजितग्रन्थ, छन्द संख्या ४५.
2 वही, छन्द संख्या ६५.

औद्रके हेमगढ अहि दध औद्रके, सांकै खुरसांण छैं खण्ड सारैं ।
मुतण 'जसराज' अवतार वंस, पाट थंभ नमै आय पांव थारै ॥३॥

नमंद हीलोळियौ नागसुर, पछट लंक रामचंद दोध कर पाड़ ।
गांजिया अगै त्या 'अजो' नह गांजते, अगंजी कमंध अवनाड़ ॥४॥

लघराज —

ये कोचर मुहता मंत्रीश्वर महेश के पुत्र और जोधपुर राज्य में स्थित सोजत नगर के निवासी थे । लघराज के पिता जोधपुर के महाराजा जसवन्तसिंह के विश्वासपात्र मंत्री थे । कवि लघराज ने अपनी रचनाओं में लधिया, लधो तथा लधमल आदि नामों का भी प्रयोग किया है । अपने पिता तथा जन्मस्थान का विवरण देते हुए कवि ने 'महादेव निसाणी' में लिखा है —

कर भासा 'लघराज', पिता माहेस' मंत्रीस्वर
सोजत वास सुवास, सेव चामुंड निरन्तर ।

'देव विलास' कृति में अपना परिचय देते हुए कवि ने लिखा है—

महिप राव 'चूंड, रै, तपे नागोर तखत्ते ।
'कोचर' पुत्र सुपुत्र, हुवौ राव जोध वखत्ते ।
'दूजण' सांगो' 'नरी' 'अखौ' 'तपमाल' मुरधर ।
तिण घर 'वैरीसाल' वीरमे-हीमत सागर ।[1]

तिण वंश लघराज, तुच्छमती तुछ आदर ।
तिण मोटो गुण एक, वसे सोभित निरंतर ॥
करै सेव च वंड, हुई परत्तख सगत्ती ।
तिण कारण तेण नूं, सिको मांने छत्रपत्त ॥

प्राप्त रचनाओं के आधार पर कवि लघराज का रचनाकाल विक्रम संवत् १७०८ से १७३० माना गया है इन्होंने साधारण बोलचाल की

---

१ मरु भारती, जनवरी-फरवरी १९५४ में श्री अगरचन्द नाहटा के लेख, महाराजा जसवन्तसिंह के मंत्री लघराज और ग्रन्थ से ।

राजस्थानी भाषा में काव्य-प्रणयन किया है । इन्होंने संस्कृत के आधार पर जो रचनाएं लिखी हैं, उनका सर्जन, संस्कृत के विद्वानों ने मुनकर किया है । कवि द्वारा प्रणीत रचनाओं का विवरण इस प्रकार है —

१. कालिका जी रा दूहा, सं १७०८,
२. पाबूजी रा दूहा, सं १७०९,
३. प्रबोधमाला,
४. देव विलास,
५. लधमल सतक, सं १७२३,
६. रुक्मांगद चरित सं० [illegible]
७. सीख बत्तीसी
८. भजन पच्चीसी
९. महादेव जी री निसांणी
१०. गणेश जी री निसांणी

कवि द्वारा लिखी कृति 'देवविलास' से प्रस्तुत एक उदाहरण देखिए —

जोधाणे 'जसराज' न्रिप, तप दूजी 'जैचंद' ।
उठी दिली लग आगरै, हद ईस दीसी समंद ।
प्रभ दीधौ महराज पद, रीझे साहजहांन ।
पीछै 'ओरंग' मांन अत, महिपत न को समांन ।
मित्री तिण लधमालियो, साचो सगत भगत्त ।
रहे भजन भगवंत रत, जे जांणंत जगत्त ।[1]

तुलछो[2] —

इनके जीवनवृत्त पर प्रकाश डालने वाली प्रमाणपुष्ट जानकारी उपलब्ध नहीं होती परन्तु रचनाकाल में संकेतित समयानुसार तुलछो को [illegible] शताब्दी का कवि माना जा सकता है । कवि द्वारा वि० सं० [illegible] में निर्मित कृति 'प्रेमवल्ली रा दूहा' अपूर्ण अवस्था में उपलब्ध हुई है । [illegible] दोहों में सम्पन्न इस काव्य-रचना में आरम्भ के साढ़े तिरेपन दोहे [illegible] रहे हैं । प्रेमवल्ली रा दूहा में कवि ने विरह जनित पीड़ा का [illegible] चित्रण प्रस्तुत किया है । आत्मा के अभाव में शरीर निष्क्रिय हो जाता है उसी प्रकार पति से बिछड़ी कामिनी का जीवन भी [illegible] और [illegible]

---

१ राजस्थानी सबद कोस (प्रथम खण्ड) भूमिका—श्री [illegible], पृ० १५३ ।

२ मरु भारती, जुलाई १९६८ में श्री अगर चन्द नाहटा का [illegible] दोहे विषयक निबन्ध, पृ० ४९

जाता है। प्रणय की प्रवंचनाएं विरहावस्था में, विरही मन को कितना कचोटती है, इसके उदाहरण तुलछो कवि कृत रचना प्रेमवल्लरी रा दूहा में देखे जा सकते हैं। कतिपय उदाहरण द्रष्टव्य हैं—

तूं रतनागिर तूं रतन, ते मन लीनौ मोहि।
तो मैं वुड्‌डूं जीव ले, ले ले निकसत तोहि॥
अक्षर कारे पर गये, कागद धवली घात।
लेखण की छाती फटी, लिखत विरह की वात॥
तुम विण जो पल जात है, सी इक जुग समान।
हम तुम ऐसी प्रीत है, जैसी अंवज भान॥
गाहा गूढा दूहड़ा, चौवोला कहि चंग।
रैण वितीती एक खिण, अधिक नेह वधि अंग॥[1]

जग्गा भाट—

भाट जाति के कवि जग्गा, भीनमाल के निवासी और जोधपुर के महाराजा जसवन्त सिंह के कृपापात्र थे। इनकी काव्य-प्रतिभा से प्रभावित होकर महाराजा द्वारा इन्हें भीनमाल में भूमि प्रदान की गई थी।[2] इससे अधिक इनके जीवनवृत्त पर प्रकाश डालने वाला विवरण उपलब्ध नहीं होता है। राव जग्गा के वंशजों द्वारा प्राप्त विवरणानुसार इनका रचनाकाल अठारहवीं शताब्दी का पूर्वार्द्ध ठहरता है। इन्होंने स्वतन्त्र काव्यकृति का प्रणयन तो नहीं किया परन्तु इनके द्वारा निर्मित स्फुट गीत, कवित्त आदि का राजस्थानी साहित्य-जगत् में अपना विशेष स्थान है।

मानव व्यक्तित्व की शुभ-अशुभ प्रवृत्तियों का मूल्यांकन उसके द्वारा सम्पादित अच्छे-बुरे कर्मों द्वारा होता है। सद्‌कर्म मनुष्य को शुभत्व की ओर ले जाते हैं जबकि दुष्कृत्य चारित्रिक दुर्बलता और मानवीय अधोः पतन के द्योतक कहे जाते हैं। साहित्य चूंकि समाज का दर्पण होता है अतः उसमें मानवोचित शुभ-अशुभ प्रवृत्तियों का किसी-न-किसी रूप में दिग्दर्शन अवश्यम्भावी है। राजस्थानी लोक संस्कृति के पोषक साहित्यकारों ने समसामयिक चरित्र-नायकों की प्रशस्तियां गाकर धनोपार्जन करना ही अपना ध्येय नहीं बनाया अपितु समय-समय पर अपनी सशक्त लेखनी के

---

१. प्रेमवल्ली रा दूहा, दूहा संख्या ५७, ६४, ७५, और १००.
२. श्री हनुवन्त सिंह देवड़ा, प्रोड्यूसर, राजस्थानी विभाग आकाशवाणी जोधपुर को जग्गा भाट के वंशज जस्सा द्वारा दिये गये विवरण के अनुसार

माध्यम से उन्होंने अनीति और अन्याय के विरुद्ध आवाज़ उठाकर अपनी स्पष्टवादिता का परिचय प्रस्तुत किया। कवि जग्गा और उनका स्फुट काव्य अद्यावधि साहित्य-जगत् में अज्ञात ही रहे हैं। प्रस्तुत पुस्तक में कवि जग्गा भाट की रचनाओं का प्रथम वार प्रकाशन हो रहा है।

महाराजा जसवन्तसिंह के धरमत युद्ध क्षेत्र से शत्रुओं को पीठ दिखाकर लौट आने की अशोभनीय घटना ने कवि-हृदय को उद्विग्न कर दिया। मृत्यु-भय से क्षत्रिय कतर्व्य विमुख हो जाये, प्राण-लोभ क्षत्रिय को कायर वना दे, इससे अधिक कंलकपूर्ण घटना भला और क्या हो सकती है? महारानी भी अपने पति के दुष्कृत्य के समाचार को सुनकर अत्यन्त कुपित हुई थी। जसवन्तसिंह के युद्ध पलायन की इसी घटना को लक्ष्य कर कवि जग्गा भाट ने व्यंग्यात्मक दोहों का सृजन किया। इन दोहों में कवि का स्वाभिमान और निर्भीकता स्तुत्य है। अपने आश्रयदाता का गुणगान अत्यन्त सहज है परन्तु आश्रयदाता के नीतिविरुद्ध कार्यों की निन्दा, निश्चय ही निर्भीकता का परिचायक कही जा सकती है। जग्गा भाट के हृदय में आर्थिक प्रलोभनों की तृष्णा नहीं थी। न ही उनको आश्रयदाता के कोपभाजन होने का भय था। सत्य, न्याय और नीति के समर्थक ऐसे निर्भीक कवियों नें ही वास्तव में राजस्थान के गौरव और यहां की मान-मर्यादा को वनाए रखा है। जग्गा भाट प्रणीत कतिपय दोहे यहां प्रस्तुत किए जा रहे हैं—

कुळ कालच लागै जसा, भड़ रण सूं भागंत।
रण मांहि रजपूत नैं, मरणौ ही राचंत॥
धव घर आया भागने, मौ उर वळगी आग।
जोधाणै आया जसा, देवण कुळ नै दाग॥
रण मां मरतौ राठवड़, होतो हरख विसेख।
भड़ आयौ किम भागने रणमाता रंगरेज॥[1]

अपने रक्त से, धरा को सुर्खी प्रदान करने वाला रंगरेज रण-क्षेत्र से भाग कर आ जाये तो सामाजिक जीवन अस्त-व्यस्त हो जाता है। पति के शौर्यमय बलिदान के सुखद पर्व पर अग्निस्नान की कामना संजोने

---

१ श्री हनुवन्त सिंह देवड़ा, प्रोड्यूसर, राजस्थानी विभाग, आकाशवाणी जोधपुर के पास उपलब्ध जग्गा भाट प्रणीत दूहों की प्रतिलिपि से.

वीरांगना के स्वप्न पति के युद्ध-पलायन से चूर-चूर हो जाते हैं। राजस्थान में मृत्यु-वरण को मंगल-त्यौहार की संज्ञा से अभिभूत किया जाता है। विजयश्री का वरण कर लाना ही राजस्थान में जीवन का प्रतीक माना जाता है। कर्तव्य की वलिवेदी पर हंसते-हंसते प्राणोत्सर्ग का ऐसा अनूठा उत्साह अन्यत्र दिखाई नहीं देता। पराजित व्यक्ति को समरांगण से लौटते देख मूक-पाषाण भी मलिन और लज्जित होने लगते हैं। कवि की निम्न-लिखित व्यंग्योक्ति निस्सन्देह कायर-से-कायर व्यक्ति के हृदय का मंथन करने में सक्षम है। देखिए —

आज जोधगढ़ ऊमणो, परथक गढ़ री पोळ ।
क्यूं नीं वाज्या कातरां, जाय मसांणां ढोल ।।

कम्मा —

जीलिया चारणवास के कवि कम्मा निर्भीक और स्वाभिमानी प्रवृत्ति के कवि थे। ये पंगु थे। कम्मा कवि मेवाड़ के महाराणा राजसिंह के समसामयिक थे।

यह इतिहास-सम्मत सत्य है कि मेवाड़ के शासकों ने व्यक्तिगत सुख-सुविधाओं की अपेक्षा लोक-स्वातन्त्र्य को सर्वोपरि मानकर स्वतन्त्रता के लिये सतत् संघर्ष किया। मेवाड़ी-शासकों की इसी विशेषता के कारण शूरवीरता के इतिहास में उनके नाम स्वर्णाक्षरों में अंकित हैं। मेवाड़ के अधिपतियों ने अपने स्वाभिमान की किसी भी मूल्य पर सौदेवाजी नहीं की, इसीलिए मेवाड़ के शासक महाराणा के पद से विभूषित होते आए हैं। अन्य प्रान्तीय शासक मुगल-शासकों की चापलूसी में अपने स्वत्व को गिरवी रखने के नये-नये साधनों की खोज में लिप्त थे वहीं मेवाड़ के शासक रूखी-सूखी रोटी खाकर तथा संकटों के बीहड़ रास्तों से परतन्त्रता के कांटों को हटाकर स्वातन्त्र्य-पथ के निर्माण में संलग्न थे। मेवाड़ के महाराणाओं द्वारा किए गये अद्भुत त्याग राजस्थान में आत्मसम्मान का अनूठा इतिहास बन गये हैं।

वार-बार होने वाले मुगल-अत्याचारों से तंग आकर एक वार मेवाड़ के महाराणा राजसिंह ने औरंगजेब के दरवार में जाकर उनसे मिलने का निश्चय किया। राजसिंह द्वारा मेवाड़ की परम्परा के विरुद्ध बादशाह से मिलने जाने के समाचार को सुनकर कम्मा कवि क्षुब्ध रह गये। मेवाड़ के महाराणा जिस राह से जा रहे थे, कवि उपयुक्त स्थान चुनकर एक टीले पर बैठ गये। उसी स्थान पर बैठे-बैठे कवि ने वीर रस के व्यंग्यात्मक छप्पयों का पाठ आरम्भ कर दिया। छप्पयों में निहित व्यंग्यात्मक सत्य

...ण-क्रम...

...सुनते ही राजसिंह का सुप्त आत्म-सम्मान जाग उठा। ...
...की आँखें खुल गई। कवि द्वारा कर्तव्य-पथ का भान कराने से ...
...याल से राजसिंह बहुत प्रसन्न हुए। कवि के पास जाकर उन्होंने ...
...ले लगा लिया। छप्पय कवि द्वारा महाराणा को सुनाया गया ...
...यंयोक्ति के रूप में एक छप्पय यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है —

अजै सूर मळहळै, अजै प्राजळै हुतासण।
अजै गंग खळहळै, अजै साबत इन्द्रासण।
अजै वरसि ब्रह्मण्ड, अजै फल फूल धरत्ती।
अजै नाथ गोरक्ख, अजै अह मात सकत्ती।
अजु हीलोहल ... अटळ, वेद धरम वांणारसी।
पतसाह हूंत चीतोड़पत, राण मिळै किम 'राजसी'॥

यत्र-तत्र बिखरी हुई गीत, कवित्त तथा दोहे रूपी ये ...
राजस्थानी साहित्य की अनूठी और अमूल्य धरोहर है। इन्होंने ...
को नवीन दिशा तथा दृष्टि प्रदान करने में जो भूमिका अभिनीत की,
निश्चय ही वह स्तुत्य एवं श्लाघ्य प्रयास कहा जा सकता है।

भभूतदान —

कवि भभूतदान गांव कैर जिला जालौर के निवासी थे। ये जोधपुर
के महाराजा अजीतसिंह के कृपापात्र थे। स्वाभिमानी प्रवृत्ति के धनी
भभूतदान आत्मप्रशस्ति से दूर और कटु सत्य के समर्थक थे। यही कारण
है कि अपने काव्य में आश्रयदाता की प्रशस्ति के स्थान पर उन्होंने ...
काव्य का सृजन किया। किंचित स्वार्थपूर्ति के लिए यदि कोई व्यक्ति ...
कुल मर्यादा को धूल धुसरित करता है तो ऐसे व्यक्ति की ...
निन्दा की जानी चाहिए भले ही वह कितना ही ...
वैभव वाला क्यों न हो।

बादशाह फरुखसियर ने महाराजा अजीतसिंह से ...
साथ युद्ध करने के लिए अपने सेनापति हुसैन अली को ...
१७७१ में अजीतसिंह ने सेनापति हुसैन अली से ...
कुंवर अभयसिंह को दिल्ली दरबार में भेजा। ...
कोपभाजन से बचने के लिए अजीतसिंह ने अपनी ...
बाई की डोली दिल्ली भिजवाई। महाराजा ...
तत्कालीन सत्ता की राजनीति के ...

के लिए आन, मान और मर्यादा का विस्मरण, लेखनी और तलवार के धनी चारण कवि भभूतदान को नहीं भाया। आत्मपतन की पराकाष्ठा देख उनका हृदय घृणा से भर उठा। महाराजा अजीतसिंह के राज्याश्रय में रहकर कवि मूक-पाषाण न बन सका। जिस व्यक्ति को भभूतदान आजतक महान् समझते आये थे उसने बीच चौराहे पर कवि की आशाओं को निर्वसन कर दिया। निर्भीक तथा स्पष्टवादी कवि हृदय राजपूती आदर्शो का पतन सहन न कर पाया। उन्होंने कलम उठाकर अपने आश्रयदाता के दुष्कृत्य की भर्त्सना में उपालंभ काव्य का सृजन किया। अजीतसिंह के समक्ष खड़े होकर कवि ने निर्भीकता से उन दोहों को सुनाया। कहा जाता है कि भभूतदान में वैराग्य उत्पन्न हो गया और वे महाराजा के आश्रय को छोड़कर सूंघा की पहाड़ियों में तपस्वी के रूप में रहने लगे। कवि की ये स्फुट रचनाएं अद्यावधि अप्रकाशित ही रही है साथ ही कवि भभूतदान का परिचय भी प्रथम वार प्रकाशित हो रहा है। आत्म प्रशस्ति से दूर इस संत-कवि की रचनाएं भले ही अबतक प्रकाश में न आ पाई हों परन्तु उनकी वांणियां आज भी हरजस मंडलियों द्वारा गाई जाती है। कवि-निर्मित वाणी की कुछ पंक्तियां द्रष्टव्य है—

भभूता अवे करो अरदास भगवांन ने।
अजमल भेजियो डोलो॥
रजवट नेण काच बीड़गा।
मचगो मरधर माय रोळो॥
गायड़ मलां गमायो मांन
यां रै छंवर मत डोलो......
दुरगँ विरवो भेलियो आलम
वो रजपूत पड़ियो मोळो
भभूता अवे करो अरदास भगवांन ने।[1]

राजपूत का आन, मान और सम्मान ही उसका स्वाभिमान है। तुच्छ स्वार्थो की पूर्ति के लिए यदि वह अपनी मान, मर्यादा को बेच देता है तो फिर ऐसे व्यक्ति को क्षत्रिय कैसे कहा जा सकता है? राजपूत एक चिनगारी का नाम है, जो शत्रुओं के समक्ष दावानल बन

---

१. श्री हनुवन्तसिंह देवड़ा, प्रोड्यूसर राजस्थानी विभाग, आकाशवाणी जोधपुर के निजी संग्रह में उपलब्ध भभूतदान रचित वाणी की प्रतिलिपि से.

जाती है। राजकुमारी ईन्द्रकुंवर को मुगल हरम में भेजने वाले राजपूत पिता के समक्ष भभूतदान द्वारा कहे गये कटाक्षपूर्ण दोहों में से कुछ यहां उद्धृत किए जा रहे हैं —

रोवै रजपूती, डवडव नयणा देखलै ।
मन री मजबूती, अख विसरीयो तू अजा ।।
काळच री कुळ में कमंद, राची किम या रीत ।
दिल्ली डोळो भेजने, अवखी करी अजीत ।।
फरकसर फेराह, डोळो तुरक देखने ।
डरीयां तव डेराह, उखड़ता रहसी अजा ।।
मरुधर री मूंडोह. काळो किम किधो कुंवर ।
असी घाव उडोह, अवखो मन लागै अजा ।।
रण रा रंग राताह, खाता शाहा रै शरण ।
नित जोड्यो नाताह, अवसळ नह रेसो अजा ।।
इन्दर कुंवरी नें, हाय भेजी तुरक संग ।
मेणी मरुधर नें, इतिहासां दीधी अजा ।।[1]

द्वारिकादास दधवाड़िया —

ये दधवाड़िया गोत्र के चारण और भक्तिरस के सर्वश्रेष्ठ [illegible] माधोदास दधवाड़िया के पौत्र थे। ये मारवाड़ राज्य के [illegible] ग्राम के निवासी थे। असाधारण काव्य प्रतिभा के कारण शीघ्र ही ये जोधपुर के महाराजा अजीतसिंह के कृपापात्र बन गये। महाराजा अजीतसिंह के [illegible] काल में ही द्वारिकादास ने अजीत सिंह री दवावैत नामक कृति [illegible] कर अपनी काव्य प्रतिभा का परिचय प्रस्तुत किया। इस ग्रन्थ में जोधपुर नरेश के शौर्य-पराक्रम और वैभव का आकर्षक भाषा-शैली में वर्णन किया गया है। ग्रन्थ के आरम्भ, मध्य और अन्त में १२ दोहे, ३ कवित्त तथा [illegible] गाथाएं हैं। शेष भाग गद्यमय है। ग्रन्थ की समाप्ति करते हुए [illegible] का विवरण देते हुए कवि ने लिखा है —

दवावैत द्वादस दुहा तीन कवित्त [illegible] ।
सतरे संवत वहोतरै, कवि द्वारै कहियाह ।।

---

१. श्री हुनुवन्तसिंह देवड़ा, प्रोड्यूसर, राजस्थानी [illegible] जोधपुर के निजी संग्रह में उपलब्ध भभूतदान रचित दोहों की प्रतिलिपि से.

अजीतसिंह री दवावैत कृति के काव्यत्व से प्रभावित होकर महाराजा अजीतसिंह ने कवि को जैतारण परगने का वासनी ग्राम पुरस्कार में दिया था। सरल, आकर्षक भाषा शैली और प्रसाद गुण के प्राधान्य से काव्य में रसमग्न कर देने की क्षमता का यथोचित विकास हुआ है। उदाहरण के लिए कुछ काव्य पंक्तियां प्रस्तुत की जा रही हैं जिनमें आश्रयदाता की कीर्ति का सुन्दर चित्रण दिखाई देता है —

नरां पियारी पियारी सुरां आसुरां पियारी नागां,
प्यारी रिखां जखां गणां गंध्रवां प्रवीत ।
धूतारी कुंवारी नारी सदारी ठगारी धरा,
तिका तांवापत्रां पातां समापी अजीत ।।
दाढ धारी वाराह भ्रुगुट्ट धारी सेख देवा,
दूही राजा प्रथू कामधेनू ज्यूं दुभाळ ।
मानधाता ऊपड़ी न हाथां वैण धुधमार,
मेदनी सुपातां तिका ब्रवी दूजै माळ ।।

महाराजा अजीतसिंह री दवावैत ग्रन्थ के अतिरिक्त कवि के स्फुट गीत, कवित्त आदि उपलब्ध होते हैं जिनमें महाराजा अजीतसिंह की चारित्रिक विशेषताओं का गुणगान किया गया है। गीतों की भाषा अत्यन्त सरल और बोलचाल की है। उदाहरण देखिए —

सोह सांभली धड़ सुघड़ सहेली, वांछंती वर समर वहेली ।
चौरंग सील्है फाड़ कुच चौळी, वाजंद्रे 'अभमाळ' विरोली ।।
सार सिंगार छतीसूं सज्जे, ओप टोप पगूं घट आंव्रजे ।
विचित्र घड़ा इण वैर विलूंधै, रिण कण-कण कीधी रस लूंधै ।।

महाराजा अजीतसिंह द्वारा लम्बे समय तक घर जाने के लिये अवकाश न दिये जाने पर द्वारिकादास ने अपने आश्रयदाता के पास भावभीनी विनय-पत्रिका लिखकर भेजी। इसमें प्राकृतिक सुषमा का अत्यन्त मादक वर्णन किया गया है। उदाहरण देखिए —

गेरा बोलिया मोर दादुर सरां गहकिया, गुणियण राजा मलार गायो ।
अभनमा मालदे रह सांभल अरज, अजा दे सीख बरसात आयो ।।
मंड नाचै सुजळ पूरिया सरोवर, तरा तिस गई करतार तूठो ।
सेवगां विदा कर जसा रा संसभड़, बीज सिखा रा खिमै इन्द्र वूठो ।।

पिक करै कुहुक रीछी चढी पहाड़ां, वाज तो रह्यी पिछम तणां वाव।
पंथ सीतळ हुआ लुई लीली पुहप्पी, रजा दीजै अबै मारवा राव ॥
सांसण बगस नवकोट रा सैधणी, जस करां रावळो घेरे जावां।
हिन्दवा छात वरसात आयो हमै, पात अरजी करै सीख पावां ॥

डॉ० जिज्ञासु आदि साहित्यकारों ने उपरोक्त गीत का रचयिता किसी सहजो नामक कवि को बतलाया है, परन्तु यह गीत सहजो-रचित नहीं, द्वारिकादास दधवाड़िया प्रणीत ही है।

सबळदान —

साहित्य जगत् में अद्यावधि अज्ञात रहे सबळदान, सांदू शाखा के चारण और नागौर जिले में स्थित सीहू ग्राम के निवासी थे। इनके जीवनवृत्त पर प्रकाश डालने वाला अन्य विवरण उपलब्ध नहीं हुआ है। सबळदान डिंगल के अच्छे कवियों में से थे। नागौर के राव इन्द्रसिंह के कृपापात्र कवियों में इनका प्रमुख स्थान था। स्फुट गीत रचना के अतिरिक्त इनके द्वारा निर्मित राव इन्द्रसिंघ नागौर री झमाल कृति उपलब्ध हुई है। इस झमाल में कवि ने नागौर के राव इन्द्रसिंह तथा अजीतसिंह के मध्य हुए युद्ध का वर्णन किया है।

जसवन्तसिंह के मरते ही मारवाड़ खालसा कर लिया गया (दिसम्बर, १६७९)[1] फिर बादशाह ने खिदमतगुजार खां को जोधपुर का किलेदार, ताहिरखां को फौजदार, शेख अनवर को अमीन और अब्दुल रहीम को कोतवाल नियुक्त किया। बादमें अजीतसिंह को दिल्ली में ही रखकर उसने जोधपुर का शासन अमरसिंह के पुत्र इन्द्रसिंह को दे दिया। ऐसा राठौड़ो में परस्पर-वैमनस्य उत्पन्न करने के लिए किया गया था।[2] जालोर में इन्द्रसिंह तथा अजीतसिंह की सेनाओं में युद्ध हुआ। इस युद्ध में इन्द्रसिंह का पुत्र मोहकमसिंह भी था जिसे युद्ध-क्षेत्र से पलायन करना पड़ा था।

युद्ध वर्णन के अतिरिक्त कवि ने नागौर के राव इन्द्रसिंह के पूर्वजों के शौर्यमय अतीत का भी सुन्दर वर्णन किया है। राव इन्द्रसिंह नागौर री झमाल राजस्थानी काव्य शृंखला की अद्यावधि अज्ञात और

---

१ (क) मआसिर-ए-आलमगीर, पृ० १७२.
(ख) मारवाड़ एवं मुगल्स-डॉ० भार्गव, पृ० ११६.
२ वही, पृ० १२१.

महत्वपूर्ण रचना है। कृति का आरम्भ कवि ने गणेश तथा सरस्वती वन्दना से किया है —

सुरसत गणपत दे सुमत करता सिव किरणाळ ।
सुकव इता आराध स्वर, रूपग रचूं भमाळ ॥

गणेश वन्दना के पश्चात् कवि सवळदान ने राव अमरसिंह तथा गर्वसिंह इत्यादि का सुन्दर चित्रण प्रस्तुत किया है। उदाहरण देखिए —

अमर सलावत मारियौ, अणियाली उर पोय ।
साहजहां अंवखास विच, जा कहियौ रंग जोय ॥
जा कहियौ रंग जोय, अमर जद ईखिया ।
उर हूंता कतार, अपपत्त विलिवया ॥
सनमुख विढ़ण विचार, तेग नह साहिया ।
उरजुण पूठै आय, गौड़ खग वाहिया ॥[१]

दिखण धरा मागौ दुगम, लड़ नागौ वल्लाल ।
असी हजारां ऊपरै, अहीया जैत अंवाल ॥
अहीया जैत अंवाल, लंकाल गरज्जिया ।
दिखणी दळ गेजूह, साह वळ भंजिया ॥
गरव सहजादां अहुं, तणा रण गालिया ।
रासै सूजै रहचि, बिरद उजवालिया ॥[२]

कवि ने मोहकमसिंह के सम्बन्ध में लिखा है —

मोहकम थाणैं मेड़तै, कदै भेद उपाय ।
दोढ़ाणै जालोर दिस, मिल उरजण पिण मांय ॥
मिल उरजण पिण मांय, मोहक्कम आंणिया ।
अनड़ा पैठा अजिन, चूक पहचाणिया ॥

---

१. श्री सौभाग्यसिंह शेखावत के पास उपलब्ध कृति राव इन्द्रसिंव नागौर री झमाल की प्रतिलिपि, छन्द संख्या १.
२. वही, छन्द संख्या – २.

कर जालोर मुकाम, दिसां चहूं पड़ दहळ।
डांणां चूका सींह, जहीं घीरियो दूझळ ॥[1]

सम्पूर्ण काव्य में भाषा पर कवि का अधिकार दिखायी देता है। भावों के अनुरूप शब्दों का चयन कवि की प्रतिभा का परिचायक है। वीररस – प्रधान इस झमाल में सवळदान ने युद्ध का रूपक विवाह में बांधते हुए सेना रूपी नायिका का अत्यन्त प्रभावशाली चित्रण किया है —

घूघर पाखर घमकती, सिंधुर काजळ सार।
विचित्र घड़ा आई वरण, धज लज घूंघट धार॥
धजलज घूंघट धार, क भाला नथ झळक।
जड़ कांचू घड़ जरद, झिलक टीका झळक॥
घड़ घूमंती घाय, मीर अंग मोड़ती।
हाडा लाडा हूंत, छेहड़ा जोड़ती ॥[2]

वयण सगाई अलंकार के साथ-साथ लोकोक्तियों तथा मुहावरों के सटीक प्रयोग से वर्णन अत्यन्त आकर्षक वन गये हैं। कतिपय उदाहरण देखिए —

(१) लिखे विधाता लेख क रेखा सिरतणी।
(२) ऊमर आयां आपरी, वार गया वोळाया॥
(३) जावै सकल जिहांन, नाम थिर राम रो॥
(४) लूंण हरामी होय सो खत्ता खावसी॥
(५) अमर हुवा कळ मांहि, जिकारो जस अजो॥
(६) वातां तणा वखाण रहेसी रावतां।
जावै नह ज्यां नाम घणा जुग जावतां ॥[3]

समरथदान —

ये अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध के चारण कवि थे। जालोर की भीनमाल तहसील में तत्समय स्थित अखेगढ़, जो अब वीरानप्रायः हो गया

---

१. राव इन्द्रसिंघ नागोर री झमाल, छन्द संख्या ६.
२. वही छन्द संख्या ५६.
३. श्री सौभाग्यसिंह शेखावत के पास उपलब्ध कृति राव इन्द्रसिंघ नागोर री झमाल की प्रतिलिपि से.

है, के निवासी थे।[1] इनकी फुटकर रचनाएं मिलती है।

महाराजा जसवन्तसिंह के देहावसान के पश्चात् उनकी रानियों से दो पुत्र अजीतसिंह और दळथंभण उत्पन्न हुए। दळथंभण का थोड़े समय पश्चात् देहावसान हो गया। बादशाह औरंगजेब ने रानियों और राजकुमार को दिल्ली बुलवाया और उधर मारवाड़ पर अधिकार करने के लिये अपनी सेना के प्रस्थान का आदेश दिया। राजकुमार अजीतसिंह को प्राप्त करने के उद्देश्य से औरंगजेब ने राठौड़ सरदारों को बहुत प्रलोभन दिये किन्तु स्वामिभक्त राठौड़ों ने बादशाह के प्रस्ताव को ठुकरा कर अजीतसिंह को गुप्तरूप से मारवाड़ भिजवा दिया।[2] मुगल सेना ने राठौड़ों को घेर लिया। क्षत्रिय-योद्धा यद्यपि संख्या में अत्यल्प थे परन्तु शत्रुओं की चुनौती को उन्होंने स्वीकार कर उनसे मृत्युपर्यन्त युद्ध किया। वीर दुर्गादास लड़ते-भिड़ते सुरक्षित मारवाड़ आ गये। राजकुमार अजीतसिंह को मुगल-बादशाह के चंगुल से छुड़ाकर लाने, उनका गुप्त रूप से पालन-पोषण करवाने तथा क्षत्रिय सेना का संगठन कर अजीतसिंह को शासक बनवाने में वीर दुर्गादास ने अविस्मरणीय भूमिका निभायी थी। जिस क्षत्रिय ने अजीतसिंह की रक्षा के लिए अपनी सुख-सुविधाओं को तिलांजली देदी, उसी दुर्गादास को अजीतसिंह द्वारा महाराजा बन जाने पर राज्य से निष्कासित करने की घटना मारवाड़ के इतिहास की अति अशोभनीय घटना ही कही जा सकती है। शौर्य और स्वाभिमान का ऐसा तिरस्कार, सत्ता लोलुपता का परिचायक ही माना जा सकता है। दुर्गादास शासन-सत्ता प्राप्त करना चाहते तो अजीतसिंह की प्राणरक्षा के लिए मुगलों से संघर्ष नहीं करते। सिंहासन प्राप्ति की दुर्गादास को भूख होती तो वे अजीतसिंह के लिए सेना का संगठन कदापि नहीं करते। पद और यश प्राप्ति के पश्चात् उठाए गये ऐसे अदूरदर्शी कदम वास्तव में क्षत्रिय-शासकों द्वारा की गई ऐतिहासिक भूलें हैं जिनका दुष्परिणाम उन्हें और आने वाली पीढ़ियों को भोगना पड़ा।

कवि समरथदान अपने युग के सशक्त कवि थे। उनके काव्य में युग चेतना की स्पष्ट झलक देखी जा सकती है। आलमगीर का देहांत हो जाने पर अजीतसिंह ने मारवाड़ पर अधिकार कर लिया। अजीतसिंह के मारवाड़ के सिंहासन पर आसीन होने पर कवि समरथदान ने जो उद्गार व्यक्त किए वे इस प्रकार हैं—

---

१. श्री हनुवन्तसिंह देवड़ा प्रोड्यूसर राजस्थानी विभाग आकाशवाणी जोधपुर प्राप्त विवरण के अनुसार.

२. कविया करणीदान और सूरजप्रकाश–डॉ० राजकृष्ण दूगड़, पृ० ५८.

भम भम दुरगै भाखरां नृप कीधो समरत्थ ।
अबै झालो अजीतसी रजवट हन्दो रत्थ ।
तन मन सूं त्यागी, साम धरम संवेरतो ।
बावो बैरागी ओ तप मोटो आसवत ।।
धन धरती आ मरधरा, धन पीळी परभात ।
जिण पुळ दुरगो जलमियो, धन वो मांझल रात ।।
धन रजपूती आसवत, धन थारी तपनाह ।
निछरावळ कर नांकिया, सेजां रा सपनाह ।।

राठौड़ दुर्गादास के प्रति महाराजा अजीतसिंह ने अपेक्षित कृतज्ञता का निर्वाह नहीं किया। जिस दुर्गादास ने प्राणों से खेलकर अजीतसिंह को जीवन दान दिया उसी दुर्गा बाबा को अजीतसिंह ने निर्वासन का आदेश देकर सिद्ध कर दिया कि राजनीति में स्नेह, प्रेम और कृतज्ञता की नहीं छल प्रपंचों की प्रधानता होती है। अजीतसिंह द्वारा उपकार का ऐसा घिनौना प्रतिकार देखकर मृत्यु शैय्या पर पड़े कवि समरथदान का हृदय कराह उठा। स्वामिभक्त दुर्गादास के अकारण निर्वासन को सम्बोधित कर स्वाभिमानी कवि ने अजीतसिंह को निम्नलिखित दोहे लिखकर भेजे —

रखवाळी कर राज री पाळी अणहद प्रीत ।
दुरगो देसां काढ़ नै अवंखी करी अजीत ।।
समो तो पलटण सील व्है राज बदल जुग रीत ।
देसी महणी देसड़ा, आगमतनै अजीत ।।

करणीदान कविया —

वीरविनोद के आधार पर जेम्स टॉड के अतिरिक्त सभी विद्वानों ने करणीदान का जन्म स्थान मेवाड़ स्थित ग्राम सूलवाड़ा बतलाया है। कर्नल जेम्स टॉड के मतानुसार ये कन्नोज के निवासी थे।[1] अन्वेषणों के आधार पर उपर्युक्त दोनों ही स्थल भ्रान्तिदायक विदित होते हैं। चारणों के बही भाट,[2] कवि के वंशजों द्वारा प्राप्त विवरणानुसार तथा राजस्थानी साहित्य

---

१. कर्नल जेम्स टॉड – राजस्थान – इतिहास (अनुवाद – श्री बलदेव प्रसाद उपाध्याय) भाग – २, पृ० १७०.
२. चारणों की बही रखने वाले भाट से श्री शक्तिदान कविया द्वारा प्राप्त सूचना के अनुसार.

के जिज्ञासुओं की खोज के अनुसार[1] कविया करणीदान का जन्म-स्थान आमेर रियासत (वर्तमान जयपुर) का टोंगरी ग्राम माना जाना चाहिए। यह टोंगरी ग्राम करणीदान के पूर्वज डूंगरसी को मिर्जा राजा मानसिंह द्वारा प्रदान किया गया था।[2] करणीदान के पिता का नाम विजयराम और माता का नाम दुलिबाबाई था। प्रागदान कवि के पितामह थे। सूरजप्रकास में अपने पिता का नामोल्लेख करते हुए कवि ने लिखा है —

सूरज प्रकास कविया करणीदान विजयरामोतरो कहियो।[3]

करणीदान के पिता भी अपने समय के श्रेष्ठ कवि और गणमान्य व्यक्ति थे। राजस्थान के तत्कालीन शासकों तथा जागीरदारों में उनकी अच्छी प्रतिष्ठा थी।

कविया करणीदान संस्कृत, प्राकृत, डिंगल, पिंगल, इतिहास तथा ज्योतिष आदि के प्रकाण्ड पंडित थे। जनजीवन में इनके सम्बन्ध में अनेक किंवदन्तियां प्रचलित हैं जिनके द्वारा कवि की लोकप्रियता का अनुमान लगाया जा सकता है। करणीदान, जोधपुर के महाराजा अभय सिंह के राज्याश्रित कवि तथा वीरभाण रतनू और बखता खिड़िया के समकालीन थे। विविध भाषाओं में निष्णातता का दिग्दर्शन कवि की इन काव्य-पंक्तियों द्वारा होता है —

संसक्रत है सुरभाख, आदि पहिला उच्चारूं।
मुजि भाषा दूसरी, सेस दूजै विसतारूं।
नै अपभ्रंस तीसरै, मगध देसी चवथम्मै।
सरस सूरसेनीस, पढ़ै थानक पंचम्मै।
करि थांन छठै प्राक्रत कहूं, विधि आ घणी विसत्तरूं।
सर रचि प्रताप 'अभमाल सह', इम खटभाखा उच्चरूं।।[4]

कविया करणीदान का अधिकांश जीवन जोधपुर में ही व्यतीत हुआ था। जोधपुर में रहकर अपनी प्रतिभा, शौर्य एवं राजनीतिक सूझबूझ द्वारा

१. (अ) कविया करणीदान और सूरज प्रकास – डॉ. राजकृष्ण दूगड़, पृ. १७.
(आ) चारण साहित्य का इतिहास – डॉ० मोहनलाल जिज्ञासु, पृ० २३५.
२. कविया करणीदान और सूरज प्रकास – डॉ० राजकृष्ण दूगड़, पृ० १७.
३. सूरज प्रकास, भाग – १, पृ० १.
४. सूरज प्रकास, भाग – ३, पृ० ११६.

कवि ने प्रसिद्धि प्राप्त की थी। कर्नल जेम्स टॉड ने कवि की प्रतिभा के सम्बन्ध में अपनी प्रसिद्ध पुस्तक राजस्थान का इतिहास में लिखा है —

'करणीदान कविया जिस प्रकार से पहली श्रेणी के कवि थे, उसी प्रकार चतुर राजनीतिज्ञ, योद्धा और प्रकाण्ड पंडित थे। प्रत्येक स्थिति में वह अपनी चतुरता का चूड़ान्त प्रमाण दिखाया करते थे। मारवाड़ के आत्मविग्रह के समय प्रत्येक राजनीतिक घटना में उन्होंने प्रशंसनीय भूमिका अदा की है।[1]'

यद्यपि कर्नल टॉड ने अनेक स्थानों पर कविया करणीदान की प्रतिभा को सराहा है, परन्तु उनके कुछ विवरणों में भारी भूलें दिखाई देती हैं। उदाहरण के लिये उन्होंने करणीदान कविया और बारहठ कवि करणीदान से सम्बन्धित कुछ घटनाओं को भ्रान्तिवश मिला दिया है। महाराजा अजीतसिंह की पुत्री इन्द्रकुंवर को फर्रुखसियर के साथ परिणय हेतु दिल्ली ले जाने वाले लोगों के साथ कविया करणीदान नही बल्कि करणीदान बारहठ थे।

कविया करणीदान का अन्तिम समय किशनगढ़ में बीता। किशनगढ़ दरबार करणीदान के काव्य-चातुर्य एवं राजनीतिक दूरदर्शिता से बहुत प्रभावित थे। उन्होंने कवि को अनेक बार सम्मानित किया। किशनगढ़ नरेश की मृत्यु से[2] खिन्न कवि ने निम्नलिखित मार्मिक मरसिये लिखकर अपनी हृदय-वेदना को प्रकट किया था —

समहर भर थटे बहादर असगर, कटे भेर हर भर कुरक।
जिकर खूंन आवटे त्रिया जिम, सर चौसर ऊछटै सुरख॥
कमधज धंक धरे अह कारज, कारज प्रसणाँ पाय कन।
भारज लियां तिकां उर भभके, बारज बार सिन्दूर बन॥
ओयण अडग न्रपत राजड़उत, जोयण दोयण खग जलण।
ललना लियाँ झरहरे लोयण, कोयण धार अंगार कण॥
छूटी धार आंसवै अणछब, जूटी मांणक दवग जळा।
लाल वदन सांणी तूटी लड़, कर खूटी दाड़मी कळा॥
झड़ी बूंद लोयण इम झबकै, पड़ी काच आंगणं परी।
सुरंग जड़ाव जड़ी हद सोभा, धर जांणे चूंदड़ी धरी॥[3]

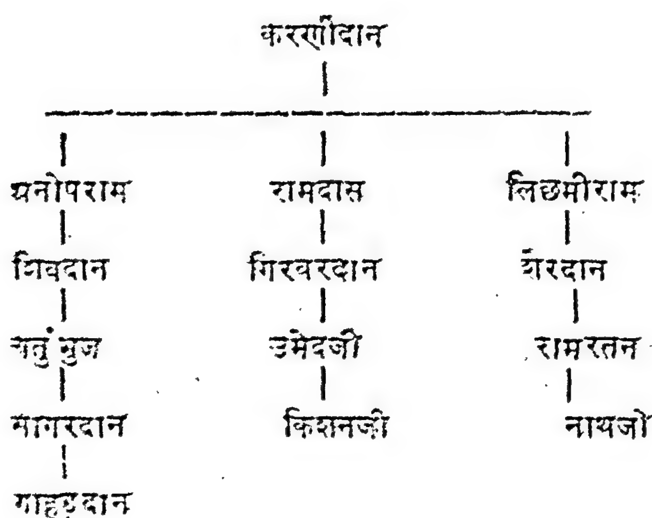
कुछ विद्वानों का मत है कि किशनगढ़ नरेश के आग्रह पर जोधपुर

---

१. टॉड – राजस्थान इतिहास भाग – २, अनुवाद – बलदेव प्रसाद मिश्र पृ० १७०.
२. वीर विनोद – (भाग – २) कविराजा श्यामलदास पृ० ५३८.
३ डॉ० राजकृष्ण दूगड़ के पास उपलब्ध हस्तलिखित प्रति से.

मे महाराजा बखतसिंह ने आलावास ग्राम कविया करणीदान को वापस लौटा दिया था[1] परन्तु ऐतिहासिक अन्वेषण से पता चलता है कि अपने जीवनकाल में करणीदान आलावास लौटकर नहीं आये। किशनगढ़ में ही कवि का परलोकवास हुआ। भग्नावशेष के रूप में कविया करणीदान की छतरी आज भी विद्यमान है परन्तु उस पर स्थित शिलालेख नष्टप्रायः हो चुका है। अतः मृत्युतिथि के सम्बन्ध में कोई प्रमाणपुष्ट जानकारी उपलब्ध नहीं होती।

कविया करणीदान के वंशजों के अनुसार कविराज के दो पत्नियां थी – बड़ी टहले वाली और छोटी भुड़िया गांव की। बड़ी पत्नी से दो पुत्र अनोपराम तथा रामदास हुए और छोटी पत्नी से एक पुत्र लिछमीराम का जन्म हुआ था। कविया करणीदान की पांच पीढी तक का प्रामाणिक शजरा राजस्थानी भाषा और साहित्य के मूर्धन्य विद्वान श्री सौभाग्यसिंह शेखावत के पास संकलित है जिसे यहां प्रस्तुत किया जा रहा है —



आलावास गांव अब भी कवि के वंशजों की जागीर है तथा पाटवी गाहड़दानजी की तीसरी पीढ़ी में नारायणसिंह और उनके पुत्र लालसिंह तथा नाथजी की चौथी पीढ़ी में जयकरण और उनके पुत्र वर्तमान हैं।

---

१. मारवाड़ का इतिहास – पंडित विश्वेश्वर नाथ रेऊ, भाग-१, पृ० ३६२ के विवरणानुसार पोकरण ठाकुर देवीसिंह जी के अनुनय पर आलावास गांव कवि को लौटाया गया था।

कविया करणीदान ने वि. सं. १७८७ में सूरजप्रकास नामक ग्रन्थ का प्रणयन किया । इस ऐतिहासिक ग्रन्थ में जोधपुर के महाराजा अभयसिंह और गुजरात के सूबेदार सर बुलन्दखाँ के मध्य अहमदाबाद में लड़े गये भीषण युद्ध का वर्णन है । अहमदाबाद युद्ध के नाम से इतिहास प्रसिद्ध इस युद्ध में कवि स्वयं उपस्थित था अतः युद्ध-घटनाओं की प्रामाणिकता बढ़ गई है। ग्रन्थ के आरम्भ में महाराजा अभयसिंह के पूर्वजों का संक्षिप्त विवरण प्रस्तुत किया गया है । सूर्यवंश के विवरण के साथ ग्रन्थ में रामायण की कथा भी दी गई है । रामायण कथा के पश्चात् मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान श्रीराम के पुत्र कुश से लेकर राजा पुंज की वंशावली तथा राजा जयचन्द से अजीतसिंह तक, सभी राजाओं द्वारा प्रदर्शित शौर्यमय घटनाओं का ऐतिहासिक विवरण प्रस्तुत किया गया है।

सन् १७२४ से ही गुजरात पर मराठों का आक्रमण होने लगा था । उस समय निज़ाम गुजरात का सूबेदार था । मोहम्मदशाह ने निज़ाम के स्थान पर सर बुलन्दखां को नियुक्त किया और महाराजा अभयसिंह को उप सूबेदार । जोधपुर प्रस्थान करने से पहले अभयसिंह यह स्वीकृति ले चुके थे कि वित्तीय और शस्त्रों की सहायता प्राप्त होने पर ही वे गुजरात की ओर प्रस्थान करेंगे । सन् १७२५ के प्रारम्भ में वे जोधपुर पहुंचे । वहां की आन्तरिक परिस्थितियों ने, विशेषकर आनन्दसिंह और रायसिंह के द्वारा मराठी सहायता प्राप्त करके जोधपुर पर आक्रमण करने के खतरे ने, उन्हें जोधपुर में रहने पर विवश कर दिया । बार-बार शाही आदेश आने पर सन् १७२६ में उन्होंने प्रस्थान किया। वे जालोर तक पहुंचे ही थे कि सूचना मिली कि आनन्दसिंह मराठों को लेकर जोधपुर की ओर बढ़ रहा है । वे पुनः जोधपुर चले आए । बाद में मोहम्मदशाह ने उन्हें गुजरात के उत्तरदायित्व से मुक्त कर दिया ।[१]

सर बुलन्दखां को राठौड़ी सहायता न मिलने पर वह अकेला मरहठों के आक्रमण को रोकने में असफल रहा । उसने सन् १७२६ में मराठों से चौथ और सरदेशमुखी देने का समझौता कर लिया । जब यह समझौता सन् १७३० में भी दोहराया गया तो शाही दरबार में यह प्रतिक्रिया हुई कि वह गुजरात में अपनी स्वतन्त्र सत्ता स्थापित करना चाहता है। अतः उसे पदच्युत कर दिया गया । उस समय तक महाराजा अभयसिंह अपने आन्तरिक मामलों पर नियन्त्रण स्थापित कर चुके थे।

---

१. मारवाड़ और मरहठा – डॉ० घासीराम परिहार, पृ० ३५

अतः उन्हें गुजरात का सूबेदार बनाया गया । महाराजा स्वयं भी यही चाहते थे । अतः इस अवसर का लाभ उठाने के लिए उन्होंने मामूली शाही सहायता लेकर जोधपुर की ओर प्रस्थान कर दिया ।[1]

महाराजा अभयसिंह जयपुर होते हुए जोधपुर पहुंचे । विशाल शक्तिशाली सैन्यदल तैयार कर उन्होंने बखतसिंह के साथ गुजरात की ओर प्रस्थान किया ।[2] अहमदाबाद के मार्ग में उन्होंने रोहेड़ा, पोसालिया के जागीरदारों तथा सिरोही के राव को परास्त किया ।[3] सिरोही के राव ने अधीनता स्वीकार करली और अपने भाई की कन्या का, महाराजा के साथ विवाह कर दिया । पालनपुर का शासक करीमदादखां भी महाराजा से आकर मिल गया ।[4] महाराजा ने पत्र लिखकर सरबुलन्दखां से कहा कि वह बादशाह की आधीनता स्वीकार करले परन्तु अभयसिंह के प्रस्ताव को ठुकराकर वह युद्ध करने के लिए तैयार हो गया । अपने सामन्तों तथा अन्य सेनानीयों से विचार विमर्श कर अभयसिंह ने सरबुलन्दखां को पराजित करने अथवा अपने प्राणों को त्याग देने का निश्चय किया । अभयसिंह की ओर से लड़ने वाली सेना में राजाधिराज बखतसिंह और उनकी सेना, मारवाड़ के सामन्तों की सेनाएं, सिरोही के राव की टुकड़ी, पालनपुर के अधिकारी करीमदादखां की सेना तथा जवांमर्द खां सफदर खां बाबी, कसबाती मुसलमान, स्वर्गीय मोमिन खां का पुत्र मोहम्मद बाकिर और सरदार मोहम्मद खां गौरानी की सेना सम्मिलित थी।

सरबुलन्द खां की सेना १२ हजार योद्धाओं से आबद्ध थी जिनमें यूरोपियन सैनिक भी थे—

जुदा मिसल जगहूत असल विल्लायत वाला ।
दळाड़ा बार हजार चूंच चढ़िया कळि चाळा ।।[5]

सरबुलन्द खां की सेना में दो हजार तोपें, चार हजार सुतरनालें,

---

१. भंडारी अमरसिंह के नाम लिखे, वि. सं. १७८७ कार्तिक शुक्ला १२ के पत्र के अनुसार । मारवाड़ का इतिहास- श्री विश्वेश्वरनाथ रेऊ, भाग-१, पृ० ३३६.
२. सिटर मुताखरीन, भाग-२ पृ०२०५.
३. मारवाड़ का इतिहास-भाग-१, पंडित विश्वेश्वर नाथ रेऊ, पृ० ३३७
४. कविया करणीदान और सूरजप्रकाश- डॉ० राजकृष्ण दूगड़, पृ० ६३
५. सूरजप्रकाश, भाग-३, पृ० २७

तीन हजार रहकळे, बारह हजार बन्दूकधारी तथा तोपें चलाने वाले फिरंगी थे ।[1]

महाराजा अभयसिंह ने उपरास नदी पर डेरा डालकर, गोलाबारी शुरु करदी । पहले तीन दिन तक भयंकर गोलाबारी हुई—

सातम निसा सरब्ब, अने निसदिन असटम्मी ।
अमासमा घण उड़े, ज्वाळ गोळा नभ जम्भी ।
नमि तिथ कड़क निहाव, धोम सौगुणां अंधारा ।
ओळा जिम मंडि उरड़, असण गोळां अणपारा ।।[2]

चौथे दिन घमासान युद्ध हुआ । अन्ततः सरबुलन्दखां की सेना के पांव उखड़ने लगे । करणीदान के मतानुसार सरबुलन्दखां की सेना में निम्नलिखित क्षति हुई थी—

च्यार सहस च्यार से, असी तेरा असुरायण ।
जिण मझि विवरौ जुदौ, मुगळ पड़ि रूप मयंदा ।
सौ पालखीनसीन आठ असवार गयदा ।
अै पड़ै साह जांणै इसा, आवै आम दीवांण में ।
ताजीम तणां भड़ तीन सै, घणा अवर घमसांण में ।
भड़ पयदळ गच भिड़ज्ज, पड़ै विलंदरा अपारां ।
नको पार घायलां, हुआ लोह मैं सुमारां ।
उला भड़ एक सौ वीस, पड़िया तिणवारां ।
पमंग पड़ै पंचसै, धमक सेला खग धारां ।
सात सै हुआ घायल सुभट, लड़ै अभैजस व्रदलियौ ।[3]

सरबुलन्दखां के साथ यह युद्ध साबरमती नदी के तट पर १०-अक्टुबर १७३० को हुआ था । इस युद्ध में महाराजा अभयसिंह की विजय हुई थी। सरबुलन्दखां से उन्हें २७३ छोटी-बड़ी तोपें प्राप्त हुई थी ।[4] अहमदाबाद विजय की तिथि सूरजप्रकास तथा विरदसिणगार में वि. सं. १७८७

१. सूरजप्रकास, भाग-३, पृ० २८
२. वही भाग-३, पृ० २.
३. वही पृ० २६१.
४. मारवाड़ एवं मरहठा -डॉ० परिहार, पृ० २३.

सुदी १०, शनिवार बतलाई गई है, जो प्रामाणिक है । पंडित विश्वेश्वर नाथ रेऊ ने महाराजा अभयसिंह की इस ऐतिहासिक विजय की तिथि वि. सं. कार्तिक वदि ५ बतलायी है ।[1] परन्तु इस युद्ध के समय कविया करणीदान तथा वीरभाण रतनू आदि कवि उपस्थित थे । अतः उनके द्वारा प्रस्तुत विवरण अधिक ऐतिहासिक माना जाना चाहिए । सूरजप्रकास ग्रन्थ में स्पष्ट लिखा है कि वि. सं. १७८७ विजयादसमी शनिवार के दिन महाराजा अभयसिंह की विजय हुई थी तथा इस विजय के लगभग एक वर्ष पश्चात् कार्तिक वदि १०, रविवार के दिन करणीदान ने सूरजप्रकास ग्रंथ लिखकर पूर्ण किया था —

सत्रैसै समत सत्यासियै, विजैदसमी सनि जीत ।
वदि कातिक गुण वराहीयो, दसमी वार अदीत ॥[2]

युद्ध – वर्णन की दृष्टि से सूरजप्रकास सर्वश्रेष्ठ काव्य – कृति है । शब्दों के साथ युद्ध की ध्वनि और चित्र साकार होने लगते हैं । उदाहरण के लिए निम्नलिखित पंक्तियां देखिए —

घड़ भूप अमा र विलंद तणी घड़, रीठ झड़ज्झड़ खाग रमै ।
दळ कंध कड़क्कड़ सीस दड़द्दड़, भीच लड़त्थड़ केम भ्रमै ।
धुम्र केक वड़व्वड़ त्रत्त धड़ध्धड़, चंड गड़ग्गड़ रत्त चड़ै ।
'अभमाल' विलंद तणा मुंह आगळ, लोह इसी विध जोध लड़ै ।
होय खिसत हड़ाहड़ पाव हथज्झड़, घूमत वद्धड़ मेछ घड़ां ।
तस रुप तड़त्तड़ नीझक नज्झड़, तूटत अंतड़ रोद तड़ां ।
फिरराळ तड़फ्फड़ कूद कळज्जड़, आय भड़ब्भड़ मल्ल अड़ै ।
'अभमाल' विलंद तणा मुंह आगळ, लोह इसी विध जोध लड़ै ॥[3]

युद्ध वीरता के प्रसंगों के बीच प्राकृतिक सुषमा का अंकन प्रायः सम्भव नहीं हो पाता । इसी कारण वीररस के अधिकांश काव्य ग्रन्थों में प्रकृति वर्णन के प्रसंग को निरपेक्ष रखकर ही स्थान दिया जाता है ।

---

१. मारवाड़ का इतिहास (प्रथम भाग)–पण्डित विश्वेश्वर नाथ रेऊ, पृ० ३३८–३९.
२. सूरजप्रकास, भाग–३, पृ० २७३.
३. सूरजप्रकास, पृ० २४८, ४९

तोपों की गड़गड़ाहट तथा युद्ध-विनाश के वीभत्स और भयानक वातावरण में प्रकृति की कोमल काया झुलस जाती है। इसी कारण वीररस-प्रधान ग्रंथों में प्रकृति के उपकरणों का प्रायः उपमान रूपों में ही प्रयोग होता है परन्तु सूरजप्रकास में कविया करणीदान ने वीररस के ओजमय चित्र प्रस्तुत करने के साथ-साथ प्रकृति के अनेक आलम्बनगत, स्वतन्त्र चित्र प्रस्तुत किए हैं। ये वर्णन परम्परागत वस्तु परिगणनशैली में होते हुए भी अत्यन्त सुन्दर और स्वाभाविक दिखाई देते हैं। उदाहरण देखिए—

आगळी वहै प्रवाह अथागा। भळहल सुजळ नदी चन्द्रभागा।
हंस बोलै खेलै ससी हंसी। विगसै कमल घणा चन्द्रवन्सी।
जोत वाग झळकै मिळ नदि जळ। चमकै मंगर उछळै चंचळ।
मल्हवै किर गिर चढ़ि हेमालै, चन्द्रकुमार खेल नह चाळै।
तिण उपवनि झोलै नदि तीरां, सीतळ मंद सुगन्ध समीरा ॥[1]

रीतिकालीन कवियों द्वारा नायिकाओं के नखशिख वर्णन की भांति करणीदान ने अश्वों के सौन्दर्य का मनोमुग्धकारी वर्णन किया है। यह वर्णन प्रायः रूढ़ोपमाओं से संपृक्त हो कर रीतिबद्ध हो गया है। एक उदाहरण देखिए —

नख उलट कटोरा सम अनोप। अंग नळी नीकळी चित्र ओप।
बाजुवां सुछट तायक वळाक। चाकां दुनाव पींड़ा सचाक।
सुजि ताम्र तुंड कंथा समाथ। बाजोट उवर अइयाळ बाथ।
केहास बिहूं घजरंग कन्न। प्रतहास रौसरिप चहर पन्न।
दुजराज नयण ससि बीज डाच। मल्लूक पसम मुखमल कुमाच।
झमरूख चमर सिखराळ झाट। सुजि ओछ पड़छ आसण सुधाट ॥[2]

अन्तःपुर में रहने वाली स्त्रियों के सम्बन्ध में कवि द्वारा प्रस्तुत संयोग शृंगार का एक शब्द चित्र देखिए —

दुति भांण पदमणि देखि, पति जेम पदमणि पेखि।
सज्जत सोल सिंगार, आभरण दूण अढार ॥

---

१. सूरजप्रकास – भाग १, पृ० ११७.
२. सूरजप्रकास– भाग–३, पृ० १३–१४.

नर करी घेंनि अनूप, चित्र नौख गोख संरूप ।
महूनारी मधुर सदोह, मिल रचत उच्छव मोह ॥
घर करत चौक बणाव, करि कुंमकुंमा छिड़काव ।
मझि सभा राज मंझारि, नव उछव इम नर नारि ॥

उपमाओं तथा अलंकारों के सुन्दर प्रयोग से वर्णन अत्यन्त सजीव, साकार और हृदयग्राही बन गये हैं । उदाहरण देखिए —

(१) समसेर बांण छूटै समर, आ ओपम इण नाचनै ।
परियांण जांण छूटै पनंग, जावै चंदण बावनै ॥[1]
(२) अणी बढ़ कढ़ि फवै फळ एम । जाळोमझि हत्थ सुहागणि जेम ।[2]
(३) पेचां मझि स्रोण वहै अणपार । जटा गंग जांणिक धार हजार ।[3]

'विरद सिणगार' वस्तुतः करणीदान की एक स्वतन्त्र रचना है। कवि ने इसे 'सूरजप्रकास रो तंत' सार अवश्य कहा है[4] परन्तु यह कथन विषय-वस्तु की दृष्टि से ही ठीक है, अन्यथा इस रचना की एक भी पंक्ति 'सूरजप्रकास' से नहीं मिलती ।[5] 'विरद सिणगार' १३५ छन्दों मे निर्मित खण्ड-काव्य है जिसमें अभयसिंह के जीवन की प्रमुख घटनाओं का संक्षिप्त विवरण देकर कवि ने अहमदाबाद युद्ध का वर्णन किया है । ग्रंथ के रचनाकाल के सम्बन्ध में कवि ने लिखा है —

सत्रह सै सतियास सक, धुव अहमदपुर धाम ।
यम कवि कर्ण बखाण कर, सुभटां तणां संग्राम ॥[6]

'विरद सिणगार' में कविया करणीदान ने अत्यन्त प्रभावशाली युद्ध-वर्णन किया है —

---

१. सूरजप्रकास – भाग-३, पृ० ३७
२. वही, भाग-३, पृ० ७०
३. वही, भाग-३, पृ० ८४.
४. विरद सिणगार– सं० सीताराम लाळस, पृ० ३८.
५. कविया करणीदान और सूरजप्रकास– डॉ० राजकृष्ण दूगड़, पृ० ४८
६. विरद सिणगार, पृ० ३५

चढ़ रीस उठी जद मुरड़ चाय, पड़ ईस मनावे तेण पाय ।
धर हरे जटा खुल गंग-धार, मेमटा रुधिर सरसत मझार ।।
प्राजळ चख वेगम अंसुपात, जमना जळ काजळ वहत जात ।
उणधार त्रिवेणी तीर आय, जूंझार हुवै सो मुगत पाय ।।[1]

वीर-रसात्मक एवं वर्णन-प्रधान कृति 'विरद सिणगार' की भाषा प्रसाद-गुणपूर्ण एवं प्रवाह वाली है । उदाहरण देखिए-

पिंड फूटे छूटै रुधर पूर, सिर तूटै जूटै केक सूर ।
धड़ डोलै खाथा तेगधार, माथा मुख वोले मार-मार ।।[2]

कविया करणीदान ने अपने जीवन-काल में साधुवेप में कुछ व्यक्तियों को जब असाधुकर्मों में लिप्त देखा तो उनका हृदय इस प्रकार के आडम्बरों से व्यथित हो उठा । 'जतिरासा' नामक काव्यकृति में करणीदान ने जतियों के आडम्बर एवं दुराचार का जो शब्दचित्र खींचा है, वह अत्यन्त प्रशंसनीय है ।[3] इससे उनकी लोक-कल्याण भावना का परिचय मिलता है । धर्म अथवा साधुवेश की आड़ में किसी को ठगना निन्दनीय है । साधु-सन्यासी का कर्तव्य मानवता को अज्ञान से ज्ञान की ओर ले जाना होता है । दुर्भाग्यवश यदि मानवता के ये प्रतिनिधि कर्तव्य-विमुख हो जायें तो समाज के अन्य लोगों को सद्कर्म के पथ से च्युत होने से नहीं रोका जा सकता । आडम्बरी जतियों का शब्दांकन करते हुए कवि ने लिखा है —

(१) चाव पान मुख चोळ, दांत मसिया रंग देवे ।
(२) फल खाय अघाय रमै परत्री । जग मांह पुजाय कहाय जती ।।
(६) घर ऊपर धूप अवखत्त धरै । कर मोहनी जंत्र लहंत करै ।।

गाथा, कवित्त, दोहा, श्लोक तथा त्रोटक छन्दों में कवि ने जतियों के खान-पान, रहन-सहन, वेश-भूषा तथा आडम्बरपूर्ण आचरण का नग्नचित्र खींचा है ।

---

१. विरद सिणगार, पृ० १०४-१०५.
२. वही पृ० १०७.
३. (अ) राजस्थान शोध संस्थान उदयपुर - डिंगल काव्य संग्रह जिल्द संख्या ३३९, पृ० ११३.
(ब) राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान, ग्रंथ संख्या ३०२६२ तथा २८८७२.

'सूरजप्रकास' की भूमिका में सीताराम लाळस ने करणीदान कविया द्वारा प्रणीत कृति 'अभय भूषण' का उल्लेख करते हुए निम्नलिखित सवैया प्रस्तुत किया है—

ए न घटा तनवांन सजेभट, ए न छटा चमके छहरारी।
गाजे न बाजत दुंदुभि ए, बक पंत नहीं गजदंत निहारी॥
ए न मयूर जु बोलत हैं, बिरदावत मंगन के गन भारी।
ए नहि पावस काल अली, अभमाल अजावत की असवारी॥[1]

इन ऐतिहासिक काव्य-कृतियों के अतिरिक्त एक अन्य काव्यकृति 'महर मजेज' का उल्लेख[2] तथा कविया करणीदान द्वारा रचित सैंकड़ों स्फुट गीत उपलब्ध हैं। ये गीत समसामयिक योद्धाओं की प्रशस्ति में लिखे गये हैं। कवि द्वारा निर्मित गीतों का प्रकाशन हो चुका है।[3]

ये गीत श्री सीताराम लाळस और श्री सौभाग्यसिंह शेखावत के निजी संग्रह, श्री नटनागर शोध संस्थान, सीतामऊ, राजस्थानी शोध संस्थान चौपासनी, राजस्थान प्राच्य विद्या प्रतिष्ठान जोधपुर, साहित्य संस्थान उदयपुर तथा श्री हनुवन्त सिंह देवड़ा के निजी संग्रह में उपलब्ध हैं। कविया करणीदान कवि होने के साथ-साथ प्रबुद्ध इतिहासविज्ञ भी थे। अपने गीतों में उन्होंने समसामयिक महत्त्वपूर्ण ऐतिहासिक घटनाओं का वर्णन किया है। अतः साहित्य रसिकों के साथ-साथ इतिहास प्रेमियों के लिए भी करणीदान के गीत अनुपेक्षणीय कहे जा सकते हैं। मुगल सम्राट मुहम्मदशाह के समय सैय्यद बन्धुओं के अराजकतापूर्ण कार्यों के विरुद्ध लड़े गये युद्ध में मुजफ्फरखां के नेतृत्व सम्भालने और मुहम्मदशाह

---

१. सूरज प्रकास भाग १, भूमिका, पृ० ५.
२. कविया मुरारीदानजी अयाचक जयपुर द्वारा डॉ० राजकृष्ण दूगड़ को लिखे गए एक पत्र के अनुसार.
३.(अ) मरुभारती फरवरी १९५४ डिंगल गीत - लेखक श्री सीताराम लाळस.
(ब) राजस्थानी वीर गीत संग्रह भाग २, सम्पादक श्री सौभाग्य सिंह शेखावत, पृ० ४३.
(स) प्राचीन राजस्थानी गीत, भाग २-संपादक कविराज मोहनसिंह पृ. १४१
(द) वही भाग ७ पृ. ६६
(य) बिरद सिणगार- सम्पादक श्री सीताराम लाळस.

की ओर से लड़कर वीरगति प्राप्त करने की इतिहास-सम्मत घटना का करणीदान ने निम्नलिखित गीत में अत्यन्त सुन्दर वर्णन किया है —

गीत मुजफ्फर खांन री – कविया करणीदान री कह्यो.

मद छक मद पीवतौ राग सुणतौ मसत, ग्रेम गज मसत जिम खेत अड़ियौ ।
साहरै लाडिलो हूंतौ मुजफर सदा, लाडिलौ साहरी चाड लड़ियौ ॥१॥
अड़ि त्रिखंड छखंड धुव्रि गयण धर अरांवां, कारट छत्र नवावां दुवां कीधा ।
उठे चढि नवांने वीदवांने अजर, दिवाने खळा खगी गजर दीधा ॥२॥
अलूळां लाडिले टेक छकि अवारे, अेक पति नमक सरीयत इरादे ।
कमर दी निजांमल जी व ओजो कियौ, ...कीया खोज जादे ॥३॥
श्री चंडीपुर राज राखि महमद अचळ, पैलि ईरान रा पा......गां ।
झुकत असमांन रौ भार भा झेलियौ, खान री खेलियौ फाग खागां ॥४॥
जनम काई नंह लगाइ झड़े जंगि, वरे निज हूर दुसहां वराई ।
अमीराई करे कमाई ऊजळा, पातसाई भिसत तणी पाई ॥५॥[1]

विरजूबाई —

श्री सीताराम लाळस ने 'विरद सिणगार' की भूमिका और मरुभारती के अंक में विरजूबाई को कविया करणीदान की पत्नी बतलाया है[2] परन्तु उनका यह कथन तर्कसम्मत नहीं है। डिंगल कवयित्री विरजूबाई वस्तुतः करणीदान की परिणिता नहीं वरन् उनकी बहिन थी। अनेक विद्वान इस मत से सहमत हैं।[3] विरजूबाई डिंगल गीत और कवित्त बनाने में अत्यन्त निपुर्ण थी। समय-समय पर उनकी रचनाओं को अपनी स्वरचित रचनाएं बतलाकर कुछ कवियों ने अपने-अपने आश्रयदाता से मनचाहा पुरस्कार प्राप्त किया था। कवयित्री द्वारा रचित गीतों को मुंशी देवीप्रसाद ने 'महिला मृदुवाणी' में उद्धृत किया है। एक वार विरजूबाई ने अपने

---

१. श्री नटनागर शोध संस्थान सीतामऊ संग्रह से प्राप्त.

२ (अ) 'विरद सिणगार' भूमिका.
(ब) मरुभारती अंक, अक्टूबर १९५८, वर्ष ३, अंक ३.

३ (अ) महिला मृदुवाणी-मुंशी देवी प्रसाद, पृ० ८७.
(ब) मध्यकालीन हिन्दी कवयित्रियां-डॉ० सावित्री सिन्हा, पृ० ३३.
(स) कविया करणीदान और सूरज प्रकास-डॉ० राजकृष्ण दूगड़, पृ० ३३

भतीजे को साथ लेकर ठाकुर प्रतापसिंह मोहनसिंहोत के पास जाते हुए एक गीत लिख कर दिया साथ ही यह आग्रह भी किया कि भतीजा ठाकुर को कहे कि गीत उसी ने लिखा है । गीत सुनकर ठाकुर बहुत प्रभावित हुआ । गीत की एक पंक्ति के उच्चारण में अज्ञानवश 'चीतै' के स्थान पर 'चीतो कंत' सुनकर ठाकुर ने उससे कहा कि सच-सच बतलाना यह गीत किसके द्वारा लिखा हुआ है । चारण कवि ने बतला दिया कि गीत विरजूबाई का लिखा है और उन्हीं के अनुरोध पर उसने गीत को स्वयं द्वारा निर्मित बतलाया था । ठाकुर ने विरजूबाई को बुलवाकर उन्हें और उनके भतीजे को पुरस्कारादि से सम्मानित किया । गीत की कुछ पंक्तियाँ प्रस्तुत है—

मेहा मुगाला घेराकी, नाव जेराकी वखाण कीजै ।
नाव जोड़ जेराकी, पैराकी नाग ताज ।।
घेराकी [illegible] आछा, नोखा रीझावर पतो ।
रीझावे घेराकी काछी, अेहा बाजराज ।।१।।
ज्यां तुरां बाणास धारा, सूरा सदा भोम जीती ।
छूटे नाळा सेग येह अरीती छुडाण ।
पान [illegible] नागगीत, रीती पंथ बिनू पंथो ।
ए मारे पचीसो चीतो कंत ज्यूं उडाण ।।४।।

विरजूबाई के समान कविया करणीदान की पत्नी भी काव्य मर्मज्ञा एवं विदुषी थी । साहित्य-जगत् में प्रचलित एक किंवदन्ती के अनुसार मथुरा जाते समय बड़ली के ठाकुर लालसिंह के अभूतपूर्व आतिथ्य सत्कार के प्रत्युत्तर में करणीदान काव्य-सर्जन नहीं कर पाये । इस घटना का उन्हें मृत्युपर्यन्त विषाद रहा । मृत्यु के समय अपनी पत्नी से उन्होंने इस कमी में [illegible] करवाने का आग्रह किया । पति को दिये गये इस वचन को पूरा करने के उद्देश्य से करणीदान के देहावसान के बाद उनकी पत्नी ने सती होने का विचार त्याग दिया । अब वह काव्य के द्वारा बड़ली के ठाकुर को अमर बनाने की घड़ी की आतुरता से प्रतीक्षा करने लगी । और क्रमशः वह समय आ पहुंचा । मरहठों के साथ हुए प्रलयंकारी युद्ध में ठाकुर लालसिंह ने वीरगति पाई ।[1] बड़ली के ठाकुर लालसिंह

१. '[illegible] री ख्यात' की हस्तलिखित प्रति, भाग १,पृ० ३६८ में मरहठों के अजमेर में स्थित अधिकारी गोविन्दराय ने शाहपुरा के राजा उम्मेदसिंह के नाम लिखे गये पत्र में बड़ली पर किए गए आक्रमण का उल्लेख किया है ।

के शौर्यपूर्ण बलिदान को अमर बनाने के लिए कविया करणीदान की पत्नी ने अनेक दोहे लिखे, उनमें से कुछ इस प्रकार हैं —

(१) बड़ली अड़ली किम करे, बड़ली बड़ी जलाल।
आ बड़ली बिलसी ज-दिन, घलमी मो सिर घाव ॥

(२) दळ आसी दिखणाद रा, पड़सी तोपां ताव ।
आ बड़ली बिलसी ज-दिन, घलसी मो सिर घाव ॥

(३) बंका आखर बोलतो, चलतो वंकी चाल ।
अड़ियो वंको खग दळां, लड़ियो वंको लाल ॥

डिंगल के प्रतिभासम्पन्न कवि-कवयित्रियों ने तलवार का जौहर दिखाने वाले शूरवीरों को अपनी कलम के जौहर से जो अमरत्व प्रदान किया उसके उदाहरण इतने अधिक परिमाण में अन्य भाषा के साहित्य में आज तक उपलब्ध नहीं हुए हैं। आश्चर्य की बात तो यह है कि यहां के कवि कलम चलाने के साथ-साथ तलवार आदि अस्त्र-शस्त्र चलाने में भी सिद्धहस्त थे। इतिहास ऐसे असंख्य विवरणों से भरा हुआ है जिनमें राजस्थान के साहित्यकारों द्वारा युद्ध-क्षेत्र में प्रदर्शित अद्वितीय पराक्रम का वर्णन चित्रित है। विशेषरूप से विक्रम संवत् १६५०-१८०० का कालखण्ड तो साहित्यिक विशेषताओं से समृद्ध रहा है। वीर रस निरुपण के साथ-साथ यहां के साहित्यकारों ने भक्ति और शृंगार रस निरुपण में भी अपनी अभूतपूर्व प्रतिभा का परिचय दिया है। इन्हीं विशेषताओं के आधार पर इस कालखण्ड को स्वर्ण काल की संज्ञा से विभूषित किया जाता है।

वीरभाण —

अठारहवीं शताब्दी में राजस्थानी में उच्चकोटि की रचनाएं प्रणीत करने वाले कवियों में, जोधपुर राज्य में स्थित घड़ोई ग्राम के निवासी वीरभाण का प्रमुख स्थान रहा है। ये रतनू शाखा के चारण तथा हमीर रतनू और करणीदान कविया के समसामयिक थे। विक्रम संवत् १९७५ की एक प्रतिलिपि में कवि का वंशवृक्ष इस प्रकार से प्रस्तुत किया गया है —

वीरभाण रतनू रो नजरो —

१. टोहोजी
२. पीथोजी
३. सूरोजी
४. नाथोजी
५. सिवदान जी
६. भागचंद जी
७. सोभोजी
८. दलोजी
९. भोजराज जी
१०. वीरभाणजी बेटा दोय

११. अखोजी

१. सतीदान जी
२. मानदान जी
३. हरदान जी
४. मुंडी दान जी

११. लाधोजी बेटा दोय

१. अभैराम जी
२. करणदान जी
३. लछमी राज जी
४. सिवकरण जी

१. महाराम जी
२. चैन राम जी
३. गोइंद राम जी

डिंगल के सुप्रसिद्ध ग्रंथ 'राज रूपक' का सृजन कर कवि वीरभाण ने साहित्य के साथ-साथ इतिहास की भी अनुपम सेवा की है। 'राज रूपक' कृति में ऐतिहासिक घटनाओं का तिथि – क्रमानुसार विवरण होने से, इतिहास-सम्बन्धी अन्वेषणों में इसका आश्रय लिया जाना स्वाभाविक ही है। साहित्य और ऐतिहासिक महत्व के इस ग्रन्थ में कवि ने अपने आश्रयदाता– जोधपुर के महाराजा अभयसिंह द्वारा अहमदाबाद युद्ध में प्रदर्शित अदम्य-शौर्य का ४६ प्रकाशों में वर्णन किया है। इस ग्रन्थ का नागरी प्रचारिणी सभा काशी द्वारा प्रकाशन भी किया जा चुका है।

वृहद् काव्य-ग्रन्थ 'राज रूपक' में, जोधपुर के महाराजा जसवन्तसिंह की मृत्यु से लेकर उनके पौत्र अभयसिंह की ऐतिहासिक अहमदाबाद-विजय तक की घटनाओं का (विक्रम संवत् १७३५ से १७८७) सुन्दर ऐतिहासिक वर्णन पाठकों को वीर-रस के सागर में डुबो देने में सक्षम है। 'राजरूपक' ग्रन्थ की ऐतिहासिकता का प्रमुख कारण, स्वयं कवि का समरांगण में उपस्थित होना है।

अहमदाबाद-युद्ध-विजय के पश्चात्, अति व्यस्तता के कारण महाराजा अभयसिंह के कविया करणीदान और वीरभाण रतनूं दोनों ने अपनी-अपनी

विशद् काव्य–कृतियों को संक्षिप्त करके सुनाने का आग्रह किया था। कविया करणीदान ने 'सूरजप्रकास' ग्रंथ का संक्षिप्तिकरण कर सुनाया परन्तु वीरभाण रतनू को अपने 'राजरूपक' में कोई भी स्थल हटाने या घटाने योग्य नहीं दिखा। अतः वे अपने काव्य की आत्मा को छिन्न-भिन्न नहीं कर सके। अनेक विद्वानों का कथन है कि वीरभाण रतनू के इस अप्रत्याशित निर्णय को महाराजा ने अपना अपमान समझकर उन्हें पुरस्कार-सम्मान से वंचित कर दिया, परन्तु विद्वानों की ये धारणा सर्वथा निर्मूल है। वीरभाण के समसामयिक रचनाकारों ने महाराजा अभयसिंह द्वारा कवि को सम्मानित करने की घटनाओं का उल्लेख किया है, जिन्हें भ्रान्ति–निवारण हेतु यहां प्रस्तुत किया जा रहा है।

'राजरूपक' ग्रन्थ के काव्य एवं भाव सौन्दर्य से प्रसन्न होकर जोधपुर–नरेश अभयसिंह ने कवि वीरभाण को स्वर्ण कण्ठा, स्वर्ण कड़े, सिरोपाव आदि भेंट स्वरूप प्रदान किए थे। तत्कालीन रचनाकारों की रचनाओं में इस घटना का विवरण मिलता है। उदाहरण के लिए एक कवित्त देखिए —

माळा सोव्रनियां कनक मूंदड़ा कडाळा।
जामा जरकसियां सदळ सिरपाव सुढाळा॥
मौज दरक हैमरां छात वदरा समपै धर।
'वीर' मूठि नेग व्रवि लिरै थापियौ कवेसुर॥

रतनुंग्रा राव दळराज रौ यळ सिणगार व्रण ऊधरे।
पूजियो भोज सिंभू सुपह विजयेन्द्र जैसलगिरे॥

वीरभाण के काव्य से महाराजा अभयसिंह ही नहीं प्रत्युत जैसलमेर तथा मेवाड़ राज्यों के शासक भी प्रभावित थे। एक गीत की पंक्तियां प्रस्तुत हैं जिनमें महाराजा अभयसिंह द्वारा कवि का सम्मान करना तथा मेवाड़ के महाराणा जगतसिंह द्वारा कवि को आमंत्रित करने की घटनाओं का विवरण निहित है —

'दला' दूसरा भला कविराज मालम दुनी,
लेखि थिर रहण चै देखि लाहै।
अखर तौ 'भाण' जोधाणपति आराधिया,
चित अखर सुणण 'दीवाण' चाहै॥१॥
छति उकति देखी मिलवा करै छत्रपति,
दे सकी व्रनपति भोज रा दादि।

प्रमत कर गीत 'कमधांपति' बुलायै,
'आहड़ो पति' तो गीतां करै यादि ॥२॥

गायकां वायकां अमर जड़िया सुपह,
पात घड़िया जुनै खाता पासै ।
वडा गुण देखि राजा 'अभै' वांदियो,
रांण वांदण गुण रीझ रासै ॥३॥

'रतनुवां' राव कविराव अहमाण रुख,
हुवै कुंण बादगर अवर नर होड ।
'अभै' करि कोड कायव जिकै अरथिया,
कायवां सुणण 'जगतो' करै कोड ॥४॥

मारवाड़ के परगनों की विगत और मारवाड़ के इतिहास पर प्रकाश डालने वाली ख्यातों में, सिवाना के राणा देवीदास जैतमालोत द्वारा रतनू शाखा के कवियों को 'घड़ोई' नामक ग्राम भेंट करने का उल्लेख मिलता है—

'सिवाणां था कोस १३ धू दिसी दत्त रांणा देवीदास बीजावतरी। चारण नींबा करमावत नैं पीथो टोहावत जात रतनु काका भतीज नु । हमै चारण दानां किसनावत नै नराइण खेता रा नै ईसर मेहाजळ री नै भारमल मना री छै।'[1]

जोधपुर-नरेश अभयसिंह के पांचवे वंशधर मानसिंह द्वारा कवि वीरभाण रतनू के पौत्र को 'घड़ोई' नामक ग्राम देने का विवरण भी राजस्थानी-विद्वान बहुधा दिया करते है। जबकि यह कथन इतिहास-सम्मत नहीं है। उपरोक्त कथन से स्पष्ट हो जाता है कि रतनू शाखा के चारणों को 'घड़ोई' नामक ग्राम मानसिंह द्वारा नहीं, सिवाना के राणा देवीदास जैतमालोत द्वारा प्राप्त हुआ था।

'राजरूपक' ग्रन्थ की भाषा सरल होते हुए भी डिंगल-साहित्य की विशेषताओं से परिपूर्ण है। कवि ने बड़ा आकर्षक, सजीव और चित्रात्मक युद्ध-वर्णन किया है। अहमदाबाद-युद्ध में महाराजा अभयसिंह

---

१. मारवाड़ रै परगनां री विगत—राजस्थान प्राच्यविद्या प्रतिष्ठान जोधपुर, पृ० २३३.

तथा शत्रु पक्ष की सेनाओं के युद्ध-कौशल, सैनिकों के परस्पर घात-प्रतिघात, घोड़े-हाथियों की चिघाड़ आदि के वीर रसात्मक वर्णन द्वारा कवि ने समर-दृश्य को साकार-सा कर दिया है। युद्ध-वर्णन की कुछ पंक्तियां देखिए —

धुवे सार मांर घड़े धार धार। हुवै वीर हक्कं हजारे हजारं॥
छटा ज्यूं विछूटै भुजे सेल छुटे। खगै अंग तूटै अनो अन्न त्रूटे॥
प्रवाहै खड़ग्गं भड़ै हत्थ पग्गं। लहै जांण आरा धरं काठ लग्गं॥
मुड़े सालले सालले पे मुड़क्कै। भड़ां ओभड़ां सांड ज्यो मांड भुक्के॥
किता अग्र पाछै किता चक्रकुंडे। तरक्के किता साहता वाह तुंडे॥
भिदे सार सेले कटारी भळक्के। हिलालां कि सामुद्र वेळा हलक्के॥

वीरभाण ने अपने काव्य में शृंगार का भी सरस और हृदयग्राही चित्रण किया है। सती नारी का अपने पति के साथ वही सम्बन्ध होता है जो चन्द्रमा से चांदनी का, बादलों से बिजली का, सूर्य से उसकी रश्मियों का तथा काया का छाया के साथ होता है। कंत की मृत्यु हो जाने पर कान्ता का जीवन भी मृतप्रायः सा हो जाता है। पति की मृत्यु के बाद बहुमूल्य आभूषण इत्यादि का परित्याग करके अथवा शोक-वेश धारण करके वैधव्य-जीवन बिताने को कवि ने ढोंग, जीवन के प्रति सम्मोहन तथा शूरवीर पति के साथ विश्वासघात बतलाया है। जल से विलग होकर मीन का जीवित रह पाना असम्भव है उसी प्रकार सती नारी भी अपने पति के मरणोपरान्त घड़ी-भर भी नहीं जी सकती। कुछ इसी प्रकार के भावों का अभिव्यक्तिकरण देखिए —

मोताहळ ऊतारि, माल तुलछी गल धारै।
करे तिलक अत्यका, तिलक कूंकम वीसारै।
पणि मूल एह कायर पणै, सांग धरै हरि वीसरै।
कुळ तरुणि तेण सोभै किसी, कंत मरण जीवण करै॥

सती-कर्म की प्रेरणा में लाज का विशेष स्थान है। लज्जा भारतीय नारियों का सर्वोपरि आभूषण माना जाता है। राजस्थान की वीरांगना के हृदय में उठने वाले इसी प्रकार के मनोभावों का विधान कवि ने इन शब्दों द्वारा खींचा है —

लाज सील सन्नेह, लाज परिवरत न चूकै।
लाज मांण रक्खणी, लाज अवसांण न चूकै।

लाज लोभ संग्रहे, लाज धन-लोभ न लग्गे।
मीन मरण हुइ पामि, लाज इण कांम उमंगे॥

राजरूपक के अतिरिक्त वीरभाण ने समकालीन योद्धाओं पर कवित्त, दोहे, गीत और छन्दों का प्रचुर परिमाण में सर्जन किया है। कवि प्रणीत भक्ति-रस की एक कृति 'भागवत प्रकास' भी उपलब्ध हुई है जिसमें श्रीकृष्ण के चरित्र का दोहा, षट्पदी, मोतीदाम, नाराच, ढंवरी, पद्धरी एवं त्रिभंगी आदि छन्दों में बड़ा मनोरम विवरण प्रस्तुत किया गया है। 'भागवत प्रकास' को डिंगल साहित्य की प्रौढ़ तथा महत्वपूर्ण रचना बतलाते हुए एक कवि ने कहा है—

मुहर मेह मंडियाह, गांव दामां पुजाणां।
जीहां कहिया जिका, रीझ रहिया रावराणां॥
ब्रह्म वेद सारखा, भेद जाणंग मन भाया।
प्रेम सणो आखियौ, अरथ सुखदेव सवाया॥

जळ मंगळ पवन नेखम जिकै, 'भोज' सुतन न रहिया निभै।
'वीरभांण' अखर थारां वरण, अगर कीध राजा अभै॥

उपरोक्त रचनाओं के अतिरिक्त कवि वीरभाण द्वारा रचित समसामयिक इतिहास-निर्माता शूरवीरों के कुछ गीत भी प्राप्य हैं। वीर दुर्गादास के सहयोगी योद्धा केसरीसिंह के पुत्र बख्तसिंह ने 'गगवाना' युद्ध में अपूर्व शौर्य का परिचय दिया था। यह युद्ध जयपुर और नागौर के शासकों के मध्य लड़ा गया था। 'गगवाना' के नाम से इतिहास-प्रसिद्ध इस युद्ध में बख्तसिंह ने नागौर के शासक की ओर से जयपुर-नरेश सवाई जयसिंह कछवाह की सेना के साथ भयंकर युद्ध लड़ा था। शूरवीर बख्तसिंह के अतुल पराक्रम तथा युद्ध-कौशल का वीरभाण ने इस गीत में सजीव वर्णन प्रस्तुत किया है—

करनोत बखतसिंघजी री रतनु वीरभांण री कहियौ गीत

वणी वार सूर जतै अधुरा वीचता, कार भांगी जिकै सार काळी।
सिध बगतेस बळ दाखि जैसिघ सूं, वाजियौ केसरीसिंघ वाळौ॥१॥
धमूकतो कुरमां गजां देतौ धका, हेड़तो रिमापति समो हाथै।
[illegible] तुरी पीलो वनि करारी, मेळियो कंवारी घड़ा माथै॥२॥
असंकत जोर बगतेस राजा अगै, साम पैलां सिरै वाग लेते।
[illegible] [illegible] बाट [illegible] झळा, दळां आदेसियौ झाट देते॥३॥

झींक पोहरां पडै वाढ़ कोरां झडै, दुगम रिण नीमड़ै लड़ै दईवांण।
त्रिजड़ खल झाड़ि जल चाढि कमधां तड़ै, राड़ि पीठ ऊबरै वियो राजांण

सूरजप्रकास और राजरूपक दोनों ऐतिहासिक चरित-काव्य हैं। दोनों ही रचनाओं कवियों ने अपने आश्रयदाता, जोधपुर के महाराजा अभयसिंह की वंशावली का विवरण सृष्टि के आरम्भ से प्रस्तुत किया है। कविया करणीदान ने अपने चरित्र नायक की वंशावली में निम्नलिखित प्रसंगों का विस्तृत वर्णन किया है—

१. रामायण प्रसंग
२. राजा पुंज के तेरह पुत्रों का वर्णन
३. राजा जयचन्द का वर्णन
४. महाराजा सूरसिंह से लेकर महाराजा अभयसिंह तक का वर्णन

राजरूपक में महाराजा अजीतसिंह तक नामावली देकर उनके काल की समस्त घटनाओं का समायोजन किया गया है। दूसरे प्रकाश से अड़तीसवें प्रकाश तक की घटनाएं महाराजा अजीतसिंह से ही सम्बन्धित हैं। अन्तिम छः प्रकाशों में महाराजा अभयसिंह के शासन काल की महत्वपूर्ण घटनाओं का, जिनमें अहमदाबाद युद्ध-वर्णन भी सम्मिलित है, विवरण दिया गया है।

वीरभाण ने महाराजा अजीतसिंह का वर्णन शुद्ध ऐतिहासिक दृष्टि से किया है। राजरूपक में उल्लिखित समस्त घटनाओं का तिथि क्रमानुसार विवरण दिया गया है। सूरजप्रकास ग्रन्थ में अनेक त्रुटियां हैं तथा करणीदान ने बहुत ही कम स्थानों पर घटनाओं की तिथि आदि का उल्लेख किया है। राजरूपक में समस्त घटनाओं के तिथि, संवत् आदि से ऐतिहासिक प्रामाणिकता बढ़ गई है। उदाहरण देखिए—

पैंतीसे रा चेत वद, चउथ अनै बुधवार।
पुत्र हुवौ जसराज रै, भांजण दुःख संसार॥[1]
वरस छतीसै सुकल पख, जेठ महीनै जेट।
तीज तणै दिन हल्लियौ दसमी आयौ थेट॥
सुणे दमंगल देस रौ, कूच कियौ वस रात।
मंडोवर डेरा किया, एकादसी प्रभात॥[2]

---

१. राजरूपक, पृ० २६
२. राजरूपक, पृ० ५८,

वीरभाण ने अपने काव्य ग्रन्थ में अहमदाबाद युद्ध के अतिरिक्त तत्कालीन अन्य महत्वपूर्ण घटनाओं का भी उल्लेख किया है जबकि कविया करणीदान की लेखनी मारवाड़ की सीमाओं को ही छू पाती है।

राजरूपक में महाराजा अभयसिंह के शासन काल की समस्त घटनाओं का ऐतिहासिक संकलन उपलब्ध होता है परन्तु सूरजप्रकास के रचयिता ने महाराजा अभयसिंह के शासनकाल की प्रमुख घटनाओं का ही उल्लेख किया है।

राजरूपक और सूरजप्रकास दोनों ही ग्रन्थों में अहमदाबाद-युद्ध में सम्मिलित महत्वपूर्ण योद्धाओं का नामोल्लेख किया गया है परन्तु वीरभाण ने क्रमानुसार ही नहीं घटनानुसार भी सम्बन्धित योद्धा का विवरण दिया है। छोटी से छोटी घटना भी कवि की सूक्ष्म-दृष्टि से ओझल नहीं हुई। इसी प्रामाणिकता के आधार पर पंडित विश्वेश्वर नाथ रेऊ, श्री ओझा और श्री जगदीशसिंह गहलोत आदि इतिहासविदों ने समसामयिक घटनाओं के विवरण हेतु राजरूपक ग्रन्थ को आधार बनाया है।

राजरूपक की तुलना में सूरजप्रकास में ऐतिहासिक स्थानों का भी बहुत कम उल्लेख किया गया है। कवि की दृष्टि सीमा में उनके आश्रयदाता की शौर्य प्रशस्ति मात्र होने से अनेक ऐतिहासिक महत्व की घटनाओं की अनदेखी हो गई है। उदाहरण के लिये सूरजप्रकास में जसवंतसिंह की पराजय और समर-भूमि से पलायन की घटना तथा बखतसिंह के हाथों अजीतसिंह की हत्या, आदि ऐतिहासिक महत्व के प्रसंगों का कोई विवरण नहीं मिलता।

इतनी विभिन्नता होते हुए भी सूरजप्रकास और राजरूपक डिंगल भाषा के उत्कृष्ट ग्रन्थ कहे जा सकते हैं। जहां तक ऐतिहासिक तत्वों के न्यूनाधिक प्रयोग का प्रश्न है, इतिहासकार तथा साहित्यकार के कार्यकलापों में काफी अन्तर होता है। ग्रन्थ की उपयोगिता और प्रवाह को दृष्टि में रखते हुए कवि ने यदि तिथि, संवत् आदि का सांगोपांग विवरण नहीं दिया है तो इससे कवि की काव्य-प्रतिभा पर किसी प्रकार का संदेह नहीं किया जा सकता। भाषा, शैली, रस, प्रवाह, अलंकार एवं चित्रात्मक वर्णन आदि की दृष्टि से सूरजप्रकास निःसंदेह उच्च कोटि का ग्रन्थ है।

राजरूपक और सूरजप्रकास दोनों ही कृतियों में चित्रात्मक एवं ध्वन्यात्मक भाषा के लिए, सुन्दर शब्दों का चयन किया गया है।

हुवे रव हुवक सिलकि हजार। धड़क्किय नाळ भळक्किय धार।
धड़ड़ट देधड़ बज्जहि धार। कड़क्कड़ आटकि काठ कुठार। –राजरूपक[1]

---

१ राजरूपक, पृ० २०४

दळ कंध कड़क्कड़ सीस दड़द्दड़, भीच लड़त्थड़ केक भ्रमै ।
धुम्र केक बड़व्वड़ नृत धड़ध्धड़, चंडि गड़ग्गड़ रत्त चड़ै । –सूरज प्रकास[1]

दोनों ही काव्यकृतियों की भापा सरल तथा प्रवाहमान है । उदाहरण देखिए-

पत्र सुधारै जोगणी, माळ सुधारै रंभ ।
थंभ चलेवौ सोम रवि, पेखे व्योम अचंभ ॥[2]

भाषा में सर्वत्र अलंकारों का सुन्दर प्रयोग दिखाई देता है । वयण सगाई के अतिरिक्त उपमा. रूपक तथा उत्प्रेक्षा आदि अलंकारों के प्रसंगानुकूल प्रयोग से काव्य-सौष्ठ में अच्छा निखार आया है ।

छन्द-प्रयोग भी पात्र एवं परिस्थितियों के अनुरूप किया गया है । वीर-रस निरूपण में दोनों कवियों ने त्रकुटबन्ध, पद्धरी, रसावळा, मोतीदाम. भुजंगी तथा छप्पय आदि छन्दों का प्रयोग कर अपनी भापा और छन्दोगत सूझबूझ का परिचय दिया है ।

अलंकारिक-गद्य के प्रयोग में दोनों कवियों ने वार्ता एवं दवावैत विधा को अपनाया है । मुहावरों और लोकोक्तियों के सुन्दर प्रयोग ने भाषा और शैली को अत्यन्त आकर्षक बना दिया है । पादपूर्ति के लिये दोनों हो ग्रंथों में 'ह' 'स' 'क' और 'य' अक्षरों का प्रयोग किया गया है—

ऊभा समाथ जोपै अभै जैतहथा जोधहपुरा ।[3]
उमेदहवार लड़े भड़ ओप ।[4]

बखता—

मारवाड़ राज्य के अन्तर्गत् मेड़ता परगने के कवलिया ग्राम में जन्मे कवि बखता, खिड़िया शाखा के चारण थे । ये जोधपुर के महाराजा अभयसिंह के राज्याश्रय में काव्य-प्रणयन करते थे । कवि बखता खिड़िया सूरजप्रकास तथा विरद सिणगार के रचयिता करणीदान कविया और राजरूपककार वीरभाण रतनू के समसामयिक थे ।

---

१ सूरजप्रकास, भाग-३, पृ० २४८
२ राजरूपक, पृ० ३३
३ राजरूपक, पृ० ८११
४ सूरजप्रकास, भाग-३, पृ० १६१.

इनके गीत प्रबन्ध चारण साहित्य का इतिहास में डॉ० मोहन लाल जिज्ञासु ने कवि की प्रसिद्धि स्फुट-गीतों के कारण बतलाई है लेकिन डॉ० जिज्ञासु का यह अनुमान समीचीन नहीं है। बखता खिड़िया की प्रसिद्धि स्फुट-गीत लेखन के कारण नहीं वरन् महाराजा अभैसिंघ रा अहमदाबाद झगड़ा रा कवित्त कृति के कारण है। १६६ षट्पदियों में लिखित, इस वीर-रस प्रधान रचना में वि० सं० १७८७ में जोधपुर के महाराजा अभयसिंह और सर बुलन्दखां की सेनाओं के मध्य अहमदाबाद में लड़े गये घमासान-युद्ध का वर्णन किया गया है। बखता की काव्य-साधना से प्रभावित होकर महाराजा अभयसिंह ने उन्हें मेड़ता परगने का खाखा नामक गांव प्रदान किया था।[1] यह गांव बखता के वंशजों के पास आज भी विद्यमान है।

महाराजा अभैसिंघ रा अहमदाबाद झगड़ा रा कवित कृति में कवि ने दोनों पक्षों की सेना का पारम्परिक रूप से वर्णन किया है। उदाहरण के लिये एक छप्पय देखिए—

आदि सकति रीझिया श्रोण पीवा तरखाळां।
रुद्र ज्याह रीझिया ऊपर पैरी रुण्डमाळा॥
रिष नारद रीझिया जिकां हासारस थाया।
हूर अछर रीझिया महासूर वर पाया॥
सांभला गीध रिझे सको आभक नराचर ऊपरां।
जीविजे अभा दूजा जगा महा वाद अजमाल रा॥[2]

बखता खिड़िया ने भी वस्तु-वर्णन में विशेष रुचि का प्रदर्शन किया है। सैन्य-सज्जा, घोड़ों, हाथियों तथा ऊंटों की सजावट, नगर सौन्दर्य, प्राकृतिक सुषमा, शिकार आदि के वर्णन अत्यन्त सजीवता के साथ अभिव्यक्त हुए हैं। वस्तु-वर्णन के रूप में कवि की काव्य-प्रतिभा के कतिपय उदाहरण देखिए—

ठांम ठांम सोहिया, धाम जेहा धमळागर।
नाळेरीयां देखतां, बाग तर कूप सरोवर॥

---

१ चारण साहित्य का इतिहास की मर्म परीक्षा—श्री सौभाग्य सिंह शेखावत, पृ० १५-१६

२ श्री सीताराम लाळस के पास उपलब्ध महाराजा अभैसिंघ रा अहमदाबाद रा झगड़ा रा कवित्त कृति की हस्तलिखित प्रति, कवित्त संख्या ११५.

कथ क्रिया द्विज करै, केई जेठी वल तूलै।
केई पिणघट कूजरां, केई पंखा पुर फूलै।।
घर घर अनेक दोलत धणीं, सुख वहुत समाज रो।
सोहे दराज सारीस हर, आज राज महाराज रो।।[1]

वाज वतीत वाजत्र, वाग वेड़ियां विडंगां।
ठांम ठांम ठाकुरां चमू ऊपड़ै लड़ंगां।।
रज अपार ऊछलै पंखी माझले अमूझे।
सेस मत्थ धड़हड़ै, हाथ नैणान सूझे।
जलमले कांहि कादम जुड़ै, कीचवाह कजरी धरा।
कनवज पंगवाळा कटक, कना कटक नवकोटरा।[2]

वखता खिड़िया स्वयं अहमदावाद युद्ध-क्षेत्र में उपस्थित थे। अतः उनकी सूक्ष्म काव्य-दृष्टि से अवलोकित दृश्यों के वर्णन में वीर रस का अत्यन्त जीवन्त-चित्रण एवं सुन्दर परिपाक परिलक्षित होता है—

गडड नाद गांजीया, दडड गोळीयां अपारां।
घडड आभ धरत्तरी, जडड कुंजरां जयारां।
बडड बांण वेवड़ा, कडड खांचता कवांणां।
फडड ज्यार फीफरां, खडड केमरां खतांणां।

रिख हडड वडड अस दडड रत, वडवड अंबर वधावणां।
गडगड त्रंबाल तडतड प्रकट, उरड थाट अधियागणां।[3]

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि वखता खिड़िया अपने समय का अच्छा कवि था। अपनी लघुकाव्यकृति में कवि ने प्रभावोत्पादक कही जाने वाली समस्त काव्य विशेषताओं का समायोजन प्रस्तुत कर काव्य-प्रणयन प्रतिभा का दिग्दर्शन करवाया है। महाराजा अभैसिंघ रा अहमदावाद रा झगड़ा रा कवित्त के अतिरिक्त, समसामयिक योद्धाओं पर कविप्रणीत स्फुट रचनाए भी उपलब्ध हुई हैं।

---

१. महाराजा अभैसिंघ रा अहमदावाद झगड़ा रा कवित्त, हस्तलिखित प्रति, कवित्त संख्या ४६.
२. वही
३. महाराजा अभैसिंघ रा अहमदावाद रा झगड़ा रा कवित्त की हस्तलिखित प्रति, कवित्त संख्या १०४

खेतसी सांदू—

कविराजा करणीदान और वीरभांण के समकालीन कवियों में खेतसी सांदू का प्रमुख स्थान माना जाता है। ये जोधपुर के महाराजा अभयसिंह के आश्रित थे।[१] तलवार और कलम के धनी कवियों—करणीदान एवं वीरभांण के साथ ये भी अहमदाबाद के युद्ध में महाराजा के साथ थे। ये सांदू शाखा के चारण और नाथुसिंह सांदू के पुत्र थे।[२] डॉ० मोतीलाल मेनारिया ने भी इन्हें सांदू शाखा का चारण माना है[३] परन्तु श्री अगरचन्द नाहटा ने अपने लेख भाषा भारत की ऐतिहासिक प्रशस्ति[४] में एक प्रति का उल्लेख कर खेतसी को गढ़वी खिड़िया बतलाया है। कवि करणीदान ने अपने सुप्रसिद्ध ग्रंथ 'सूरजप्रकास' में खेतसी के सांदू होने का उल्लेख करते हुए लिखा है—

सुतरण 'नाथ' 'खेतसी' वदे सांदू खग वाहण।
'वखतौ' खिड़ियौ वदै, रचूं 'अमरा' जैही रण।।

खेतसी द्वारा निर्मित प्रसिद्ध ग्रंथ 'भाषा भारत' की उदयपुर वाली प्रति से भी इनके सांदू शाखा के होने की पुष्टि होती है। खेतसी का पूरा नाम खेतसिंह था परन्तु अपने काव्य में उन्होंने सर्वत्र अपने नाम के अन्तिम दो अक्षरों का ही प्रयोग किया है।

अपनी सुप्रसिद्ध ऐतिहासिक काव्यकृति 'भाषा भारत' में कवि ने महाभारत की ऐतिहासिक कथा का राजस्थानी पद्य भाषा में बड़ा सुन्दर अनुवाद किया है। यह लगभग १३००० छंदों का एक भारी ग्रंथ है। इसकी गणना डिंगल के प्रथम श्रेणी के ग्रंथों में की जाती है।[५] इसका रचनाकाल संवत् १७६० के आसपास माना जाता है। ग्रंथ की समाप्ति सं० १७६० में हुई। इसका उल्लेख करते हुए कवि ने अपने ग्रंथ में लिखा है—

सतरमै सामंत वरस नेउवै वसेरवण। कवि मुर वरखे कय भारथ संपूरण।।
रेसाखह वदि विवध तिथ एकम आलोकत। भोमवार निधार निरत राव स चाहत।।

---

१. राजस्थानी सबद कोस—श्री सीताराम लालस (प्रथम खण्ड), पृ० १६०
२. वही, पृ० १६०
३. राजस्थानी भाषा और साहित्य— डॉ० मोतीलाल मेनारिया, पृ० २४५
४. राजस्थान भारती : सार्दूल राजस्थानी रिसर्च इन्सटीट्यूट बीकानेर, अंक १-२
५. चारण साहित्य का इतिहास — डॉ० मोहनलाल जिज्ञासु, पृ० २३४
६. राजस्थानी सबद कोस (प्रथम खण्ड) — श्री सीताराम लालस, पृ० १६०

उतरांण भांण वरनन अगम दिस दिखण विचारि उर ।
कवि 'सीह' परम महिम कही कुर पंडव क्रम जुत दुकर ।

'भाषा भारत' को डिंगल की श्रेष्ठ रचना माना जाता है । कवि ने साहित्यिक डिंगल का प्रयोग कर मोतीदामं, हनूफाल, दूहा, कवित्त और चौपाई आदि अनेक छन्दों से काव्यकृति को आकर्षक एवं प्रभावोत्पादक बना दिया है। ग्रंथ के कुछ उदाहरण देखिए–

वेद व्यास धुरि वरिणि, अनन्त अवतार उदाहरण।
कजि संसारि उधारि, वेद किय चार प्रकारह ।।
जै भारथ भाषियों, निगम पंचहमो वायण।
जगत हेत जुग कियौ, वले भागवंत पुरायण ।।
सति मात सतीपित धूम जिह, संतति सुप वाचा विमळ ।
जिह कियौ परीषत त्रिपत कूं, नभगामि रिष श्राप कलि ।।

तर भेळप सुख मिळत, निसा भेळम तप नाहिन ।
जळ भेळप मळ घटत, सतह पुरखां चित चाहिन ।
पंडित भेळप प्रगट, मनह हरिनांम पियासै ।
गुणीयां भेळप गुणी, विमळ बुद्धि वधण विकासै ।
महिमा समंद जादव निमळ, देखत व्रन आणंदीयौ ।
कवी सीह हठी भेळप करे, भाखा दध पारह भयौ ।।[१]

आसकरण —

परमेश्वर के परम भक्त और विद्वान-कवि आसकरण जोधपुर के महाराजा अभयसिंह के दरबार में एक सम्मानीय सदस्य थे ।[२] आसकरण पुष्करणा गौत्र के ब्राह्मण तथा मारवाड़ के सोजत कस्बे के निवासी थे । इनके पिता जयराम पुरोहित, महाराजा अजीतसिंह के समसामयिक तथा अपनी जाति के सुप्रसिद्ध व्यक्तियों में से थे। राजनीतिज्ञ होने के साथ-साथ जयराम शूरवीर योद्धा भी थे । अनेक युद्धों में उन्होंने अपने बाहुबल का परिचय दिया था। उदाहरण देखिए—

१. कविराज श्री तेजसिंहजी, जोधपुर के निजी संग्रह से.
२. राजस्थानी साहित्य सम्पदा-श्री सौभाग्य सिंह शेखावत पृ० ५६

झालर रा झणकार, जग में अजं जमाविया।
हुरमांवाळा हार मान वीभळी महीपती।।
रजधारी रजपूत, अजमल असूर अहारिया।
तुरकां रा तावूत गंज कीया गजसिंध हर।।[1]

अपने समसामयिक कवि करणीदान कविया द्वारा जोधपुर-नरेश अभयसिंह की अहमदावाद-विजय पर निर्मित काव्य-ग्रंथ 'सूरजप्रकास' तथा 'विड़द सिणगार' के काव्य-कौशल पर प्रभावित कवि आसकरण ने लिखा है—

कवि ने किसुं कहीजै कीरत, लाखां मुंहि सौभाग लहै।
वहै न कदै वडाई वारणी, कविया करणीदान कहै।।
गीते गुणे गुणां की गावै, घणा घणी जोह जपै घणा।
दिन दिन कला प्रदीपे दीपै, प्रभतपाल विजपाल तणा।।
गाहे गिणै न आवै गिणती, सुवस वसै सतरूप सराय।
जोड़ै वीया तिका थित जावै, नाथ हरा जस आथ न जाय।।
चढ़ती वेस करीने चढ़तै, सकजां सकज सभाव सधीर।
अवर देख औरतों आंणै, वीसां सौ अंजसै वर वीर।।[2]

महाराजा अभयसिंह के जीवन-काल में लड़े गये प्रमुख युद्धों का कवि आसकरण ने अपने विविध गीतों में वर्णन किया है। आसकरण के गीतों में वर्णित घटनाओं तथा समसामयिक विवेचनों से कवि का रचना काल सं० १७७५ से १८०४ के बीच ठहरता है।

जोधपुर-नवेश के शोर्य-वर्णन सम्बन्धी गीतों तथा भक्ति सम्बन्धी फुटकल दोहों के अतिरिक्त कवि आसकरण द्वारा जगदम्बा की स्तुति में निर्मित एक कवित्त और दस दोहे भी उपलब्ध हुए हैं। इनमें शक्ति की अधिष्ठात्री देवी योगमाया की महीमा का सरस वर्णन किया गया है—

झळहळे झिलकत झूल में, जोगण जोग जुगत।
महिमा कव केही मुथे, सोखण सत्र सगत्त।।

---

१. श्री हनुवन्तसिंह देवड़ा, प्रोड्यूसर, राजस्थानी विभाग, आकाशवाणी जोधपुर के पास उपलब्ध हस्तलिखित प्रतिलिपि से.
२. राजस्थानी साहित्य सम्पदा-श्री सौभाग्य सिंह शेखावत, पृ० ५६

पीरदान लालस—

ये लालस शाखा के चारण और मारवाड़ राज्य में स्थित शेरगढ़ परगने के जुड़िया नामक ग्राम के निवासी थे। कवि के जीवन तथा माता-पिता के सम्बन्ध में कोई प्रामाणिक विवरण प्राप्त नहीं होता। ये शान्त प्रवृत्ति के भक्त-कवि थे। इनके गीत 'साईया झूला' का उल्लेख कर श्री सीताराम लालस ने इनका रचना-काल संवत् १७९२ के आसपास ठहराया है।[1] कवि की सन् १७३४ की लिखी हुई ७ रचनाएं उपलब्ध होती है, जो राजस्थानी शोध संस्थान, चौपासनी जोधपुर में संग्रहीत है—

१ अलख अराधना, २ ज्ञान चरित्र,
३ गुण नारायण, ४ नारायण नेह,
५ गुणअजपाजाप, ६ दूहा आराधना रा ओर
७ परमेसर पुराण,

भक्ति काव्य की भाषा-शैली तथा परिमाण के आधार पर पीरदान को श्रेष्ठ भक्त कवि कहा जा सकता है। कवि ने विविध शैलियों में भक्ति-भावना की अभिव्यक्ति की है। 'अखल आराधना' का उदाहरण देखिए—

अला तूझ उवारण जयो जगदीश जुरारी,
नहर गुरु हरनाथ निमो निकलंक विजारी।
कन्हैया कांन्हुआ निमो निकलंक नरसेर,
ग्वाल निमो ग्वालिया साच साथे सारगंधर।
राजि नां किसी परि रीझवा राज वडा राधारमण,
'पीरियौ' तूझ दाखे प्रभू मूझ निवाजे महमंहण।

गुण-नारायण में चौपाई छंदों की छटा दृष्टव्य है—

'ईसाण द गुरु चित्त में आेणा वेद व्यास न पछे वखाणा ॥
समरां प्रथिमि सारद ना। निमिषकार ब्रह्मा नारद ना ॥
लीला विलास सुरां मंलाइ कि। निमो पुलन्दर देव वे नायको ॥

कवि ने परम पिता परमेश्वर की सत्ता को सर्वोपरि माना है। ज्ञान-चरित्र में कवि ने ईश्वर की आनन्त, असीम एवं अलोकिक विशेषताओं का वर्णन करते हुए लिखा है—

---

१ राजस्थानी सबद कोस-भाग १, श्री सीताराम लालस, पृ० १६०.

अनंत अनंत सही अनंत, अनंत पौरपि पराक्रम ।
अनंत एक अनेक, अनंत बहु भांति वड़ा क्रम ।।
अछतो छतौ अनंत, नाम विण अनंत निरगुण ।
गुण समिपो गौरिजा गोरी तू विना नूहे गुण ।।
अहि अमर रुपेज़र नर असुर, पहुचि तूझ राखे प्रघल ।
हूं मोहि रिव कर मायाहि में, वयण तूझ दीजै विमल ।।

सत्य पर असत्य और न्याय पर अन्याय हावी होने लगता है तथा भक्तों पर जब अनाचार के श्यामल मेघ मंडराने लगते हैं-तब-तब संकट-मोचन ईश्वर अपनी रक्षक प्रवृत्ति के माध्यम से जगत् में व्याप्त अनीतियों को मिटाकर अपने भक्तों के सम्मान की रक्षा करता है। गुण-अजंपाजाप में कवि ने ईश्वर की भक्त-वत्सलता की सराहना में इसी प्रकार के उद्‌गार व्यक्त किये है —

भगव तुम्हारा सही भला, मिलै अरिजण भीम ।
भगति दिये जो मूदरा, ती तोनू तसलीम ।।
तनां कहो छो त्रिकमा, दरवलन करि दास ।
कांने करिहों केशवा, परमेसर जम पास ।।

कासीराम छंगाणी—

राजस्थानी साहित्य की अद्यावधि ज्ञात रचनाओं में कवि कासीराम छंगाणी प्रणीत रचनाओं का सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थान है। इनके द्वारा निर्मित रचनाओं में से अनोपकुल वर्णन ग्रन्थ अत्यन्त उपयोगी ग्रन्थ है। अब तक सर्वथा अज्ञात रहे कवि कासीराम और उनकी रचनाओं का इस पुस्तक में प्रथम वार प्रकाशन हो रहा है। इतिहास तथा साहित्य की दृष्टि से अत्यन्त महत्वपूर्ण कृति अनोपकुल वर्णन में बीकानेर राज्य का काव्यबद्ध इतिहास संकलित है। इस ग्रन्थ में कवि ने बीकानेर के संस्थापक बीकाजी से लेकर वि. सं. १७४१ तक की महत्वपूर्ण घटनाओं का तिथि-संवतानुसार विवरण दिया हैं। प्रत्येक शासक का नाम और तत्सम्बन्धी महत्वपूर्ण घटनाओं का प्रामाणिक विवरण देने वाली यह प्रथम ऐतिहासिक काव्य रचना है। राजस्थानी साहित्य में अब तक ज्ञात रचनाओं में इतिहास तथा काव्य का ऐसा अनूठा सामंजस्य दृष्टिगत नहीं होता। कासीराम छंगाणी द्वारा निर्मित इस ऐतिहासिक ग्रन्थ का सृजनकाल वि. सं. १७४१ है—

सतरे सै इकताल मास वैशाख निरम्मल।
धवल पक्ष तिथ त्रीज, वले निरमल ससिवासर।

दत्त सुमत गणेस, दई सरसत सु वाणी ।
किव अनोप कुल व्रंन ग्रंथ कासी छंगाणी ।।[1]

ऐतिहासिक और साहित्यिक दृष्टि से अत्यधिक महत्त्वपूर्ण इस ग्रन्थ के रचयिता कवि ने अपने जीवन वृत्त से सम्बन्धित कोई विवरण प्रस्तुत नहीं किया। कवि द्वारा लिखी रचनाओं के आधार पर इनका रचनाकाल वि. सं. १७३० से १७५० के मध्य स्थिर होता है। कवि बीकानेर नरेश अनोपसिंह का कृपापात्र था। अनोपकुल वर्णन ग्रन्थ का आरम्भ कवि ने गणपति और सरस्वती वन्दना से किया है—

नमो नाथ इभ वदन, रदन इक सदन वुद्ध सुख ।
गवरनंद गणपत्त, दत्त रिध हत्त दरिद्र दुख ।।
प्रवल पिण्ड खलखंड, सुण्ड सिंदूर समुज्जल ।
फरस पाणि अधि हाणि भाण वप कोटिस उज्जल ।।
सुर असुर नाग नर भु मंडल, प्रथम अर्घ मंगल करण ।
जय जय सुदेव कासी प्रणाम, लंवोदर असरण सरण ।।[2]

बादशाह शाहजहां की अस्वस्थता के समय उत्तराधिकार के लिए विद्रोही शाजादों द्वारा लड़े गये युद्धों का कवि ने अत्यन्त प्रभावशाली भाषा-शैली में चित्रण किया है—

सतरेसै चवरोतरे, साहिजहां पतिसाह ।
असुरांपत अरधंग हुय, रहे दिसा दिसराह ।।
धूंध मचे सारी धरा, हिंदू मुसलमाण ।
सहिजादा भड़ि सभीया, प्रवलां पांणो पांण ।।
धर पुरव सूजो धणी, महि गुजरात मुराद ।
दारो भड़ि दिल्ली तपे, नरपत साहा नाद ।।
धर दखण ओरंग धणी, रहे फकीरां रीत ।
सहि सोवा निज वस किया, नूर मुखै भैभीत ।।

बीकानेर-नरेश करणसिंह का यश उस समय चरम-उत्कर्ष पर था।

---

१. श्री सौभाग्य सिंह शेखावत के पास कवि कासीराम छंगाणी की रचना की प्रतिलिपि, पृ० १०७.

२. वही, पृ० १.

करणसिंह के नाम से शत्रु थरथराते थे। बीकानेर-नरेश के पराक्रम का उल्लेख करते हुए कवि ने लिखा है—

डरे मुगल्ल मयमत्त, डरे परचंड पठाणां।
डरे राण हिंदवांण, डरे सोवा थट थाणां।।
डरपे साहिजहांन, डरे दारा सुजाणा।
मन संकोच मुराद, पड़े दिल्ली भग्गाणा।।
ध्रुब सोर उठे सारी धरा, खग वाहो ओरंग खरो।
तिण वार एक करणो अभै, राजा बीकानेर रो।।

वि. सं. १७१५ में घटित घटना का ऐतिहासिक वर्णन करते हुए कवि ने लिखा है—

सतरेसै पन्हरोतरै, जेठ सप्तमी जांण।
करन पधारे बीकपुर, नौबत धुरे निसांण।।

औरंगजेब के सिंहासनारूढ़ होने की घटना का शब्दचित्र देखिए—

मांडी थाप मुराद वे, आयो खडि ओरंग।
उजैणी जसवंत सूं, जोध मचावण जंग।।
लड़ि भग्गो मंडोवरो, ओरंगजेव अभंग।
भिड़ि दारो पिण भंजियो, जुड़ि जीता रिण जंग।।
ओरंग दिल्ली आवियो, घणा करे गजगाह।
माथे छत्र मंडावियो, हुइ बैठो पतसाह।।
तिण वेला हिंदू तुरक, लियण महला कज्ज।
असुर दरगह आवियो, गढ़पत आप गरज्ज।।

वि. सं. १७२६ में महाराजा अनोपसिंह गद्दी पर बैठे। अपने चरित्र-नायक अनोपसिंह के गौरवपूर्ण व्यक्तित्व का चित्रण करते हुए कवि ने लिखा है—

संवत सतरेसै वरस, वलि आगल छावीस।
सुद आसू दसमी श्रवण.............................।।
विक्रमपुर बीके तखत, नौबत घुरे नीसांण।
बैठों पाट महाबली, भूप अनो कुल भांण।।
मेघाडंबर छुल चंवर, सींघांसण सोभंत।
प्रतपै पाट अनोपसंघ, इन्द्र जिसो ओपंत।।
वेद वचन सासत वयण, रची विध प्रतपाल।
इव अनोप बैठो तखत, भीम भुजो भूपाल।।

मरहठों के साथ भयंकर युद्ध कर शूरवीर अनोपसिंह ने अपूर्व शौर्य का परिचय प्रस्तुत किया था। अद्वितीय योद्धा हनुवन्तसिंह ने मरहठों के साथ सम्पन्न इस युद्ध में शत्रुओं के दांत खट्टे कर दिए—

माण छाड मुगलाण, हार ऊभा सहि कांने।
हणवंतो गहपूर, नाळ गोळा नह मांने॥
ताम निवाव सचंत, तेड़ कहियो छोगाळा।
ले लीजै हणवंत जोध करणाजळ वाळा॥
धधकार सेन चढ़ियो कमंध, कोट भांज कण कण कियो।
मरहठा मार राजा अनै, हणवंत इहिं विध लियो॥

वि. सं. १७२९ में महाराजा अनोपसिंह ने नासिक में मरहठों का मान-मर्दन किया था। इस घटना का विवरण देखिए—

हणवंतों रासाहरे, लियौ अनै भूपाल।
जल नव खंडे जंपियो, त्रहके जस त्रंवाल॥
सतरे सै गुणतीस मझि, भूप अनै कुल भाण।
सूवो ले नासिक तणो, मळे सिवे चा माण॥

वि. सं. १७३१ में मरहठा शासक शिवराज पुनः युद्ध की व्यापक पैमाने पर तैयारी करने लगा—

सतरे सै इकतीस मझि, हुय कळहळ चहु [illegible]ण।
धूंध गनी में मंडिया, धर दखण धक धूंण॥
सैन फिरे सिवराज री, कर घूमर केकाण।
चौथ लिये चौरंग रचे, मळे मुगल्लां माण॥
ताम वहादर तेड़ियो, भूप अनो कुल भांण।
मान सिवेचा तूं मळे, मारु अमळीमाण॥

मरहठों की उत्तरोत्तर वढ़ रही शक्ति तथा युद्ध-प्रवृत्ति से महाराजा वीकानेर क्रुद्ध हो उठे। गंगा के किनारे युद्ध हेतु मरहठा-सेना के पड़ाव डालने की घटना और उसके परिणाम का शव्दचित्र देखिए—

पाटण घेरी मरहठा, चढि गंग किनारी।
सुणी अनोपम महावळी, किव सेन तियारी॥
भूप भुजाळो सझीयो, थापी असवारी।
खाँन कुतुव पठांण सझि भड़ पंचहजारी॥
उभे पहुंता खैग खड़ि प्रतिठान उवारी।
माल अन्नगळ वेचीया ग्रह ग्रह व्यापारी॥
पाटण मांझि प्रगटीया अति उछवकारी।

ताम सिवो भाजे गयो सेना ले सारी ।।
लार लसकर दौड़ीया, ले वाग करारी ।
चढे कमंध पठारा रळि, सझि सेन सुवारी ।।
वहै विन्हैदळ वायवड़, दिन रेरा अंधारी ।
वे वासर इम गुदरे, लगत्रीज तयारी ।।
खान कुतुवो हट्टियो, हुय उभौ लारी ।
ताम अनै करनेस रैं, सेना धधकारी ।।
खैंग नित्रीठा खेड़ीया, कमधज तींवारी ।
जाइ पहुंतौ जोरवर जुध मंडन भारी ।।
फौज मरहठा फेर ताम सनमुख सुवारी ।।

दूहा

देठाला दहुवां दळां, हुय कलहल केकाण ।
सूरा सार संवाहियां, मचरा रोद घमसाण ।।

मरहठों और राठौड़ों के मध्य लड़े गये इस घमासान युद्ध का अनोपकुल वर्णन ग्रन्थ में अत्यन्त सजीव चित्रण किया गया है : युद्ध-क्षेत्र में शूरवीरों तथा घोड़े-हाथियों के क्षत-विक्षत शव बिखरने लगे । तीर, तलवार और गोलों के प्रहारों से सैनिकों के अंग-प्रत्यंग गुब्बारों के सदृश उछलने लगे, रक्त के फव्वारों से युद्ध-भूमि रक्तप्लावित हो गई । कवि कासीराम द्वारा प्रस्तुत इस घमासान युद्ध की वीभत्सता का जीवन्त-चित्र दृष्टव्य है—

वहि गोळां वंदूक, तीर वाण छूटा तरै ।
करां भळक्के रूक, कमंध लड़े भारथ करै ।।
रुके रिप रोद मची धंम रोड़ि । फुटे भड़ अंग वगत्तर फोड़ि ।।
कटे फर फेफर कोपर कंध । धमीड़ गदा भड़ ऊधड़ अंग ।।
लड़े भड़ ओभड़ त्रिभड़ लग्ग । पड़े कर पींडिय पग्ग अलग्ग ।।
तड़फ्फड़ जोध लुटे अंग तुट्ट । जरंज्जर जोध पड़े रिण जुट्ट ।।
वहै सर वाण विन्है विकराळ । मरद्द गरद्द करै किरमा ।।
पड़े भड़ वाजि रिणे अणपार । घणां अंग भांज पडंत वधार ।।
सचाळ त्रवाळ वणी ध्रुव सद्द । राठौड़ मरहठां माच खद्द ।।

परस्पर आक्रमण-प्रत्याक्रमण के फलस्वरूप समरांगण में लाशों के ढेर पहाड़सम दिखाई देने लगते हैं । अद्भुत रण कौशल से युद्ध करते स्वाभिमानी योद्धा हंसते-हंसते मृत्यु का वरण करने लगते हैं । शूरवीरों के आत्मोत्सर्ग से मोहित हो अप्सराएं उनका वरण करने के लिए लालायित हो उठी । शस्त्रों के प्रहारों, घोड़े-हाथियों की चिंघाड़ों तथा शवों के ढेरों को देख योगिनियां आत्मविभोर हो उठी । भरपूर रक्त पान कर योगिनियां नृत्य करने लगी । कवि द्वारा युद्ध वर्णन

हेतु प्रयुक्त एक-एक शब्द वर्णित-दृश्य को मूर्तिमान बनाने वाला है। शूरवीरों के आश्चर्यजनक कार्यकलापों तथा हंसते-हंसते मृत्यु के आलिगन-पर्व का वर्णन पढ़-सुनकर आश्चर्य से आंखे खुली रह जाती है—

प्रब्बळ जोध अनो भूअपाल । खळा दळ भांज करे खेंगाळ ।।
झड़झ्झड़ ओझड़ त्रिझड़ रुक । वड़व्वड़ जोध हुवै विवि टूक ।।
कड़क्कड़ हाड वहै किरमाण । दड़द्दड़ लोथ पड़े भड़दांण ।।
चड़च्चड़ चाचर ईस सुगंत । वड़व्वड़ अच्छर वींद वरंत ।।
हड़हड़ड़ नारद वीर हसंत । गड़ग्गड़ जोगणी श्रोण पिवंत ।।
रळत्तळ अंव जिहीं रुहिराळ । खलक्क चले फिर भाद्रव खाळ ।।

अनोपकुल वर्णन ग्रन्थ वस्तुतः एक ऐतिहासिक काव्यकृति है जिसमें महाराजा अनोपसिंह के शासन काल तक की युद्ध-विजय घटनाओं का ऐतिहासिक विवरण संकलित है। कवि कासीराम छंगाणी साहित्यकार होने के साथ-साथ प्रवुद्ध इतिहासकार भी थे। अनोपकुल वर्णन ग्रन्थ में काव्य एवं इतिहास का अद्वितीय सुनियोजन कवि को राजस्थानी साहित्य का सर्वश्रेष्ठ कवि और इतिहास-विद् सिद्ध करता है।

अनोपकुल वर्णन ग्रन्थ के अतिरिक्त कासीराम छंगाणी द्वारा प्रणीत वारह मासा वर्णन तथा समसामयिक योद्धाओं के शौर्य गीत भी राजस्थानी साहित्य के मूर्धन्य साहित्यकार, समालोचक एवं इतिहासविज्ञ श्रीयुत सौभाग्यसिंह शेखावत के पास उपलब्ध हैं। इन रचनाओं की भाषा शैली कवि के पाण्डित्य का प्रशस्तिगान गाती प्रतीत होती है। वारह मासा वर्णन में कवि ने वारह महिनों का अत्यन्त हृदयग्राही शब्दचित्र अंकित किया है। वारहमासा वर्णन के कतिपय उदारहण देखिए—

वैसाख

वैसाख मास वसंत विळसै पुहुप फळ पत्रावळी।
वह भांत सेंज वणाय फूलां नार नर माणे रळी।।
मकरंद सरस गुलाव परमळ भ्रमर भोगी दिन भरे।
राठौड़ राव

सावण

प्रगटीयो सावण मास परवल वीज चमंके बादले।
झड़ मचे वरसे अंव झरहर खाल चहुदिस खलहले।।
तिहवार तरुवर खेले धरा नीली धणंवरे।
राठौड़ राव

फागण

आवीयो फागण मास इणविध कामिनी उछव करे।
नर नार खेलै फाग होळी रंग पिचकारी भरे।।
दखिणाध छंडे घिरे दिनकर चाव उत्तर चित धरे।
राठौड़ राव

औरंगावाद करणपुरा में निर्मित वारहमासा वर्णन की समाप्ति करते हुए कवि ने इसका रचनाकाल वि. सं. १७४४ ज्येष्ठ मास वतलाया है—

वरणियौ वारहेमास विध विध, प्रवळ राव अनोप रो।
सुभ संमत सतरे सै चंमाले मास जेठ समंछरे।।
पख धवल पूनिम वार मंगल जेठ रिखवर तेजरे।
कर जोड़ कासी कहै कवियण अनो दुख दारिद हरे।।

कवि प्रणीत गीतों में से एक गीत 'खवासु किसंन दासु छंगाणी कासी कहै' यहां प्रस्तुत किया जा रहा है—

मचे रोद धमसांण करनूलगढ़ सनमुखा मुरधरां मुरहठां राठ मातो।

किसंनु उदैतणी ताम केवाण सिर वाहियो तिणवार तातो।।१।।
नीकटे थाट पट झाट नाराजीयां, तड़ड़ गोळां तणी झाड़ वाजै।
मल्हपीयो खवासु पैलां दळां सामु हो, विडंग जगजेठ चडीयो विराजै।।२।।
धीव छंड सेल खग आड़ दड़ दड़ै, प्रवळ खेलां तणी छात्र पड़ीयौ।
हाहाकार हूंकार सारा करे मरहठा, वाहजी अनै रो खवासु लड़ीयौ।।३।।
कमध आभो हूतो कांम तिमही कीयौ, करां साको कोई सदा कहतौ।
सती अपछर विन्है साथ ले साम, ध्रम पिराण चढ़ पाड़ वैकुंठ पहूतौ।।४।।

कासीराम छंगाणी अपने समय के महान् विद्वान एव आत्म-प्रशस्ति से दूर रहकर साहित्य साधना करने वाले व्यक्तियों में से थे। इतिहास की घटनाओं को काव्य का परिधान पहनाकर कवि ने उन्हें अत्यन्त बोधगम्य, आकर्षक एवं प्रभावोत्पादक वना दिया है। उपर्युक्त रचनाओं के अवलोकन के पश्चात् निस्सन्देह कहा जा सकता है कि कासीराम छंगाणी अठारहवीं शताब्दी के सर्वश्रेष्ठ कवि थे। अपने महत्वपूर्ण काव्य के द्वारा साहित्य के साथ-साथ उन्होंने इतिहास की जो श्लाघ्य सेवा की है उसे विस्मृत नहीं किया जा सकता।

कल्याणदास —

कवि कल्याणदास जाति के राव, मेवाड़ के महाराणा प्रतापसिंह के समकालीन तथा अपने समय के प्रसिद्ध कवि बाघा के तृतीय पुत्र थे। कल्याणदास राव बिन्हैरासोकार महेशदासराव के लघुभ्राता थे। अपने पिता बाघा की मृत्यु के पश्चात् कल्याणदास मेवाड़ चले गये और मेवाड़ के महाराणा राजसिंह के दरबार के सम्मानित कवि बन गये। असाधारण प्रतिभा तथा काव्य-कौशल से प्रभावित होकर महाराणा राजसिंह ने कवि को मेवाड़ राज्य में स्थित समेला नामक ग्राम पुरस्कार स्वरूप प्रदान किया था। अपने भक्ति ग्रन्थ 'गुणगोविन्द' में कवि ने समेला ग्राम का उल्लेख किया है —

बास समेळे बाघतण, लाखणौत कलियांण ।
गायो श्रीगोविन्द गुण, पायो भगत प्रमांण ।।[1]

कल्याणदास ने नरकाव्य और भक्तिकाव्य, दोनों प्रकार का काव्य लिखा है। उदाहरणार्थ कवि के कवित्व और रचना शैली पर प्रकाश डालने वाले गीतों में से शूरवीर अर्जुन गौड़ पर लिखा एक गीत यहां प्रस्तुत किया जा रहा है जिसमें युद्ध और विवाह की क्रियाओं में सामंजस्य की स्थापना की गई है —

गीत

ऊजेणि मंडप जुध अवरंग मांड़ै, कगळ केसरियां अजै किया ।
तोरण थया तणां तरवारयां, थांम सावळां तणां थया ।।१।।
गौड़ मोड़ बंध ठौड़ गराजू, राजू सूरति सिरी रढाळ ।
दुलहणि जोय वीठळ री दुलही, मन उलही मेंळै वरमाळ ।।२।।
चतुरंगी गवरंगी चातुर, वर आतुर अजमेरि वर ।
घूंघट ढाल तणां घातिया, भाळी तीछि कटाछि भर ।।३।।
कैंवर बांण जमूर अखति कढि, हाथां कियै जमदढ हथळेव ।
फिरि फिरि अफिरि कियै सुज फेरा, जोगणि घेरा राग जमेद ।।४।।
खेत महळ बीचि रहसि बहसि खगि, तिहसि मिहसि कसि ऊससि ताप ।
लोहां लाट लाल रंग लाडै, घट घट घाट ऊपरै पाव ।।५।।

१. श्री हनुवन्तसिंह देवड़ा, प्रोड्यूसर, राजस्थानी विभाग, आकाशवाणी जोधपुर के पास उपलब्ध गुण गोविन्द कृति की हस्तलिखित प्रति से।

अड़थड़ मिरड़ भिरड़ झड़ अवझड़, नवड़ भवड़ वड़ निवड़ नड़ ।
आवट कूटि तूटि कसणांवट, छूटि जड़ावटि फूटि छड़ ।।६।।
अपछर हर खेचर भूचर अंग, लग आपोपण लाग लिया ।
त्याग दिया अजमल वड त्यागी, कारण वाद मुराद किया ।।७।।
साहां वदै न चूको सावौ, राखै दहुं राहा विचि टेक ।
वड जानी जसवंत वीछड़तां, वींद वींदणी मिळै विसेक ।।८।।[1]

सगता सांदू —

सगता, चारणों की सांदू शाखा के कवि थे । कवित्व के साथ-साथ सगता का व्यक्तित्व वीरत्व के गुणों से अभिभूत था । सगता, जोधपुर के महाराजा अभयसिंह के समकालीन खेरवा के ठाकुर इन्द्रसिंह जोधा के आश्रित कवि थे । खैरवा जोधा-शाखा के राठौड़ों का ठिकाना रहा है : मारवाड़ के मोटा राजा उदयसिंह के पुत्र भगवानदास के चतुर्थ वंशधर भीमसिंह के उत्तराधिकारी ठाकुर इन्द्रसिंह जोधा, जोधपुर नरेश अभयसिंह के कृपापात्र सामन्तों में से थे । यह एक इतिहास विदित तथ्य है कि खैरवा के ठाकुरों ने शाही सैनाओं के पक्ष विपक्ष में लड़े गये सभी युद्धों में जोधपुर के शासकों का साथ दिया था । सगता सांदू प्रणीत 'इन्द्रसिंघ रूपक' ऐतिहासिक एवं साहित्यिक दृष्टि से अत्यन्त उपयोगी रचना है ।[2] ५६७ छन्दों में रचित इस खण्ड काव्य में कवि सगता सांदू ने जोधपुर-वीकानेर युद्ध में अपने चरित्र नायक द्वारा प्रदर्शित अपूर्व शौर्य का परम्परागत शैली में चित्रण किया है । महाराजा अभयसिंह ने सर बुलन्दखां को पराजित करने के वाद वीकानेर राज्य पर आक्रमण किया था । ऐतिहासिक महत्व के इस युद्ध में सैन्य संचालन खैरवा ठाकुर इन्द्रसिंह जोधा ने किया था । युद्ध-क्षेत्र में शत्रु पक्ष की सेनाएं इन्द्रसिंह के आक्रमण के समक्ष हतप्रभ-सी रह गई । अपने चरित्र-नायक के अतुल वल और शत्रुओं के संहार का शाब्दिक चित्रांकन प्रस्तुत कर, कवि सगता ने, अपने काव्य-कौशल का अत्यन्त सुन्दर परिचय प्रस्तुत किया है —

वधै जुध जोध सक्रोध वधार । इन्दै अस हाकळियौ जिणवार ।।
अड़ै भड़ खेह चढै असमान । चमू दहु ऊक उड़ै चौगान ।।
घड़व्घड़ ऊपर तांम ढिगास । पड़ै अर खाग विभाग प्रकास ।।
उठी गजसींह तुरां आरोह । लसक्कर तांम मेळै वे लोह ।।

---

१. विन्हैरासो—भूमिका-सम्पादक श्री सौभाग्यसिंह शेखावत, पृ० ७–८.
२. लेखक के निजी संग्रह में उपलब्ध इन्द्रसिंघ रूपक की हस्तलिखित प्रतिलिपि के आधार पर ।

उठी भड़ इन्द्र तणा अणफेर। सजै गज देख मनो जुध सेर ॥
अरावां झाळ चढै असमांन। भिड़ै धमचाळ अकाळ भयांन ॥
झड़ाझड़ औझड़ बाजै झाट। नरनड़ अनंड़ रूप निराट ॥
कड़ाकड़ व्है वहै किरमाळ। भड़ाभड़ लोह मेळ छक भाळ ॥
धड़ाधड़ छूटत तोप धाव। हड़ाहड़ तांम हसै रिखराव ॥
अड़ाअड़ झुझ मचै उणवार। सड़ासड़ जोध वजावै सार ॥
खड़ाखड़ ढाल ओरै खाग। भड़ांभड़ वीकुपुरा दोइ भाग ॥
पतावत रावत जोस अपार। इन्दो पथ भीम तणी उणिहार ॥

ऐतिहासिक घटना को कवि ने साहित्यिक सूझबूझ द्वारा मनोमुग्धकारी रूप में प्रस्तुत किया है। कवि सगता साहित्य एवं छन्द शास्त्र के पूर्ण ज्ञाता थे, इस कथन को सिद्ध करने के लिए 'इन्द्रगिध रूपक' ही पर्याप्त है। इस खण्डकाव्य में कवि ने १३ गाथा, ११३ दोहे ७३ कवित्त, २५ निशांनी, ७ रसावला तथा बेअक्षरी, नाराच, मोतीदाम, झंपताल और अमृतगति आदि अनेक प्रकार के छन्दों का प्रयोग किया है। अबतक यह कृति अज्ञात-सी ही रही है।

तीरथराम —

ये आशिया शाखा के चारण, मेवाड़ राज्य के निवासी और महाराणा भीमसिंह के कृपापात्र कवि थे। इनका कीरत प्रकास काव्य ग्रन्थ मिलता है जिसमें महाराणा भीमसिंह और उनके पुत्र का वर्णन किया गया है।[1] इस कृति के अतिरिक्त कवि की फुटकर रचनाएँ भी मिलती है जिनमें मेवाड़ के शासकों की शौर्य एवं दान वृत्तियों का स्तुतिगान किया गया है।

कवि तीरथराम द्वारा निर्मित काव्य-रचना भीमसिंह का आतंक का प्रभावोत्पादक वर्णन देखिए –

ठहक नगारों डंका दावयतां ठागले, ओध घोड़ां भडां मिले अगळा।
भीम ऊनाळ वाळो तिरुण भळहळे, सीत परवत द्रोयण गळे सगळा।
ताछ लंकाळ जिम सभे रिणताळ रे, प्रथपत निडर करमाळ पछटे।
तण आस विरद उजवाळ दनकर तपे, बेरहर सिखल हेमाळ बिछटे।
प्रथीरस भोगवे आज मांडां पणा, जुधां गाडां घणा नूर जूटा।
तेम परकास रिध फोज लाडा तणा, टूक जाड़ा तणा दुसह टूटा।

---

१. श्री सौभाग्यसिंह शेखावत द्वारा प्राप्त विवरण के अनुसार.

हरा जगपत सरव जांण भाला हथां, चमू तज माण वीराण चलियां ।
राण हिंदवाण (रा) भांण तप राज रे, गिर वरफ जेम असुराण गलियां ।।[1]

फतहराम —

ये आशिया शाखा के चारण और मेवाड़ राज्य के रहने वाले थे। इनके लिखे हुए फुटकर गीत मिलते हैं हमीरसिंह सीसोदिया की युद्धवीरता पर कथित एक गीत के तीन द्वाले देखिए —

कवि द्वारा वर्णित भीषण युद्ध का दृश्य देखिए –

झंडा फरक्के मदाळां पीठ आरवां नत्रीठा झड़ै, धू पंडां ऊधड़ै वे विवंडां सूरधीर ।
रमे दे घुमंडां वीर मारतुंडां रुके राह, हकै बीच थंडां जठै उडंडां हमीर ।।
रुकां वैंग झालरा घू हालरा दे जोगराणी, घुरे राग काळरा बडाणी वंब घोर ।
असा वीर ख्याल रा मडाणी आप ताप उठै, तठै रिमां सालरा संदाणी वाळो तोर ।।
घावां अंगां वडंगां वेछंगा तंगा वीर घाट, भोम रंगा श्रोण हूंत नारंगा भेवान ।
जोध चंगा वारंगां सुरंगां वींद वरे जठै, अभंगां सीसोद भुजां अड़ै आसमान ।।[2]

वयण सगाई का सुन्दर प्रयोग कवि के पांडित्य का परिचायक है। शब्द-चयन की सतर्कता ने युद्ध के दृश्य में सजीवता का निरुपण करने के साथ-साथ युद्ध की भीषणता को भी बढ़ा दिया है।

तेजराम—

ये मेवाड़ राज्यान्तर्गत् भदेसर ग्राम के निवासी तथा आशिया शाखा के चारण थे। इनके फुटकर गीत मिलते हैं। उदाहरणार्थ सालिमसिंह के पुत्र वीरवर हमीरसिंह के एक गीत की कुछ पंक्तियां देखिए —

सफ्फै गैजूह लोहां के वरा तड़फ्फे सूर ।
वड़फ्फे खेतरां रंभा झड़फ्फै वेवाण ।।
महावेग वहिया गनीम अद्र तणे माथे ।
क्रोवंगी हमीर वाळी दामणी केवाण ।।

---

१. श्री सौभाग्यसिंह शेखावत के निजी साहित्य संग्रह में उपलब्ध 'भीमसिंह का आतंक' कृति की हस्तलिखित प्रति के आधार पर.
२. चारण साहित्य का इतिहास–डॉ० मोहनलाल जिज्ञासु, पृ० २७३–२७४.

नीर वजे आसेर चढ़ायो सालमेस नन्द ।
सोभा चाहूं फेर चाहयौ प्रवाडे सनीम ॥
ओभलाणो थारी समेसर छटा तणी आगे ।
मेर फेर फूल पत्रां न आवे गनीम ॥[1]

युद्ध का वर्णन अत्यन्त सजीव एवं प्रभावोत्पादक है । वयण सगाई के प्रयोग से काव्य के सौन्दर्य में वृद्धि हुई है ।

वा—

ये पातोजी के पुत्र और रोहड़िया शाखा के चारण थे । उनका जन्म मारवाड़ राज्य में स्थित जालीवाड़ा ग्राम में हुआ था । कालान्तर में ये मारवाड़ से किशनगढ़ चले गये । किशनगढ़ में इन्हें रारो नामक गांव पुरस्कार स्वरूप प्रदान किया गया । इनके फुटकर गीत मिलते हैं । ये महाराजा सामंतसिंह के कृपापात्रों में थे । सामंतसिंह स्वय ब्रजभाषा के प्रसिद्ध भक्त कवि माने जाते हैं । अपने आश्रयदाता किशनगढ़ के महाराजा सामन्तसिंह राठौड़ की प्रशंसा में कवि कहता है कि किशनगढ़ नरेश ईश्वर-भक्त, सत्य-वक्ता, संतों का आश्रयदाता तथा असहायों को सम्बल प्रदान करने वाला है—

महाराज धन करण कारज मुगतो माग रो, तजे मन दगत मद लोभ तरसा ।
कमंध उग्रभाग रा जगत बरळा केयक, सांत्रता हर भगत आप सरसा ॥
जनक प्रहलाद अकरुर ऊधव ज्यूंही, नृपत जुजठळ ज्युंही हरी नेहा ।
नजर नजदीक सरदार दीष्ठा नक्रौ, जोध भजनीक अळ तूझ जेहा ॥
सत बरत संत अवलंब असरण सरण, धनो पंकज-चरण चीत धारा ।
बसन रा आप जूं कसा खत्रिया वरण, राम समरण करण वार सारा ॥[2]

नन्दलाल[3] —

ये भादा शाखा के चारण और मेवाड़ राज्यान्तर्गत् साकरड़ा नामक ग्राम के निवासी थे । इनकी फुटकर रचनाएं मिलती हैं ।

---

१. चारण साहित्य का इतिहास – डॉ० मोहनलाल जिज्ञासु, पृ० २३४.
२. डॉ० पुरुषोत्तमलाल मेनारिया के निजी संग्रह से.
३. श्री सौभाग्यसिंह शेखावत के निजी संग्रह में उपलब्ध कवि नन्दलाल के काव्य की हस्तलिखित प्रति के आधार पर ।

कुरावड़ (मेवाड़) के रावत अर्जुनसिंह चूंडावत की शूरवीरता की प्रशंसा में कवि लिखता है —

खत्री ध्रम रथ कलण खुचियो, असह घाट उचांड,
धूज धजवाड़ तंड धवळा, मरद जूसर मांड ।
राड़ रा लेयण उधारा रावत, केवियां हण कोप,
विखम खंडां धार वरसै, रधू भण्डा रोप ।।

मेवाड़ के महाराणा अरिसिंह के विरोधी रत्नसिंह के सम्बन्ध में मेवाड़ के सामन्त-सरदारों को चेतावनी देते हुई कवि नन्दलाल ने लिखा है-

जण रो जनम जको कुण जाणे, दाई कसी जणाइ दियो ।
सतवादियां पुरसां सुरां, कठेई फतूरा राज कियो ।।

सबळदान—

ये लाळस शाखा के चारण, जोधपुर राज्य में स्थित पचपदरा परगने के खनोडा नामक ग्राम के निवासी तथा महाराजा वखतसिह के समकालीन थे ।[१] वाल्यकाल में ही इनके पिता की मृत्यु हो गई थी। ये जन्म से ही मूक थे। ऐसा कहा जाता है कि जंगल में गायों को चराते समय एक साधु के पानी पिलाने से इन्हें ज्ञान तथा वोलने की शक्ति प्राप्त हुई। साधु द्वारा की गई अनुकम्पा की प्रशस्ति में कवि ने निम्न सोरठा लिखा—

गोरख गूदड़ियाह, ताला मुख जड़िया तके ।
वचन ऊघड़ियाह, भांग तणो रंग भारती ।।
कान दलो भीमा सुकव, सवळो कियो सनाथ ।
जालंधर अद्य जालणा, नगो चारणानाथ ।।

पोकरण के ठाकुर देवीसिह इनके काव्य से वहुत प्रभावित हुए। शीघ्र ही ये पोकरण-ठाकुर के कृपापात्र वन गये । सवळदान ने 'भमाल ठाकुरां देवीसिंह पोकरण री' नामक काव्य कृति का निर्माण किया। उदाहरण देखिए —

भाण न ऊगै भोमगां, आगे जस ऊगंत । सूरां साधक तिण समै, पीछे गीध चुगंत ।।[२]

कवि की कुछ फुटकर गीत – रचनाएं भी मिलती हैं।

---

१. चारण साहित्य का इतिहास – डॉ० मोहनलाल जिज्ञासु, पृ० २४२
२. डॉ० शक्तिदान कविया के निजी संग्रह में उपलब्ध 'भमाल ठाकुरां देवीसिंह पोकरण रा' की हस्तलिखित प्रति से.

जीवा—

भादा शाखा में जन्में कवि जीवा मेवाड़ के निवासी थे। उनके फुटकर गीत मिलते हैं। बूंदी के रावराजा अजीतसिंह द्वारा छल-कपट से १७७२ में मेवाड़ के महाराणा अरिसिंह (तृतीय) को मार डालने के दुष्कृत्य की निन्दा करते हुए कवि ने लिखा है कि यदि अजीतसिंह शूरवीर क्षत्रिय की भांति तलवार उठाकर महाराणा को ललकार कर युद्ध करता तो निःसंदेह लोग उसे पराक्रमी कहते —

भुजां धारियो ने खाग तें वाकारियो न वाघ भूरो,
करग्गां प्रहारियो दगा सूं आणे कूंत।
अेकाअेक नाखां वातां हारियो धरम्म अजा,
हींदूनाथ मारियो विसासघात हूंत।
रुकां धाय जातो तानें इलारा वदंता राव,
दीठ आय जातो जे नगारो चाड देते।
तठे भेह लडस्सी दगा रो पाय जातो तो, तो,
खाय जातो अड़स्सी जगारो चोड़ै खेत॥[1]

हुकमीचन्द —

उच्चकोटी के डिंगल गीतों को लिखकर काव्याकाश में देदीप्यमान हो जाने वाली महान् विभूतियों में खिड़िया शाखा के चारण कवि हुक्मीचन्द का प्रशंसनीय स्थान है। इनके जीवनवृत्त पर प्रकाश डालने वाली प्रमाणपुष्ट सामग्री उपलब्ध नहीं होती। अतः कवि के रचनाकाल निर्धारण हेतु समसामयिक साहित्यकारों एवं हुक्मीचन्द के काव्य में वर्णित चरित नायकों के कार्यकलापों की ऐतिहासिक सामग्री का आश्रय लेना पड़ता है। कवि द्वारा निर्मित गीतों का ऐतिहासिक विवेचन इनको वि० सं० १८१० से १८६० समयावधि का कवि निर्धारित करता है। अद्यावधि उपलब्ध गीतों के आधार पर कहा जा सकता है कि हुक्मीचन्द का सम्पर्क विशेषकर किशनगढ़, शाहपुरा, बूंदी और जयपुर राज्यों से रहा। महाराजा ईश्वरीसिंह के देहावसान के पश्चात् ये महाराजा माधवसिंह प्रथम के राज्यारोहण के समय से जयपुर दरबार में स्थायी कवि के रूप में नियुक्त हो गये। इनके काव्यत्त्व से प्रभावित होकर माधवसिंह प्रथम ने इन्हें मालपुरा परगने

---

१. श्री हनुवन्तसिंह देवड़ा, प्रोड्यूसर राजस्थानी विभाग, आकाशवाणी जोधपुर के पास उपलब्ध जीवा प्रणीत गीत की हस्तलिखित प्रतिलिपि से।

का बनड़िया ग्राम सम्मानस्वरूप भेंट किया था। जयपुर-नरेश माधवसिंह के निधन के बाद उनके पुत्र महाराजा प्रतापसिंह के साथ भी हुक्मीचन्द खिड़िया के सोहार्द्रपूर्ण सम्बन्ध रहे।

डिंगल गीत लेखन शृंखला में इनका शीर्षस्थ स्थान माना जाता है। अपने वीर गीतों द्वारा कवि ने सुप्त राष्ट्रीय चेतना को जाग्रत करने का अथक प्रयास किया। मध्यकाल के इस कवि के सम्मुख जनमानस अशान्ति, शोषण तथा अराजकता के चक्रव्यूह में कराह रहा था। प्रान्तीय शासकों और मराठों के बीच वैमनस्य की चिनगारियां, भीषण युद्धाग्नि का रूप धारण कर चुकी थीं। ऐसी विषम परिस्थितियों में अराजकता तथा अन्याय का प्रत्यक्षदर्शी गवाह बनकर जीते हुए, कवि का हृदय कराह उठा। अत: उनकी दृष्टि ऐसे शूरवीरों को तलाशने लगी जो भयग्रस्त मानवता को न्याय के पथ पर बढ़ा सके। अमानवीय शक्तियों का प्रतिकार करने वाले प्रत्येक व्यक्ति का कवि ने अपने गीतों में यश-वर्णन किया है। हुक्मीचन्द के गीतों में लोक-रक्षण तथा सामाजिक नवनिर्माण की भावनाओं का समन्वित रूप दिखाई देता है। अपने गीतों द्वारा हुक्मीचन्द ने शूरवीरों को कर्तव्य-निर्वाह हेतु प्रेरित किया।

सद्कर्म की प्रशंसा और दुष्कर्म की निन्दा हुक्मीचन्द के व्यक्तित्व एवं कृतित्व की सर्वाधिक श्लाघ्य विशेषता है। अपने इसी गुण के कारण उन्होंने निन्दित कर्म करने वाले प्रत्येक व्यक्ति को धिक्कारा है, भले ही वह कितना ही शक्तिशाली अधिपति क्यों न हो। डिंगल गीतों में अधिकांशत: वीररस की धारा का अक्षुण्ण प्रवाह दिखाई देता है। जैसा कि पहले लिखा जा चुका है डिंगल साहित्य में वीररस की प्रधानता, साहित्यकारों की प्रशस्तिपरक भावना की नहीं वरन् तत्कालीन वातावरण एव परिस्थितियों की परिचायक है। संकट और युद्धाग्नि में झुलस रही मानवता को जीवित रखने के लिये शृंगारी काव्य की नहीं, ऐसे तेजस्वी काव्य की अपेक्षा की जाती है जो सांत्वना के साथ-साथ आपदाओं के सम्मुख लोह-स्तम्भ बनने की प्रेरणा भी दे सके। डिंगल साहित्यकारों के साहित्य में शक्ति की उपासना और वीररस की प्रधानता तत्कालीन परिस्थितियों के सर्वथा अनुकूल ही है।

हुक्मीचन्द के वीर गीतों में वातावरण और तत्कालीन परिस्थितियों में सम्पन्न युद्धों को चित्रोपम काव्य के रूप में परिवर्तित कर देने की अद्भुत क्षमता है। सिर्फ एक या दो गीतों में ही नहीं बल्कि अपने समस्त वीर-गीतों में कवि ने तत्कालीन परिस्थितियों में घटित ऐतिहासिक घटनाओं का ऐसा अनूठा चित्रण किया है कि श्रोता अथवा पाठक अपने आप को वर्णित घटना-चक्र के मध्य खड़े पाता है।

अपने चरित्र नायकों के अपूर्व-शौर्य का चित्रांकन करते समय कवि ने रामायण और महाभारत आदि पौराणिक ग्रन्थों में वर्णित श्रेष्ठ शूरवीरों की उपमाओं का चयन किया है। वीररस का प्रणेता होने के साथ-साथ कवि ज्योतिष शास्त्र, शकुन शास्त्र, तन्त्र-मन्त्र और अध्यात्म विद्या में भी पारंगत था। इन्हीं विशेषताओं के कारण हुक्मीचन्द के गीत देश और काल की सीमाओं को लांघकर अमरत्वपान के अधिकारी बन सके। डिंगल काव्य के इस महान् गीतकार की मान्यता सर्वमान्य रही है, इसीलिए समय-समय पर अन्य कवियों ने हुक्मीचन्द के गीतों की सराहना की है —

सरूप कवित्त, नरहरि छप्पय, सूरजमल के छंद।
गहरी झमक गणेस री, रूपक हुक्मीचंद ॥

डिंगल काव्य-मर्मज्ञों ने कवि हुक्मीचन्द के वीर गीतों को गरुड़ शावक सदृश बतलाते हुए लिखा है —

खड़िये रा आखर खरा, रूपक राड़ि रीत।
हुक्मीचंद रा हालिया, गुरड़ बचां जिम गीत ॥

डिंगल काव्य शास्त्र में १२० प्रकार के गीतों का उल्लेख मिलता है। हुक्मीचंद ने अपने गीतों में न्यूनाधिक रूप से भाव अभिव्यक्तिकरण की इन गीत-विधाओं को अपनाकर अपनी काव्य मर्मज्ञता एवं काव्य शास्त्रीय निपुर्णता का प्रमाण प्रस्तुत किया है। राजस्थानी गीत आलोचकों के मतानुसार हुक्मीचन्द सदृश गीतों का चितेरा कवि आज तक उत्पन्न नहीं हुआ —

गीत गीत हुक्मीचंद कहगो, हमैं गीतड़ी गावो।

हुक्मीचन्द के परवर्ती कवियों में महादान मेहड़ की गणना भी श्रेष्ठ कवियों में होती है। महादान के गीतों में भी वातावरण तथा दृश्य को मूर्तिमान कर देने की अपूर्व क्षमता विद्यमान है परन्तु कवि-समाज में दोनों कवियों में हुक्मीचन्द को श्रेष्ठ मानते हुए कहा गया है —

हेरवा गीत हुक्मीचन्द कहिया फेरवां गीत महादान फेरे।

कल्पना के प्रश्रय बिना प्रभावशाली काव्य का प्रणयन नहीं किया जा सकता। हुक्मीचन्द के गीत भी इस सत्य का अपवाद नहीं है। कल्पना का आश्रय, कवि ने लिया अवश्य है परन्तु ऐसा करते समय मनमाने ढंग ऐतिहासिक घटनाओं, सामाजिक मान्यताओं तथा सांस्कृतिक विधानों को मस्तिष्क से ओझल नहीं किया है। विविध गीत विधाओं के साथ-साथ अलंकारों के सुन्दर प्रयोग से भाषा-सौन्दर्य आकर्षक बन गया है।

युद्ध-क्षेत्र, युद्ध में काम आने वाले अस्त्र-शस्त्र, अश्व-गज, सेना की साज-सज्जा, आक्रमण-प्रत्याक्रमण इत्यादि का बड़ा ही सुन्दर, सजीव और सटीक अलंकारिक वर्णन हमें हुक्मीचन्द के गीतों में मिलता है। युद्धादि घटनाओं का चित्रण करते समय अपनी मौलिक सूझबूझ के साथ कवि ने संस्कृत के महाकवि कालिदास, बाणभट्ट इत्यादि विद्वानों की वर्णन-पद्धतियों को भी जहां-तहां अपनाया है। हुक्मीचन्द के गीतों की यह सबसे बड़ी विशेषता रही है कि उनके गीतरूपी शब्द-चित्र केवल घटना-मात्र को चित्रित न कर, सम्पूर्ण वातावरण को साकार बना देते हैं। युद्ध वर्णन सम्बन्धी गीत सुनकर कायर से कायर व्यक्ति की भुजाएं फड़कने लगती हैं,रक्त में ऊफान आने लगता है, हृदय का शौर्यत्व स्वतः जाग उठता है। एक कवि की काव्य साधना का सबसे बड़ा पुरस्कार यही तो है।

सम्पूर्ण जन समाज में लोकप्रिय होने के साथ-साथ प्रवुद्ध साहित्य समाज में भी लोकप्रिय होना किसी भी साहित्यकार की सबसे बड़ी सफलता होती है। अपने गीतों में हुक्मीचन्द ने मानव जीवन के सभी सुप्त-असुप्त पक्षों पर समुचित प्रकाश डाला है। उनके गीतों में सिर्फ आश्रयदाता का प्रशस्ति-वर्णन ही नहीं मिलता वरन् साधारण से साधारण व्यक्ति के यश-गौरव एवं मायड़-भौम के प्रति असीम प्रेम को भी उन्होंने अपने गीतों में चित्रित किया है। हुक्मीचन्द की गीत-लेखन-कला को आलोचकों ने भांति-भांति से सराहा है। कवि के देहावसान ने काव्य जगत् में एक ऐसा स्थान रिक्त कर दिया जिसकी पूर्ति आज भी असम्भव बनी हुई है। कवि के निधन के समाचार से शोक-सन्तप्त कवि फतहसिंह बारहठ रचित एक शोकगीत उपलब्ध हुआ है जिसमें समसामयिक चारण कवियों का स्मरण करते हुए हुक्मीचन्द खिड़िया की विशेषताओं का विवरण दिया गया है। उदाहरणार्थ गीत यहां प्रस्तुत किया जा रहा है—

सागर सिद्ध कवेसर हुकमो, नृपत महेस हरो बुधवान।
चार पदारथ आछा चारण, उरा लिया पाछा भगवान ॥१॥
कवियो संत खड़ियो मेहडू कवि, गिणता भादो वरण सिंगार।
दूखी रतन अनमोल दीधा, किसैं गुनह लीधा करतार ॥२॥
आँ विन वरण रहगियो ऊणौं, जिण विध सुवप विहूणों जीव।
पातां प्रीत करैं तैं पोस्या, देयर कोस्या भला दईव ॥३॥
आसंग धरम रोड़ता जद अे, हुव नृप नरम जोड़ा हाथ।
हरि अब वरण मसकरयां हिलसी, पूर्ण महीं झिळसी कवि पात ॥४॥

हुक्मीचन्द ने वर्ण्य-विषय को सजीव-साकार बना कर प्रस्तुत किया

है। उदाहरण के लिये महारावळ पृथ्वीसिंह बांसवाड़ा और मरहटा सेना में हुए प्रलयंकारी युद्ध का कितना चित्रोपम-विवरण प्रस्तुत किया है —

छोलां ऊपटे रतंगां जाणै पतंगा फुहारा छूटै,
तारा गैण मगां तूटै उमंगां ग्रसींग ।
तेग धारा तणां के ग्रभंगां माथे भारा तूटै,
सतारा सेन सूं जंगां जूटै प्रथी सींग ।।१।।
सलककै नगीस थंभा भूगोल भमावळेस,
चौल रंभा ग्रोढके ऊंतावळेस चीर ।
बागां कांवळेस जांगी जोधा ग्रांवळेस वागा,
बांवळेस हूंत खागां रावळेस वीर ।।२।।
लोहाला गनीमां सूं तांणे मूंछां डांणे लागो,
केवाणे ऊवाणे ऊवाणे वागो वोयो भीमक्रोध ।
ग्रांमळे राकसां पांणे हणुमान लंक ऊभो,
जांभळे भारथां जांणे गुड़ाकेस जोध ।।३।।
महाप्रळ काळ रुद्र मच्छ ज्यूं मचोलै मही,
नोखंगी ग्ररिन्द्रा वाळे तोले सिंघ नीर ।
धू गजां छजोले तोले ग्रासमान धंकी धारा,
हैजम्मा विरोळे वंको दूसरो हमीर ।।४।।[1]

राजस्थानी मध्यकालीन वीरगीत परम्परा में हुक्मीचन्द ने [illegible] और वन्दनीय स्थान बनाया है। कवि ने एक ही विषय तथा प्रसंग पर एक से अधिक गीत लिखे। इन गीतों में पारस्परिक भाव-साम्य अवश्य है, परन्तु शाब्दिक पुनरावृत्ति का एक भी उदाहरण नहीं मिलता। कवि के असीमित ज्ञानकोष रूपी घन से होने वाली शाब्दिक-वर्षा से शौर्य-गीत रूपी वातावरण की सृष्टि प्रत्येक पाठक अथवा श्रोता के हृदय को झकझोर देने वाली है। 'वसुधा वीरां री वधू, वीर तिका ही वींद' अर्थात् राजस्थान की लोकसंस्कृति में भूमि को वीर भोग्या कहा गया है। स्वाभिमानी योद्धा की उपस्थिति में कोई शत्रु भूमि हथियाने का दुष्प्रयास करे यह असम्भव है। हुक्मीचन्द ने यहां के सपूतों के धरती प्रेम को जितने प्रकार

१. राजस्थानी साहित्य सम्पदा- श्री सौभाग्यसिंह शेखावत, पृ० ५५-५६.

शाली ढंग से अभिव्यक्त किया है, देखिए —

खाटी वखतेस भूप भोम जिका पांण खागा, खागा पांण जकी भोम दाटी जैतखंभ ।
घावां घांण घेतलानू वाजतां विरोधी घाटी, अजा दूजा वीर पाटी साझतां असंभ ।।
धमस वाजि नाळां गरद चढ़ावै धोमसा, अरक विंव सोम सा नजर आवै ।
वीर नित चखावे खगां श्रोणित वसा, जसा ज्या सूं रसा केमि जावै ।।

शरणागत की रक्षा राजपूत का कर्तव्य माना गया है । शरण में आए शरणागत को बचाने के लिए क्षत्रिय हजार जन्म लेकर अपने प्राणों को न्यौछावर कर देने को तत्पर रहता है । निम्नलिखित पंक्तियों में कवि ने क्षत्रियों की शरणागत रक्षा-प्रवृत्ति का कितना भावप्रवण शब्दांकन किया है—

किलम उतराध दिखणाद दल क्रोधतां, छत्रधरण रोधता मांण छीजा ।
कहर खूनी सबळ साल राखै कवण, वीर तो विन रायसाल बीजा ।।

राजस्थान की लोक संस्कृति में स्वामिभक्ति के उदाहरण विपुल परिमाण में मिलते हैं । यहां के नर-नारियों ने जिसका नमक खाया उसके साथ कभी विश्वासघात नहीं किया । स्वामिभक्ति के समक्ष यहां के वीरों ने अपने जीवन को तुच्छ माना है —

जूझ मत्ते आहंसी किसोर वाळे तीन जाम,
रूकां भीमनाद कीन दळां सूरो राण ।
इला जोधाणेसवाळी नूं थपे जालमो ऊभो,
जालमो पाड़ियां पछै ऊथपे जोधाण ।।

राघवदास झाला देलवाड़ा की तलवार में कितनी अद्भुत शक्ति है, कवि द्वारा वर्णित गीत देखिए —

ज्वाला जेठ री जेहड़ी जंगी वीज मेघमाला, जाणे,
भीम भाला केहड़ी कराळ नेणभास ।
चंड धू वेहड़ी कनां उडंडा त्रसूल चंडी,
वीर राघोदास हाथां श्रेहड़ी वाणास ।।१।।
फूंका सेस तायवाळी पत्रै प्रलैकार फूटी,
वारधीस लायवाळी तूटी झाळवेग ।
जंभीरोस रूप जाग आदीत रसम्मा जाणे,

तूझ करां जसारा अजागरुप तेग ॥२॥
तायणी भीमेणगदा गजेन्द्र गूडला तोड़,
पबै वज्र-तोड़ हळा नाकपती पांण ।
कळा दोज चंद मान सिंघ नळा वळा कीत,
किनां तो संग्राम वीजा भूवळा केवांण ॥३॥

जाजुळी कुठार राम रुठे भायजादां जांणे,
अरां सीस खायजादा जंगी भाक ऊक ।
हिंदूपति चायजादा साले सायजादां हिये,
राघौ रायजादा वाली तायजादा रूक ॥४॥

सखाबीज ईस चंडी फूंक लाय जोत सोर,
वज्र हला कला कांत फरस्सी वूंवार ।
खलां धू तोड़वा खेत खाग तो खांपहूं खूंटे,
हेके साथ छूटे जांणे हवाई हजार ॥५॥

खेतड़ी के राजा भोपालसिंह किशनसिंहोत विशालहृदय, दानवीर और उदार प्रकृति के व्यक्ति थे। उनके द्वार पर आने वाला अतिथि कभी खाली हाथ नहीं लौटा। अपने पिता के समान भोपालसिंह भी कवियों का आदर सम्मान करने में सदैव अग्रणी रहते थे। जन जीवन में अत्यन्त लोकप्रिय भोपालसिंह की विशालहृदयता एवं गुणग्राहकता से सम्बन्धित हुकमीचन्द का एक गीत द्रष्टव्य है —

सिंधां अपारां नागेसहारां पारावरां खीर सिंध,
धीर तेज धारां धाम उधारां धूपाळ ।
तारकी आकासचारां मोड़ ज्यूं राकेस तारां,
भूगोल दातारां सारां सेखाणी भूपाळ ॥१॥

जटी जोग पारावरां धावा सुभ्रजटी जाणे,
गैणवटी तावां ऊंच सुभावां गोवंद ।
चिलार पुलिन्द्र धावां चन्द्र ज्यूं नखत्रां चावां,
नरांलोक दावां रूप किसन्नेस नंद ॥२॥

ईस धरती रा धाम नीरां तातरंमा ओप,
सूर तेजगीरां संत भीरां दैत साल ।

धखी पंख खगां सुधा सीरा ज्यूं मुनेन्द्र धीरां,
महा आसतीक वीरां दूजो रायमाल ॥३॥
चन्द्र भाल पै उजाल वरस्साल तेज चंड,
गोपाल नागेन्द्र भाळ सुधागंज गेर ।
प्रथीपाल पंचमेक दातार ज्यूं उजाळ प्रथी,
सोहियो भूपाळ माळा दातारां सुमेर ॥४॥

हुक्मीचन्द के गीतों का मूल्यांकन करते समय असमंजसपूर्ण स्थितियों में गुज़रना पड़ता है क्योंकि उनके सभी गीत 'एक से बढ़कर एक' कहावत को चरितार्थ करने वाले हैं। हुक्मीचन्द के समस्त डिंगल गीत सर्वश्रेष्ठ गीतों की अग्रिम पंक्ति में रखे जाने के अधिकारी हैं। युद्ध की सजीवता की हूबहू झलक प्रस्तुत करने वाले एक गीत की कुछ पंक्तियां देखिए —

चोचट्टां घूमट्टां सुभट्टां व्है लट्टां चट्टां, आछट्टां विकट्टां भट्टां पाछटा केवांण ।
खेंगां ओरभे गेथट्टां में उलट्टां पलट्टां खेले, डोहे जट्टाजूट घट्टा छूट्टा भट्टां डांण ॥

वीरगीतों का चित्रात्मक वर्णन करने वाले प्रतिभाशाली कवियों में हुक्मीचन्द को सर्वश्रेष्ठ कवि माना जाता है। प्रकार और परिमाण दोनों ही दृष्टियों से उनके गीत अन्य गीतकारों के गीतों से बहुत आगे हैं। राजस्थानी साहित्य में जब भी डिंगल-गीतों का प्रसंग छिड़ता है, कवि हुक्मीचन्द का नाम अनायास होठों पर आ जाता है। कवि की लोकप्रियता का यह सबसे बड़ा प्रमाण है।

किशोरदास—

अठारहवीं शताब्दी में उच्चकोटि का डिंगल काव्य रचने वाले प्रतिभासम्पन्न कवियों में किशोरदास का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। ये राव जाति के तथा मेवाड़ के महाराणा राजसिंह के राज्याश्रित कवि थे। वि० सं० १७१६ में इन्होंने राजप्रकास नामक ग्रन्थ का प्रणयन किया जिसमें महाराणा राजसिंह के प्रशस्तिपरक कार्यकलापों का प्रभावशाली विवरण संकलित है। कवि की भाषा-शैली का चित्रोपम उदाहरण देखिए—

कवि बनि कीय करतार वार राजसी विराजै।
सर गिरवर संचरी छत्रधारी कीत छाजै।
चंद दुडीद नरींद तेज सीतल अवतारी।
सतजुग त्रेता हूंत वार द्वापर हूं भारी।

अंक गिरह तेणि आईस अणी जांम न सातां जाणीयो।
राजसी रांण अविचळ रहो राव किसोर वखांणियो ।।[1]

अपने नाम और जाति का उल्लेख कवि ने राजप्रकास ग्रन्थ में यत्र-तत्र किया है —

राणो प्रतपै राजसी, धर गिर पाटउ धोर ।
राव प्रकासित नाम गहि, कहि कहि राव किसोर ।।
जको राजसी जांणी अै, जाळिम साळिम जोर ।
गिरबांण वळि भाव गिणि, कहियो राव किसोर ।।[2]

१३२ छन्दों में निर्मित राजप्रकास ग्रन्थ को डिंगल साहित्य का उत्कृष्ट साहित्यिक ग्रन्थ माना जाता है। ग्रन्थ के आरम्भ में महाराणा राजसिंह के पूर्वजों का संक्षिप्त यशोगान करते हुए कवि ने अपने चरित्रनायक के पराक्रम का दोहा, कवित्त, मोतीदाम इत्यादि विविध छन्दों तथा विषयानुकूल शब्दावली में वर्णन किया है। विविध प्रकार के छन्दों के प्रयोग का उल्लेख करते हुए किशोरदास ने लिखा है —

वाखांणे वाखांण छंद चन्द्रकळा प्रमाणे ।
छंद दोइ पाधरी धरी तुक कही वखांणे ।
प्रथम छंद तुक च्यारि अनै सैदोय्य भणीजे ।
दुती छंद षट् साठि गहर सो जुगति गंणीजे ।
वणि च्यारि तुक छंदह वणे, रसणा अहि अहिरिव रचै ।
अन सार किसोर उचार करि, वेद भेद पींगल वचै ।।[3]
बारा नैं चाळीस छंद कवि और उचारो।
तीस दोय वळि दोय नग त्रोटक निहारो ।
राजि छंद नाराज दोय तुक कही कहीजै ।
द्रिगपाल दस गुंणे सुणे सुख सुवंण लीजै ।
चवसठि वीस हजार तुक, तेव्य चौथाई छंद लही ।

१. श्री सौभाग्यसिंह शेखावत के पास उपलब्ध राजप्रकास ग्रन्थ की हस्तलिखित प्रति, छन्द संख्या-१३२.
२. वही, छन्द संख्या ११७.
३. राजप्रकास ग्रन्थ की हस्तलिखित प्रति, छन्द संख्या १२०.

दीवांण तणां गुण दाखतां, कवि अखिर अखिर कहौ ।।[1]
कवि अखिर अखिर कहौ, गिंणिया छंद गिणाव ।
अढाईसै अखीय्या वळि, ईक वीस वणाव ।।[2]

महाराणा राजसिंह के शासनकाल में चारों ओर सुख-समृद्धि विद्यमान थी। कवि ने अपने आश्रयदाता के शासन की प्रशंसा में लिखा है—

गति जुगति अखिजे चित सरसती चढ़ाऐ ।
राज करै राजसी ईळा खड़ि वोय्यंण आऐ ।
जाति भांति जाणवो ततो परमांण वखाणौ ।
राण तणै दरवार सार मिळिय्यौ हिंदवांणौ ।
गह मह गईंद नौवति गुड़ै सूर नूर चढ़ी साजसी ।
जगपति तणों छत्रपति जगि राण विराजे राजसी ।।[3]

राजसिंह अपने नाम के अनुरूप स्वाभिमानी, योद्धा और शत्रुओं के मान का मर्दन करने वाला है। पौराणिक आख्यानों से महाराणा राजसिंह के शौर्यत्व का सम्बन्ध जोड़ते हुए कवि ने लिखा है—

वप अप धरीय्यो परम जगि जांणि उधारै ।
जगपति हंदा राजसी भुज तिंणि ही भारै ।
गाजी गंजि गवाड़िया विरदां विसतारै ।
माळक वींदां संग्रहे हंमाळ हकारै ।
इंद नरींद क राजसी हैंमर असवारै ।
किरि लंक जीते रामचंद घर अवधी पधारै ।
कुंदणपुर जीते किसन साम्हा जादू सारै ।
ऐम उदैपुर हूंत मधि नर नारि निहारै ।
हट पटंण सिणगारजै, चौहट चौवारै ।
जर वाफी नीळ कजरी तांसां जरतारै ।
विलंद अयासां भांकती अवला उणिहारै ।

---

१. राजप्रकास ग्रन्थ की हस्तलिखित प्रति, छन्द संख्या १२४.
२. वही, छन्द संख्या १२५.
३. राजप्रकास कृति की हस्तलिखित प्रति, छन्द संख्या – ६१.

वीज चमंकी वद्दलै किरि जाँगि ग्रंधारै ।
ग्राही सौंगस उपजे कळसां ग्रधिकारै ।
मंन वंधित सारी मही भर माळ भंडारै ।
ग्राय्य विराजै राजसी वणता दरवारै ॥[1]

हिन्दूशिरोमणि महाराणा राजसिंह का यश-वैभव चारों दिशाओं को महकाने वाले सुरभित पुष्प के समान है। राजसिंह की प्रसिद्धि चन्द्र-ज्योत्स्ना के समान प्रतिपल वढ़ने वाली तथा लोगों को शीतलता प्रदान करने वाली है। महाराणा का व्यक्तित्त्व ग्रद्भुत शोभा वाले कमल पुष्प के समान है जो ग्रपना शीश उठाए हर परिस्थिति का सामना करता है। ग्रपने चरित्रनायक की वंश पराम्परागत विशेषताग्रों का शब्दांकन करते हुए कवि किशोरदास ने लिखा है—

क्रामती रती कमळ, विमळ राह विसतार ।
धनि हिंदू हिंदवांण धनि, कवि धनि किय्य करतार ॥[2]
कवि धनि किय्य करतार, वार राजसो विराजै ।
सर गिरवर संचरी छत्र धारी कीत छाजै ।
चंद दुनींद नरींद तेज सीतळ ग्रवतारी ।
सतजुग त्रेता हूंत वार द्वापर हू भारी ।
ग्रंक गिरह तेणि ग्राईस ग्रंणी, जांमन सातां जाणीय्यौ ।
राजसी रांण ग्रविचळ रहो, राव किसोर वखाणीय्यौ ॥[3]

राजप्रकास ग्रन्थ की भाषा ग्रत्यन्त सरल, सहज एवं प्रभावशाली है। कवि ने विषयानुकूल शब्दों का चयन कर, ग्रपनी कवित्व गुणसम्पन्नता का परिचय प्रस्तुत किया है। विविध प्रकार के छन्दों के प्रयोग एवं वयण सगाई के सुष्ठु प्रयोग ने काव्य-सौन्दर्य में चार चांद लगा दिये हैं। इस काव्य-रचना के ग्रतिरिक्त कवि किशोरदास रात्र प्रणीत गीत भी उपलब्ध होते हैं। इन गीतों में मेवाड़ के शासकों की कीर्तिगाथाएं वर्णित हैं।

हमीरदान—

मध्यकालीन राजस्थानी साहित्य में ग्रपनी विशिष्ट एवं महत्त्वपूर्ण

१, राजप्रकास, छन्द संख्या ६८.
२. वही, छन्द संख्या १३१.
३. वही छन्द संख्या १३२.

रचनाओं द्वारा प्रसिद्धि प्राप्त करने वाले कवियों में हमीरदान का विशेष स्थान है। ये रतनू शाखा के चारण और जोधपुर राज्यान्तर्गत् घड़ोई ग्राम के निवासी थे।[1] कवि ने अपनी प्रारम्भिक शिक्षा, कच्छ-भुज में ग्रहण की थी। कालान्तर मे इन्होंने कच्छ-भुज के राणा महाराव देशलजी प्रथम (१७१७-१७५१ ई०) के महाराजकुमार लखपत के आश्रय में काव्य-सृजन किया।[2] अपने आश्रयदाता और स्वयं के सम्बन्ध में लिखी कवि की ये पंक्तियाँ इस कथन को सिद्ध करती है—

मुरधर देस सिवाना नगर मध्य, उतन घड़ोई प्रसिद्ध अमीर।
चारण 'रतनू' कवियण चावौ, हरि रौ चाकर नांम 'हमीर'॥
जाडेचा सूरज राव जळवट, भुज भूपत लखपत कुल भांण।
त्रिय ग्रन्थ कीध अजाची तिण रै, जोतिरिव पिंगळ नांम स्रब जांण॥

कवि ने सुप्रसिद्ध डिंगल कोष 'हमीर नांममाला' ग्रंथ की रचना वि० सं० १७७४ में की थी। अतः उनका काव्य-सृजन काल इस कालावधि के आसपास ही माना जाना चाहिए। हमीरदान रतनू द्वारा रचित डिंगल की अनेक महत्त्वपूर्ण साहित्यिक रचनाएं उपलब्ध हुई हैं जिनमें से प्रमुख इस प्रकार हैं—

१. लखपत पिंगल
२. पिंगल प्रकास
३. हमीर नांममाला
४. जदवंस वंसावली
५. देसमल जी री वचनिका
६. जोतिस जड़ाव
७. ब्रह्माण्ड पुराण
८. भागवत दरपण
९. चाणक्य नीति
१०. भरथरी सतक
११. महाभारत रौ अनुवाद[3]

लखपत पिंगल कवि की सर्वोपयोगी रचना है। डिंगल के इस छन्द शास्त्र ग्रन्थ का रचनाकाल वि० सं० १७९६ है—

संवत सत्तर छिनुओ पुंणा तस पटंतर।
तिथि उत्तिम सातिम्भ वार उत्तिम गुरु वासर॥

---

१. राजस्थानी सबद कोस (प्रथम खण्ड) भूमिका- सम्पादक श्री सीताराम लाळस, पृ० १५६.
२. चारण साहित्य का इतिहास - डॉ० मोहनलाल जिज्ञासु, पृ० २५५.
३. राजस्थानी सबद कोस (प्रथम खण्ड) भूमिका- श्री सीताराम लाळस पृ. १५८.

माहमास व्रतमान अरक बैठो उतराईणि ।
सुकल पष्य रिति सिसिर महा सुभजोग सिरोमणि ॥
विसतार गाह मात्रा वरण सुजि पसाउ सरसत्ती री ।
कहियौ हमीर चित्त चौजि करि पिंगल गुण लखपति री ॥[1]

लखपत पिंगल कृति में ४ प्रकरण और ४६९ छन्द हैं। कवि ने इस ग्रन्थ में छन्दों, मात्रिक छन्दों तथा गाहा छन्द आदि के विविध भेदों तथा गीत–प्रकारों का सोदाहरण विवरण प्रस्तुत किया है। पहले छन्द का लक्षण तदुपरान्त उसका उदाहरण दिया गया है जिसमें महाराजकुमार लखपत की प्रशंसा की गई है । उदाहरण देखिए—

महादेव सुत करि महर, गणपति सुमति गंभीर ।
कुंअर वखाणां कुलतिलक, धजबन्धी लखधीर ॥१॥
अति उत्तिम दीजै उकति, सरसति हूं सुप्रसन्न ।
गाआं लखपति गुंणे, महिपती वड़ मन ॥२॥
किया छंद पिंगल कवि, के हजार लख कोड़ि ।
आखां हूं तिण ऊपरै, जाति अमोलिक जोडि ॥३॥[2]

देसल जी री वचनिका कवि की ऐतिहासिक काव्यकृति है जिसमें कच्छ के महाराव तथा सरबुलन्दखां के मध्य संवत् १७८५ होलिका के समय हुए भीषण युद्ध का विवरण संकलित है । इस ऐतिहासिक संग्राम में महाराव देशल की विजय हुई थी। भाषा-प्रवाह, शब्द-चयन तथा काव्यत्व की दृष्टि से यह एक महत्वपूर्ण रचना है।[3] काव्य की कुछ पंक्तियां उदाहरणार्थ प्रस्तुत हैं जिनके द्वारा भाषा की चित्रात्मकता का अवलोकन किया जा सकता है —

झळाझळ कूंत खिवै अदभूत, धीळै दिन वेढ करै अविभूत ।
हुए असुरांण घणां खळ हांण, सांमी दस नांम रचै घमसांण ॥
ळथोबथ लोह झपेट लपेट, खसै दळ मूंगळ भाखळ पेट ।
नागा करिवा वर खाग निनाग, कटै धड़ पेहड़ पग्ग परग्ग ॥

---

१. राजस्थानी भाषा और साहित्य - डॉ० मोतीलाल मेनारिया, पृ० २५५
२. श्री हनुवन्तसिंह देवड़ा, प्रोड्यूसर, राजस्थानी विभाग, आकाशवाणी जोधपुर के पास उपलब्ध लखपत पिंगल कृति की हस्तलिखित प्रति से ।
३. शोध पत्रिका वर्ष २६, अंक २ में लेखक का 'राजस्थानी चारण साहित्य की ऐतिहासिक काव्य-कृतियां' विषयक निबन्ध, पृ० ५६.

भूधरदास —

प्रसिद्ध चारण कवि भूधरदास पाल्हावत, राव त्रिलोक चन्द के राज्याश्रित कवि थे। अपनी कृति 'सेखावतां राजावतां री वार' में कवि ने अमरसर राज्य के शासक शेखावत राव मनोहरदास तथा आमेर के राजा मानसिंह प्रथम के मध्य धौळी नामक स्थान पर लड़े गये भीषण युद्ध का रोचक एवं ऐतिहासिक विवरण प्रस्तुत किया है। काव्यकृति में वर्णित घटनाओं के अनुसार आमेर-नरेश मानसिंह द्वारा शेखावत मनोहरदास के अधीनस्त ग्रामों पर बलात् अधिकार के कारण धौळी युद्ध हुआ था।[1]

राव मनोहरदास और राजा मानसिंह दोनों ही कछवाह-कुल के समसामयिक शासक तथा अकबरी-दरबार के सम्मानित सेनानायकों में से थे। आमेर के राजा उदयकरण के ज्येष्ठ पुत्र राजा नृसिंहदेव की सन्तानों में राजा मानसिंह दसवें वंशधर थे और राव मनोहरदास उदयकरण के तृतीय पुत्र राव बाला की वंशपरम्परा में सातवें शासक थे। इस प्रकार से मानसिंह और मनोहरदास, कछवाह कुल के समसामयिक शासक थे।[2] अपनी रचना में कवि ने राव मनोहरदास को धौळी युद्ध का विजेता बतलाया है। मनोहरदास के सेनानायकों एवं योद्धाओं का कवि ने अत्यन्त सजीव चित्रण किया है। राव मनोहरदास का निधन बादशाह जहांगीर के शासन-काल में होना इतिहास-सम्मत माना गया है।[3] राव मनोहर दास के देहावसान के बाद क्रमशः पृथ्वीचन्द, रायचन्द और तिलोक चन्द उत्तराधिकारी हुए। राव तिलोक चन्द ने कवि भूधरदास और उसके भाईयों को चार गांव पुरस्कार स्वरुप प्रदान किये थे—

'रायचंद' महांराध को, पाट तिलोकचंद पाय।
दानी कर्ण दगजतै, कळि में फेर कहाय॥
'सांवळ बारहठ' च्यारि सुत, अरु गांव चौ अप्पि।
सौलै सै बाणव समय, थिर भूमि जम थप्पि॥[4]

---

१. कछवाहों की ख्यात तथा इतिहास ग्रन्थों में इस युद्ध का कोई विवरण नहीं मिलता.
Geneological Table of Kachhawhas by Harnath Singh Dundlod. P. 3-4.
२. रायसलजस सरोज रामदयाल कविया कृत द्वितीय कलिका, हस्तलिखित प्रति, पृ० ५५.
३. मुगल दरबार-प्रथम भाग, अनु० ब्रजरत्नदास, पृ० ३७८.
४. रायसलजस सरोज रामदयाल कविया कृत द्वितीय कलिका, हस्तलिखित प्रति से.

कवि वांकीदास की ख्यात में भी इस प्रकार का विवरण मिलता है— 'सेखावत मनोहरपुर रै राव पालाअत वार गिरधरदास नै गोविन्दपुरो दियो, भूधरदास नै हणुतियो दियो, केसवदासजो नु किसनपुरो दियो, बनमालीदास जी नू कल्याणपुरी दियो।'[1]

इन ऐतिहासिक विवरणों के आधार पर भूधरदास को निर्विवाद: का राज्याश्रित कवि मानते हुए उनका रचना-काल विक्रम संवत् १६६६ के लगभग ठहरता है। कवि भूधरदास रचित 'राजावतां सेखावतां री वार' निःसन्देह प्रामाणिक एवं ऐतिहासिक काव्यकृति है। कृति की कुछ पंक्तियां द्रष्टव्य है—

दव्वे कांकड मानसाह सीम रहै न अप्पण।
हत्थुं दरपण भाळियो क्या करै दरप्पण।
रव्व सजोग परठीया नर घोड़ा खप्पण।
लोभ धरत्ती मानसाह भूला भाई पण॥
दीया मनोहर मान कूं विहठाळा ढावा।
राजा राज न लग्गियों पर वेध निरावा॥
कुंण संधै कुंण नीकळ भरि पूठो पावा।
चंगि होइ न मान साह घर कंग निरावा॥
गल्हा मान न मन्निया यो रज भूम अनव्वी।
मूझै नाळ न रोड़ियं होय दावा दध्धि॥
गल्ह मनोहर अख्खिया मन धरी न संका।
भौमि न छोडै अप्पणी हाव राजा रंका॥
'धोळी' अर 'आंवेर' विच दहसिर की लंका।
ज्यूं तू मान महीप में मनोहर बंका॥[2]

इस काव्य-रचना का समापन करते हुए कवि ने लिखा है—

मति प्रमांणे अप्पणी गुण गावै 'भूधर'।
कांकड़ धोळी वीर खेत तुझ आगळि ऊपर।
भग्गा वेड़ी अग ज्यूं नाग जिन्हीं कूपर।

1. वांकीदास री ख्यात-सम्पादक पण्डित नरोत्तम स्वामी, पृ० [illegible]
2. राजस्थानी साहित्य सम्पदा – श्री सौभाग्यसिंह शेखावत, पृ० [illegible]

राह चलदी भाईयां कै लुझ्झै भाई ।
मांणूं साढ तिहत्थियां मदा दुनियाई ।
सुख सूता राजावतां क्या मति उपाई ।
कयूं सेखावत रोडीयै करि धाई धाई ।।
जिणि मुक्ख परां ऊठा जे तकै पराई ।
पड़े न गल्हां कूड़ीया हारे अन्याई ।।[1]

इस प्रकार से कहा जा सकता है कि भूधरदास भी अपने समय के लोकप्रिय और विद्वान कवि थे ।

नरहरिदास सांवळौत —

चारण सांवल वारहठ के पुत्र नरहरिदास भी डिंगल के अच्छे कवि थे । नाम-साम्य तथा काल-साम्य के कारण अनेक विद्वानों ने नरहरिदास वारहठ लक्खावत और नरहरिदास वारहठ सांवळौत, दोनों कवियों को एक ही वतलाकर, इनकी रचनाओं को मिलाकर उद्धरित किया है, जबकि ये दोनों स्वतन्त्र कवि थे ।

नरहरिदास सांवलौत के जीवन वृत्त पर प्रकाश डालने वाली सामग्री के अभाव में कवि द्वारा निर्मित रचनाओं की घटनाओं के आधार पर उनके रचनाकाल का निर्धारण किया जाता है । सीकर के राव शिवसिंह शेखावत के ज्येष्ठ राजकुमार समर्थसिंह पर रचित 'गुण भाखड़ी' गीत के आधार पर कवि का सृजन काल संवत् १७८० से १८२० के मध्य ठहरता है । इस गीत में आठ दोहों में कवि ने राव समर्थसिंह के अद्भुत-पराक्रम का सजीव चित्रण किया है ।

स्फुट छंदों के अतिरिक्त नरहरिदास ने १०९ छन्दों में 'गुण रामावतार' शीर्षक से नीसांणी काव्य-रचना का भी प्रणयन किया था । इस रचना में कवि ने भगवान श्रीराम के जन्म, विवाह, सीताहरण के फलस्वरूप रावण से लड़े गये युद्ध तथा राजतिलक आदि की घटनाओं का आकर्षक वर्णन कर, अपनी भक्ति-भावना का प्रकाशन किया है । नीसांणी का अन्तिम छन्द देखिए-

आई स अव्या आरती पर दुक्ख पहारै ।
सैण सहौवर सुखीयां सुख रैनि सिया रै ।

---

१. राजस्थानी साहित्य सम्पदा – श्री सौभाग्यसिंह शेखावत, पृ० १०४.

इण विध रांमण जीति राम आ अवध पधारे।
हुवा स मंगळां अगळां रुध इंद्रा वारे ॥१०८॥[1]

माधवदास बारहठ—

चारणों की बारहठ शाखा में उत्पन्न कवि माधवदास भी राजस्थानी के अच्छे कवि थे। इनके जन्म, पिता, आश्रयदाता तथा काव्य-प्रणयन काल-सम्बन्धी प्रमाणपुष्ठ जानकारी अबतक उपलब्ध नहीं हुई है। माधवदास बारहठ रचित लघु काव्यकृति 'अक्षर बावनी' की वि० सं० १७८० में लिखित एक प्रति प्राप्त हुई है जिसके आधार पर कवि का रचनाकाल वि० सं० १७८० से पूर्व निर्धारित होता है।

३ दोहों, ३१ त्रिभंगी छन्दों और १ छप्पय में निर्मित इस कृति में कवि की भक्ति-भावना का प्रकाशन हुआ है। विष्णु के विविध अवतारों द्वारा भक्तों को मोक्ष-प्रदान करने की घटनाओं का विवरण देते हुए, भक्त-कवि ने परमेश्वर से अपने उद्धार की विनती की है। कवि की काव्य-प्रतिभा तथा भक्ति-भावना के साक्ष्य में 'अक्षर बावनी' में से कुछ उदाहरण प्रस्तुत किए जा रहे हैं—

चउद लोक में नामचरित, तव जाणे कुण तास।
हरनामी गुण हुकम सूं, दाखै माधवदास ॥
ब्रह्मा विसन महेस मंह, सुरनर अंदर सेस।
नाम विरुद तो पार नंह, आद पुरस आदेस ॥[2]

राघव रणछोड़ राम रघुनन्दण रास रचण राधा रमंण।
रुघपत रुघनाथ रचण राधावर रुखमण वर रासह रमंण ॥
रेणायर वधण रूप रांमण वह राजीव लोचण रघ करणं।
मन देख अगम कुण पूजण 'माधव' जिय नाम अनाहद नारिघणं ॥[3]

नारायण अनहद चउद महि लोक चितायण।
कहो तह भे रुकमण नाम कुण लहे निरंजन ॥

---

१. श्री हनुवन्तसिंह देवड़ा के पास उपलब्ध 'गुण रामायनार' प्रति से.
२. कविराव मोहन सिंह, उदयपुर के पास स्थित अक्षर बावनी की हस्तलिखित प्रति, दोहा क्रमांक २. ३.
३. वही, छन्द त्रिभंगी, क्रमांक २५.

अजामेल नारायण पूत नामे फळ पायो ।
गोतो 'माधव' नाम नाम ओळे हूं आयो ।।
अग्यान समद विच डूबते कमण बांह झाले कहो ।
पावन पतीत ब्रद पाय हूं, तण विचार मो तार हो ।।

अनोपराम–

ये कविया शाखा के चारण और सूरजप्रकास तथा विरद सिणगार ग्रन्थों के रचयिता महाकवि कर्णीदान कविया के पुत्र थे । कवि अनोपराम के लिखे हुए फुटकर गीत मिलते हैं जिनमें कवि ने अत्यन्त प्रभावोत्पादक शब्दों द्वारा वर्ण्य-विषय के महत्व को और अधिक वढ़ा कर प्रस्तुत किया है । भाषा सरल, अलंकरण-प्रधान एवं वीर रसात्मक है । शाहपुरा के राजा उम्मेदसिंह सिसोदिया के वीरत्व-गुणों का उल्लेख करते हुए कवि ने लिखा है—

वायधिक अधिक दूजौ गजण वाजतां, हूता दुहवै तरफ पाण हमरांह ।
मेर गिर चळ-विचळ थयौ जेंसधि महि, गुरड़ भाराथ रै ढकै गजगाह ।।
अनिल वळ चहूं वहतां प्रबल अजावत, सिखर नूं उपड़ै गजधजा सामेत ।
गिरन्द कछवाह होतां कदम चळत गत, खगिन्द्र दूजै दले ढांकिया खेत ।।[१]

करणीदान वारहठ—

ये रोहड़िया वारहठ शाखा के चारण थे । इनका जन्म १६८३ ई० के आसपास हुआ था । इनके पिता केसरीसिंह मारवाड़ राज्य के रूपावास ग्राम के निवासी थे । करणीदान ने अपनी प्रारम्भिक शिक्षा पिता के संरक्षण में ही प्राप्त की थी ।[२] करणीदान और उनके भाई गोरखदान के आपसी सम्वन्ध सौहार्दपूर्ण नहीं थे । उधर जोधपुर के महाराजा अभयसिंह तथा वखतसिंह के पारस्परिक सम्वन्ध भी वैमनस्य की दरार से विगड़ते जा रहे थे । गोरखनाथ के अभयसिंह का आश्रित वनने पर, करणीदान ने वखतसिंह का आश्रय स्वीकार किया । महाराजा अभयसिंह तथा वखतसिंह की सम्मिलित सेनाओं के साथ गुजरात के सूवेदार सरवुलन्दखां से हुए

१. श्री नारायणसिंह भाटी 'नानण' के संग्रह में उपलब्ध हस्तलिखित प्रति से ।

२. चारण साहित्य का इतिहास –डॉ० मोहनलाल जिज्ञासु पृ० २३२–२३३.

अहमदाबाद के युद्ध में भी ये अपने आश्रयदाता के साथ थे। युद्धोपरान्त करणीदान की सेवा से प्रसन्न होकर बखतसिंह ने रामसिया ग्राम इन्हें पुरस्कार स्वरूप प्रदान किया था। १७५१ ई० में बखतसिंह के शासनारूढ़ होने पर कवि को एक लाख का मुंदियाड़ ठिकाना दिया गया था। तत्कालीन सम्मानों में यह सबसे बड़ा सम्मान था। कवित्व प्रतिभा की तुलना में करणीदान में राजनीतिज्ञ-प्रतिभा अधिक थी: मरहठाकालीन राजस्थान की राजनीति में करणीदान के प्रयत्नों के संकेत मिलते हैं।

राजस्थानी के मूर्धन्य साहित्यकार, समालोचक और इतिहासविद् श्री सौभाग्यसिंह शेखावत ने राजस्थानी निबन्ध संग्रह में करणीदान द्वारा लिखे हुए एक पत्र का उदाहरण दिया है[1] जिसे उन्होंने जयपुर के महाराजा माधवसिंह प्रथम को संवत् १८०२ कार्तिक वदि २ में लिखा था। पत्र में महाराजा ईश्वरीसिंह कच्छवाह जयपुर को हटाकर उनके स्थान पर उनके अनुज महाराजा माधवसिंह को जयपुर का अधिपति बनाये जाने के प्रयत्नों का विवरण निहित है। पत्र की प्रतिलिपि की पंक्तियां देखिए—

स्वस्ति श्री ओपमा सुभ राजत : छत्रधर विरद सुबर वर छाजत :
मन मोहन पद अंबुज मधुकर : अंबरीख सम भक्ति अनन्तर :
गुन मनि वैरागर थिर सागर : कूल कूरम के कलस कला कर :
आचं राज आज्ञ ही भुजबल उनत : सरब उपमा सुचति हंस गुन :

महाराजाधिराज श्री श्री श्री श्री श्री माधोसिंह जी चिरंजीवी कोटि बरस सुभ चिंतक बारहठ करणीदान री अरज मुजरो मालुम हुवै। ....

बखतसिंह ने एक बार करणीदान को मेवाड़ के महाराणा जगतसिंह के पास भेजा। मेवाड़ में कवि का भव्य सत्कार किया गया तथा विदा होते समय मेवाड़ के महाराणा ने उत्तम घोड़ा प्रदान किया। उच्चकोटि के अश्व की भेंट के प्रत्युत्तर में कवि ने निम्न दोहा सुनाकर अपना आभार व्यक्त किया —

जगत सिंघ हय देन है, तकी कहै तो कौन।
आत जात द्वै बेर मैं, चिटी मिलै न पौन ॥

शेखावाटी में स्थित खोरा ग्राम के ठाकुर जैतसिंह ने भी यथोचित सम्मान द्वारा करणीदान को सम्मानित किया था। कवि की फुटकर रचनाएं उपलब्ध होती है।

---

१. राजस्थानी निबन्ध संग्रह- श्री सौभाग्यसिंह शेखावत, पृ० १६८-१६९.

गोपीनाथ—

गाडरण शाखा के चारण कवि गोपीनाथ बीकानेर राज्य में स्थित सड़ ग्राम के निवासी थे। बीकानेर-नरेश गजसिंह के वीरोचित गुणों तथा उदारता से प्रभावित होकर ग्रन्थराजा गजसिंह का पराक्रमपूर्ण विवरण होने के कारण ग्रन्थराज कृति का सृजन किया था। महाराजा गजसिंह का पराक्रमपूर्ण विवरण होने के कारण ग्रंथराज कृति को गजसिंह रूपक के नाम से भी सम्बोधित किया जाता है। महाराजा गजसिंह ने गोपीनाथ गाडण को काव्य-प्रतिभा पर प्रसन्न होकर उन्हें लाख पसाव तथा गेरसर नामक ग्राम देकर सम्मानित किया था। कवि का रचनाकाल वि. सं. १७६५ के आसपास माना जाता है। अपने चरित्र-नायक के अतुल शौर्य का वर्णन करते हुए कवि ने लिखा है—

जैतसी भंजि कंमरौ जड़ागि, धूधहर राइ लागे धियागि।
मालदे तरणो भंजियो मारण, कलियारण पांण झले केवाण॥

इनके काव्य की भाषा सरस और वीररस प्रधान है।

अनोपसिंह —

ये रतनरासौ ग्रन्थ के रचयिता कवि कुम्भकरण के पुत्र और सांदू चारण शाखा के प्रसिद्ध स्थान भदोरा के निवासी थे। अनोपसिंह द्वारा प्रणीत कोई प्रबन्धकाव्य तो उपलब्ध नहीं होता परन्तु काव्य प्रतिभा के मूल्यांकन के लिये इनके द्वारा निर्मित गीत, निसांणियां तथा स्फुट छन्दादि ही पर्याप्त हैं। कवि अनोपसिंह गहन अध्ययेता, इतिहासविज्ञ और छन्द शास्त्र में अति निपुर्ण थे। इनकी रचनाओं के ऐतिहासिक विवेचन से विदित होता है कि ये खींवसर के ठाकुर हरनाथसिंह और उनके पुत्र उदयसिंह के आश्रित थे। हरनाथसिंह तथा उदयसिंह द्वारा लड़े गये सांभर और अहमदाबाद युद्धों का कवि ने अत्यन्त प्रभावशाली वर्णन किया है। चित्रात्मक और गूढ़ार्थ शैली के काव्य का सृजन मध्यकाल में बहुतायत से हुआ है परन्तु अनोपसिंह रचित एक निसांणी में कवि ने नवीन शैली का प्रयोग किया है। इस निसांणी में विद्वान कवि ने अन्य सात छन्दों का निर्माण इतनी चतुराई से किया है कि प्रत्येक छन्द में अलग-अलग भी उदयसिंह का यश वर्णन दिखाई देता है और सबको साथ पढ़ने पर भी यश-वर्णन की मनोमुग्धकारी झलक दिखाई देती है। शीर्षक में कवि ने 'गुण रतन गरभा निसांणी सांदू अनोपसिघ दलकरण कुंभकरणोतरी कही' और उसके बाद 'महि रूपक आठ नीसरै छै' लिखा है। रचना के हासिये के भाग में कवि ने सातों छन्दों के नाम और निसांणी के मध्य प्रत्येक पंक्ति में दो-दो शून्यो के निशान देकर छन्द-विभाजन

किया है । इस कृति में कवि ने उदयसिंह के पूर्वज राव जोधा, कर्मसिंह, पंचायण, महेशदास, हरिसिंह, दयालदास, भीमसिंह तथा हरनाथसिंह आदि का भी उल्लेख किया है । इन योद्धाओं के युद्ध वर्णनों की ऐतिहासिकता, समसामयिक कवियों और इतिहासकारों के विवरणों से भी सिद्ध होती है । इनमें से राठौड़ राव जोधा, राठौड़ राज्य तथा जोधपुर नगर की स्थापना के लिए इतिहास प्रसिद्ध रहे हैं । साथ ही अन्य योद्धाओं के नामों का उल्लेख भी जोधपुर राज्य की सेना द्वारा लड़े गये युद्ध-विवरणों में मिलता है । कर्मसिंह का नारनौल युद्ध, पंचायण का शेरशाह के विरुद्ध गिररी युद्ध, महेशदास का मेड़ता युद्ध, हरिदास का काबुल युद्ध, दयालदास, भीमसिंह और हरनाथसिंह का सांभर युद्ध और उदयसिंह का अहमदाबाद के सूबेदार सरबुलन्दखां से युद्ध इत्यादि इतिहास प्रसिद्ध घटनाएं हैं जिन्होंने इतिहास प्रवाह को नये मोड़ प्रदान किए ।

कवि अनोपसिंह ने उदयसिंह के यश-वैभव का अत्यन्त सुन्दर और प्रभावशाली चित्रांकन किया है । अपने आश्रयदाता के प्रशस्तियोग्य कार्यकलापों को जीवन्त बनाने के उद्देश्य से कवि ने निसांणी काव्य-परम्परा की अबतक चली आ रही परिपाटी में नवीनता लाने की दृष्टि से जो अद्भुत प्रयोग किए हैं, वे राजस्थानी काव्य के नवीन कीर्तिमान कहे जा सकते हैं । उपर्युक्त निसांणी से निकलने वाले सातों छन्द सोदाहरण यहां प्रस्तुत किए जा रहे हैं जिनसे कवि के काव्यचातुर्य एवं भाषा-शिल्प कौशल का अनुमान लगाया जा सके —

छन्द कवित्त छै

श्री सरसती करि प्रणांम, मांगू तत अखरी ।
कुल कमधजां चित्रण, वंस छत्तीसां ऊपरि ॥
सक जोधा अर करमसीह, प्रतपै पंचायण ।
मयणहरा दिन खगि मसंद, वड ब्रिद वंचायण ॥
भारथ पथ सौ भीम भड़, जुड़ण दियण न करण जलो ।
नरियंद प्रतपै नाथ चौ, ऐतां ओपम उदलो ॥१॥

छंद चंद्रायणो छै

वीरति कीरति व्यंद, अरियंदां ऊथपै । नरियंदां नरियंद, [illegible] ॥
आचारी आचार, वड़ां विरदांवणै । पौरिस पूठ अफेरि, [illegible] ॥

छंद दूहो छै

आच अभंग अजांन बाह, जाजुल जंग अजेर ।
मोड़ण मयंद महाबली, वीरति व्यंद जुधिठेर ॥३॥

छंद विराज छै

सामंत भड़ां सकाजि । वधि जुधि ओरण वाजि ।
विजड़ां मुहि अरि वोटि। लख थट करि सैलोट ।।
अरिथट भखण अचूक । भिड़ि गज करण सभूक ।
विधि वीररस वांनैंत । जुधि धै चण्डी जैत ।।४।।

छंद गाथा छै

सिध तेरा ही सखां, वेहृद पौरिसि वीर रस ।
लड़ि भांजण अरि लखां, झपटे ऊदल अरिथंडां ।।५।।

छंद त्रोटक छै

वधि आंकण वारां घड़ बण धारां । घुरियंद सिरारां छति धारां ।।
दणियर दातारां आथि भ्रतारां । पौरसि पारां जालिम जोधारां ।।
जूह विडारां सत्रहर सारां संघारां । भांजण गज भारां दियण हजारां ।।
अणसंग सुकारा उदारां ।।६।।

छंद गाहा छै

तरां अविचल पारिजात, आभि जमी जेते अचल ।
ब्रहमां विसन महेसवर, ऐते अविचल ऊदला ।।६।।[1]

इन रचनाओं के अतिरिक्त कवि अनोपसिंह के लिखे फुटकर गीत भी मिलते हैं । उदाहरण के लिए कवि द्वारा निर्मित एक गीत यहां प्रस्तुत किया जा रहा है जिसे कवि ने वि. सं. १७८१ में लिखा था । इस गीत से कवि का वि. सं. १७८१ तक वर्तमान होना सिद्ध होता है । इस गीत में जोधपुर के महाराजा अजीतसिंह के वध की घटना से क्षुब्ध होकर ठाकुर उदयसिंह के नागौर छोड़कर खींवसर चले जाने की घटना का वर्णन है—

कहर विरड़ियौ भीम किर संघारण कैरवा, समर अडियौ करां गदा साहे ।
ऊत्रड़े थंभ नरसिंघ जिम उरड़ियौ, मुरड़ियौ ऊदलौ चूक मांहे ।।१।।

व्रकोदर भयंकर वीर रूपी वणै, भुजा भर धम जगर तणौ भलियौ ।
दाढ़ नख धजर नरहर तिकर दरसियौ, वजर धरियां कमध वलियौ ।।२।।

कितां कण कण करण पवण तण कोपियौ, अरि घड़ा वरण पौरस अछायौ ।
हिरनकस्य भखण अरण चख हुतासण, नाथ री आंगमण किणी नायौ ।।३।।

---

१. श्री देवकरण वारहठ इन्दोकली के निजी संग्रह में उपलब्ध प्रति से.

खग खलां भीमहर भीम जिम खेड़ती, तिम दयत हेड़ती नंत नाग।
आवियौ कुसल अरि जाड़ ऊवेड़ती, मेड़ती सायदी करै माग ॥४॥[1]

नवीन डिंगल छन्द विधाओं का अपने काव्य में प्रयोग करने वाले कवियों में अनोपसिंह का सर्वोपरि स्थान माना जा सकता है। इनकी भाषा में सरलता के साथ प्रौढ़ता भी देखी जा सकती है। ऐतिहासिक घटनाओं को साहित्यिकता के रंगों में रंगने वाले कवियों में अनोपसिंह का प्रमुख स्थान है।

सौभाचन्द—

सौभाचन्द नामक कवि की अबतक उपलब्ध रचनाओं के आधार पर इनका रचनाकाल विक्रम संवत् १७८७ से १८०४ के मध्य ठहराया जा सकता है।[2] कवि ने अपने समय के जूझारों के शौर्यमय कार्यकलापों का अपने विविध गीतों में वीर-रसात्मक वर्णन किया है। उनने ठाकुर सुजानसिंह भाटी, रतनसिंह भंडारी, दीपचन्द गोकुलदासोत, दौलजी सिकदार, अमीदास सिकदार, ठाकुर भीमप्रतापसिंह मोहनदासोत, जोध सिदानी भमरी तथा दौलतराम व्यास जैसे समसामयिक असाधारण व्यक्तित्व वाले शूरमाओं को अपने गीतों में नायकत्व प्रदान किया है। पुरोहित कुल में उत्पन्न इस कवि का जोधपुर-निवासी होने का अनुमान लगाया जाता है।[3] कवि सौभाचन्द द्वारा प्रणीत गीतों की प्रथम पंक्तियां इस प्रकार है—

(१) गीत सपखरो — ईढा आंटा अभा रा कामेती इळा उबारैड
(२) गीत सांणोर — असल डरा अै राक वेध काछरा उपना
(३) गीत सांणोर — सांची वात जगत सराहै
(४) गीत सांणोर — सुजस संसार दातार दाखै सको
(५) गीत सांणोर — सांवत सांवतां सिरदार सिघाळो
(६) गीत पंखाळो — सालम सिरदार उदार सिघाळो नाहर करता नामो
(७) गीत सांणोर — करै हाक वीराण दईवाण कोधी कहर
(८) गीत सांणोर — वाह अभसाह परधांन तो अैहवा
(९) गीत सावझड़ो — करग झाल केवांण तुरक्काण पर काछरा[4]

---

१. श्री सीताराम लाळस, जोधपुर के साहित्य संग्रह में उपलब्ध गीत की हस्तलिखित प्रति से.
२. पंडित वल्लभशंकरजी त्रिवेदी, पुजारी चामुण्डा मन्दिर जोधपुर किला से प्राप्त जानकारी के अनुसार.
३. श्री सूरजराजजी पुरोहित, जोधपुर के मतानुसार.
४. राजस्थानी साहित्य सम्पदा - श्री सौभाग्यसिंह शेखावत, पृ० ६१.

सोढ़ी नाथी—

कवयित्री सोढ़ी नाथी श्रीकृष्ण की अनन्य भक्त थी। डॉ० सावित्री सिन्हा और डॉ० रामकुमार वर्मा ने सोढ़ी नाथी की रचनाओं का उल्लेख मात्र किया है जबकि अठारहवीं शताब्दी के कृष्णभक्त कवि – कवयित्रियों में इनका अतिमहत्त्वपूर्ण स्थान रहा है। सोढ़ी नाथी अमरकोट के राणा चन्द्रसैन की पोती तथा राणा भोज की पुत्री और जैसलमेर के पदच्युत रावळ रामचन्द्र के पुत्र देरावर के महाराजा सुन्दरदास की धर्मपत्नी थी।[१] कवयित्रि सोढ़ी नाथी प्रणीत रचनाएं अनूप संस्कृत लाइब्रेरी, बीकानेर में संग्रहीत हैं —

१. बाल चरित्र सं. १७३१[२]
२. गूढ़ार्थ[३] सं. १७३१
३. भगवत्भाव चन्द्रायण सं. १७३०
४. साखी सं. १७३१
५. नाम लीला सं. १७३१
६. कंस लीला सं. १७३१[४]

बालचरित्र में भक्त कवयित्री ने ६२ दोहों–सोरठों में श्रीकृष्ण की बाल लीलाओं का हृदयग्राही चित्रण किया है। गुढ़ार्थ की दृष्टिकूट पदों की भांति ७४ दोहों–सोरठों में निर्मित दार्शनिक रचना है जिसमें भगवद्भक्ति के रहस्यों का विवेचन किया गया है। भगवत्भाव चन्द्रायण अपूर्ण अवस्था में प्राप्त कृति है। उपलब्ध छन्द काव्य की विशेषताओं से युक्त एवं कवयित्री की प्रतिभा पर प्रकाश डालने में सक्षम हैं। साखी में ३३८ साखियों में अनेक भक्तों का नामोल्लेख करते हुए, भक्ति–भावना का अभिव्यक्तिकरण किया गया है। नाम लीला ५३२ छन्दों में निर्मित कृति है। विविध साखी, परची, दूहा, चन्द्रायण तथा सोरठा इत्यादि छन्दों द्वारा परमात्मा के नाम–सुमरिन के महत्त्व का प्रतिपादन किया गया है। कंस लीला १०९ दोहों में निर्मित रचना है जिसमें कंस के अत्याचारों का विवरण देते हुए अन्ततः भगवान श्रीकृष्ण के हाथों उसका वध दिखाया गया है। सुमधुर राजस्थानी भाषा में लिखी इन रचनाओं में कृष्ण की भक्ति–भावना का

---

१. नैणसी की ख्यात, भाग–२, पृ० ३३६ और ३६०.
२. बाल चरित्र, वरदा वर्ष–४ अंक १ में बंधुत्रय द्वारा सम्पादित, प्रकाशित हो चुका है।
३. गूढ़ार्थ, हिन्दी विश्वभारती बीकानेर द्वारा बंधुत्रय के सम्पादन में प्रकाशित हो चुका है।
४. परम्परा के राजस्थानी साहित्य के मध्यकाल अंक में श्री दीनदयाल ओझा का मध्यकालीन राजस्थानी कवयित्रियां निबन्ध, पृ० २२३.

अत्यन्त प्रभावशाली वर्णन किया गया है। शान्तरस प्रधान इन रचनाओं में छन्द और शब्दों का भावानुकूल प्रयोग अत्यन्त हृदयग्राही बन पड़ा है।

कवयित्री सोढी नाथी भगवान श्रीकृष्ण की अनन्य उपासिका थी। रात-दिन श्रीकृष्ण की भक्ति-भावना में डूबे रहना ही उनकी दिनचर्या बन गई थी। सोढ़ी नाथी प्रणीत भक्ति रचनाएं, भाव एवं कलापक्ष की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। भक्तिकाव्य की समस्त विशेषताओं से अभिभूत रचनाओं के प्रणयन के कारण ही सोढ़ी नाथी को अठारहवीं शताब्दी की श्रेष्ठ भक्त-कवयित्री माना जाता है।

काकरेचीजी—

गुजरात के अन्तर्गत् काकरेची प्रदेश के ग्राम दियोधर के ठाकुर बाघेला अगराजी की पुत्री भी अठारहवीं शताब्दी की अच्छी कवयित्री थी। इनका विवाह सांचोर के सोनगरा चौहान, राव वल्लूजी के पुत्र नरहर दास के साथ हुआ था।[1] डॉ० सावित्री सिन्हा के मतानुसार इनका विवाह मारवाड़ प्रदेश के पश्चिम परगने केशीनगर के चौहान राव वल्लूजी के पुत्र नरहरिदास के साथ हुआ था। डॉ० सिन्हा का यह कथन ऐतिहासिक दृष्टि से असंगत और भ्रान्ति उत्पन्न करने वाला है।

कवयित्री की यद्यपि अधिक रचनाएं उपलब्ध नहीं होती परन्तु अबतक उनकी ज्ञात स्फुट रचनाओं से विदित होता है कि काव्य-रचना की ओर उनकी रुचि थी। स्व० मुन्शी देवी प्रसाद ने काकरेचीजी को बुद्धिमान और कविता में रुचि रखने वाली अच्छी कवयित्री माना है।

शाहजहां के शाहजादे से युद्ध करते समय कवयित्री के पति नरहरदास का देहावसान हो गया। नरहरदास की शक्ल से मिलते-जुलते एक नाई ने नरहरदास बनकर काकरेची जी को धोखा देने का षड़यन्त्र किया। भोले ठाकुर अगराजी ने नाई को नरहरदास मानकर उनके देहावसान की घटना को असत्य समझ काकरेची जी से पुनः वैधव्य वेष बदलने को कहा। काकरेची जी अत्यन्त चतुर और समझदार थी। उन्होंने नाई के छल को भांप लिया। पर्दे के पीछे से उन्होंने निम्नलिखित दोहा बोलकर नाई के छद्मवेष पर कटाक्ष करते हुए, वैधव्य वेष न बदलने के अपने दृढ़ निश्चय को अभिव्यक्त किया—

---

१. परम्परा के मध्यकालीन राजस्थानी साहित्य अंक में श्री दीनदयाल ओझा का मध्यकालीन कवयित्रियां विषयक निबन्ध, पृ० २०८.

धर काळी काकर धरा, अध क.ळा अगरेस ।
नरहर नेजां वाजिया, क्यों पलटाऊं वेस ।।

दो-दो पंक्तियों के इन दोहों में राजस्थान की कितनी ऐतिहासिक घटनाएं छुपी हुई है। ये दोहे, इतिहास के प्रतिरूप हैं। ऐसी ऐतिहासिक काव्य-रचनाओं का अन्वेषण अत्यन्त आवश्यक है ताकि इन अज्ञात, गौरवशाली घटनाओं से हम अपने भव्य-अतीत से साक्षात्कार कर सकें।

जोगीदास—

ये जाति के चारण तथा मेवाड़ के कुंवारिया ग्राम के निवासी थे और प्रतापगढ़ के महारावत हरिसिंह के आश्रित थे। कवि द्वारा संवत् १७२१ में लिखे गये 'हरि पिंगल प्रवन्ध' नामक उच्चकोटि के ग्रंथ का पता हाल ही में लगाया गया है। रचनाकाल से सम्बन्धित दोहा इस प्रकार है—

संवत् सतर इक्वीस में, कातिक सुभ पख चंद।
हरि पिंगल हरिअंद जस, वणियौ खीर समंद ।।

छन्द-शास्त्र के इस ग्रन्थ का डिंगल-साहित्य में महत्त्वपूर्ण स्थान है। ग्रन्थ तीन परिच्छेदों में विभक्त है। इनमें संस्कृत, हिन्दी और डिंगल में प्रयुक्त मुख्य-मुख्य छन्दों का लक्षण उदाहरण सहित वर्णन किया गया है। अन्तिम परिच्छेद में कवि ने अपने आश्रयदाता के वंश-गौरव और जीवन-चरित्र की विशेषताओं पर प्रकाश डाला है। साहित्य एवं इतिहास दोनों ही दृष्टियों से यह एक बहुत ही उत्तम कोटि का ग्रन्थ है।[1] कवि अपने आश्रय-दाता के प्रति आशीर्वादात्मक भाषा में कहता है। उदाहरण देखिए—

जां लगि रवि ससि अचळ, अचळ जां सेस धरत्ती।
जां वेळावळ अचळ, अचळ जां केल सकत्ती।
वंभ संभ जां अचळ, अचळ जां मेर गिरव्वर।
इन्द्र धूअ जां अचळ, अचळ जां भरण विसंभर।
चहुं वेद धरम्म जां लग अचळ, जाय व्यास वाणी विमळ।
'जसराज' नंद जग मध्य लै, हरिअसिंघ तां लग अचळ।[2]

---

१. राजस्थानी भाषा और साहित्य—डॉ० मोतीलाल मेनारिया, पृ० २१४.
२. राजस्थानी सबद कोस—प्रथम खण्ड—श्री सीताराम लाळस, पृ० १५३.

यचन्द्र यति—

जैसा कि पहले भी उल्लेख किया जा चुका है राजस्थानी साहित्य प्रणयन एवं संरक्षण में जैन धर्मावलम्बियों ने महत्वपूर्ण भूमिका अभिनीत ी है। उच्चकोटि के साहित्य सर्जन के साथ-साथ अन्य धर्म के साहित्य ी सुरक्षा, जैन विद्वानों की अन्य धर्मों के प्रति सहिष्णुता एवं सौहार्द ी भावना को प्रकट करती है। अन्य कालखण्डों के समान सत्रहवीं और ठारहवीं शताब्दी में भी जैन धर्म के विद्वानों द्वारा प्रणीत उच्चकोटि की चनाएं उपलब्ध होती हैं। इन रचनाओं में जैन विद्वानों के भ्रमणशील जीवन ारा प्राप्त प्रगाढ़ ज्ञान और अनुभवों का निचोड़ देखा जा सकता है।

जैन कवि जयचन्द्र ने, जो संभवतया ऐतिहासिक विवरण काव्य 'तरँगी' ा भी प्रणेता है 'माताजी री वचनिका' कृति का निर्माण किया। साहित्यिक ष्टि से अत्यन्त उपयोगी इस काव्यकृति में पौराणिक आख्यानों के आधार र भगवती जगदम्बा चरित्र-चित्रण प्रस्तुत किया गया है। 'माताजी री वचनिका' ा प्रणयन चारण शैली में किया गया है अतः इस कृति का उल्लेख ध्यकालीन चारण काव्य के अन्तर्गत् किया जा रहा है।

इस कृति का सृजन नागौर के कुचेरा नामक स्थान में वि. सं. १७७६ में किया गया था। कवि ने काव्यकृति एवं स्वयं के सम्बन्ध में लिखा है—

प्रहसम नित जै पढै कटै त्यां रौर अक्रमह।
वाचै नित करि वांण वंध वधै धरमह॥
गंगा गया प्रयाग भमैं किण कारण भुल्लां।
अड़सठि तीरथ सुफल लहै गुण पढत अचल्लां॥
मारकंड रिख वांणी रवस कही तेम जैचंद यहै।
भगवती भजन मोटी भगति, आखै संता क्रमहै॥

'माताजी री वचनिका' में जोधपुर के महाराजा अजीतसिंह के शासनकाल का भी उल्लेख मिलता है। वचनिका के सृजनकाल एवं महाराजा अजीतसिंह के शासन प्रबन्ध का विवरण देते हुए कवि ने लिखा है—

संवत सतर छिहंतरे आसू सुदि तिथ तीज।
मुरधर देस कुचोरपुर, रचं ग्रन्थ करि चीज॥
मांण दुजोयण भीमबळ, इळ किसना अवतार।
महाराज अगजीत सिंघ, राज तेण इधकार॥

गछ खरतर विधा गुहिर, अमर आनन्द निधान ।
सिख चत्रभुज जैचंद सरिख, किद्ध वचनिका ज्यान ।।
बुध अनुसार विचार वर, सार धार संसार ।
भुगति छेह लाभे मुगति, पढ़ियां बोह परिवार ।।

'माताजी री वचनिका' के आरम्भ में विद्वान कवि ने इस प्रकार की कृतियों की परिपाटी का अनुसरण करते हुए लिखा है कि वाल्मीकि, वशिष्ठ, जयदेव और मार्कण्डेय जैसे महान् विचारक, विद्वान और तपस्वी भी जिसकी महिमा को नहीं जान पाए ऐसी देवी के गुणगान का मैं असफल प्रयास कर रहा हूं । इस निवेदन के बाद कवि ने कालिका के विविध रूपों, चरित्रों और निवास स्थानों का विवरण देकर शुम्भ – निशुम्भ की कथा का वर्णन किया है ।

गद्य और पद्य में निबद्ध इस वचनिका में कवि ने देवी और राक्षसों के मध्य सम्पन्न लोमहर्षक युद्ध का अत्यन्त प्रभावशाली तथा सजीव चित्रांकन किया है । काव्य के अन्त में असत्य पर सत्य की, अन्याय पर न्याय की और अमानवीय वृत्तियों पर देवगुणों की विजय दिखलाई गई है । कवि द्वारा प्रस्तुत वर्णनों से स्पष्ट हो जाता है कि उन्हें राजस्थानी डिंगल वीर-काव्यों की पूरी जानकारी थी । अपने वर्णनों में कवि जयचन्द्र यति ने युद्ध के भयावह वातावरण को सजीव – साकार रूप में चित्रित किया है । भावों के अनुरूप शब्द और छन्दों के चयन ने काव्य को अत्यन्त सजीव बना दिया है । युद्ध–मंत्रणा, सैनाओं की साज–सज्जा, सैनाओं का युद्ध–क्षेत्र की ओर प्रयाण तथा युद्ध की वीभत्सता के वर्णनों को पढ़कर ऐसा लगता है मानो पाठक स्वयं समरांगण में उपस्थित हो । चण्ड और मुण्ड की चढ़ाई और युद्ध का वर्णन, नाराच छन्द में दृष्टव्य है —

चढ़ै प्रचण्ड चण्ड मुण्ड खंड खंड खूंदता ।
कसीस त्रीस टंक बांण झग झालि कूदता ।।
जळन्त आप रोस जे कठोर काजि काहलां ।
करंति देव मेछ कौटि डाकरे खळां डळां ।।
विहामणां अजांन वाह चूंच भूंच छाकिया ।
ओघाट रूप हेक भांति आप जौम पाकिया ।।
भखै सहूं भुजा लहूं वणै जवांन वाळवां ।
करंति देव मेछ कौटि डाकरे खळां डळां ।।